

72544
4/96



THE JAIMINIYA OR TALAVAKARA
UPANISHAD BRAHMANA.

DEVANAGARI TEXT WITH INDEXES.

PREPARED FROM THE EDITION, IN ROMAN SCRIPT

OF

SHRI HANNS OERTEL PH. D.

BY

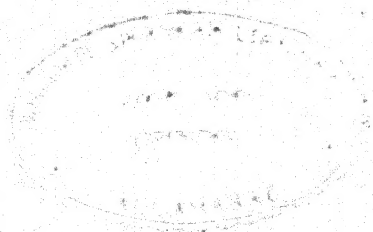
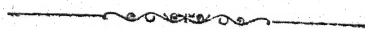
PANDIT RAMA DEVA, B. A.

WITH

AN INTRODUCTION ON THE HISTORY OF SAMAVEDA LITERATURE.

BY

BHAGAVAD DATTA.



FIRST EDITION,

1,000 Copies.

FEBRUARY 1921

VIDYASAGAR

Revised

Rs: 3/-

Price

6 Shillings.

ओ३म्

दयानन्द महाविद्यालय संस्कृत-ग्रन्थमाला ।

अनेक विद्वानों की सहायता से ।

भगवद्दत्त

संस्कृताध्यापक वा अध्यक्ष अनुसन्धान-विभाग

दयानन्द महाविद्यालय, लाहौर द्वारा

सम्पादित ।

ग्रन्थाङ्क ३ ।

श्रीमद्व्यानन्द महाविद्यालय संस्कृतग्रन्थमाला सं० ३

ओ३म्
जैमिनीय उपनिषद्ब्राह्मणम्

अथवा

तलवकार-उपनिषद्ब्राह्मणम् ।

पं० रामदेव बी० ए०

द्वारा

श्रीमान् हन्नस अर्टेल, पी० एच० डी०

महाशयस्य

रोमनलिपि-संस्करणात् देवनागर्याम् लिपिकृतम् ।

भगवद्भूत

संस्कृताध्यापक दयानन्दकालेज, लाहौर,

लिखितं

भूमिका-सहितम् ।

आख्यं सम्बत् १९६०८५३०२० ।

विक्रम सं० १९७७ ।

सन् १९२१ ई० ।

दयानन्दाब्द ३८ ।

प्रथमावृत्ति १००० प्रति

मूल्य २॥७ ६०

पं० भैरवप्रसाद के प्रबन्धसे विद्याप्रकाश प्रेस चण्डीमहल्ला लाहौर में छपा ।

Printed by Bhairo Prasada,
MANAGER, VIDYA PRAKASHA PRESS, LAHORE.
AND PUBLISHED BY
THE RESEARCH DEPARTMENT, D. A. V. COLLEGE, LAHORE.

The Publications of this series can also be had of—

1. ~~MESSRS.~~ LUZAC & Co.,
46 Great Russell Street,
London W. C.
2. Lala Moti Lal Banarsi Dass, The Punjab
Sanskrit Book Depot, Said Mittha Bazar, Lahore.
3. Lala Mehr Chand Lachhman Dass, Sanskrit
Booksellers, Said Mittha Bazar, Lahore.
4. Pt. Wazir Chand, Vedic Book Depot Mohan
Lal Road, Lahore.

॥ ओ३म् ॥

भूमिका ।

सामवेदीय वाङ्मय का इतिहास ।

परमात्मा से सावेद का प्रादुर्भाव ।

तस्माद्यज्ञात्सर्वहुत ऋचः सामानि जज्ञिरे ।

छन्दाँसि जज्ञिरे तस्माद्यजुस्तस्मादजायत ॥

ऋ० १०।६०।६॥यजुः ३१।७॥ तै० आ० ३।१।४॥

उस व्यापक सर्वपूज्य परब्रह्म से ऋग्वेद, सामवेद प्रादुर्भूत होते हैं। अथर्ववेद प्रसिद्ध होता है उस से, यजुर्वेद उस से प्रकट हुआ।

(पूर्वपक्ष) 'ऋचः' आदि पद बहुवचनान्त हैं, अतः इनका अर्थ ऋग्वेद आदि कैसे हुआ ? इनका अर्थ तो यही है कि ऋचापं, साममन्त्र और छन्द उत्पन्न हुए।

(उत्तरपक्ष) यह सत्य है, कि 'ऋचः, सामानि,' और 'छन्दाँसि' पद बहुवचनान्त हैं, पर साथ ही 'यजुः' पद एकवचन में भी है। यदि तुम्हारी बात मानी जावे तो 'यजुः' पद से तुम क्या अभिप्राय लोगे ?

(पूर्वपक्ष) 'यजुः' पद यहां जात्यर्थ में एकवचन होता हुआ भी यजुर्मन्त्रों का बोधक है, यजुर्वेद का नहीं।

(उत्तरपक्ष) यह बात यहां न घटेगी क्योंकि 'छन्दाँसि' पद पर पूर्ण विचार किसी और परिणाम पर ले जाता है। देखो ! 'छन्दाँसि' पद यहां किन्हीं मन्त्र-विशेषों का बोधक नहीं है। दयानन्द सरस्वती

ने इसी पर विचार करते हुए लिखा है—‘वेदानां गायत्र्यादिच्छन्दोऽन्वितत्वात्पुनश्छन्दाँसीतिपदं चतुर्थस्याथर्ववेदस्योत्पत्तिं ज्ञापयतीत्यवधेयम्।’ (ऋ० भाष्यभू० वेदोत्पत्तिवि०) अर्थात् ‘वेदों में सब मन्त्र गायत्र्यादि छन्दों से युक्त ही हैं, फिर (छन्दाँसि) इस पद के कहने से चौथा जो अथर्ववेद है उस की उत्पत्ति का प्रकाश होता है।’ अन्यथा ‘छन्दाँसि’ का यहां कोई प्रयोजन नहीं। इस अर्थ में अन्य प्रमाण भी देखो।

(१) “ऋचाम.....गायत्रं च्छन्दः।

यजुषां.....त्रैष्टुभं छन्दः।

साम्नाम.....जागतं च्छन्दः।

अथर्वणां.....सर्वाणि छन्दांसि।”

गो० ब्रा० १।१।२॥

वैदिक विचार में यह सुप्रसिद्ध है कि ऋग्वेद गायत्री छन्द सम्बन्धी है [यद्यपि यह अनुसन्धेय है कि ऋग्वेद में गायत्री(२४५०) की अपेक्षा त्रिष्टुप् (४२५३) क्यों अधिक है ?] यजुर्वेद त्रिष्टुप् छन्द सम्बन्धी और सामवेद जगती छन्द सम्बन्धी है। अब रहा अथर्ववेद, सो वह पूर्वोक्त गोपथब्राह्मण के प्रमाणानुसार सर्व-छन्द-सम्बन्धी है। उसका किसी एक छन्द से सम्बन्ध-विशेष नहीं। यही कारण है कि उपस्थित मन्त्र में ‘छन्दाँसि’ पद से अथर्ववेद का ग्रहण होता है।

(२) प्रस्तुत मन्त्र-सम्बन्धी एक अन्य बात भी ध्यान देने योग्य है। अथर्ववेद में यह मन्त्र निम्नलिखित प्रकार से आया है—

तस्माद्यज्ञात् सर्वहुत ऋचः सामानि जज्ञिरे।

छन्दो इ जज्ञिरे तस्माद् यजुस्तस्मादजायत ॥

अथर्व० १६।६।१३॥

यहाँ 'छन्दांसि' के स्थान में 'छन्दो ह' पाठ है। इस प्रकार पाठ में भेद कर देने से परमात्मा ने मन्त्रों द्वारा ही अन्य मन्त्रों का व्याख्यान कर दिया है। यह मन्त्र उन्नीसवें काण्ड का है, और यद्यपि पञ्चपटविका की भूमिका में लिखे अनुसार हम अभी तक इस काण्ड के सिहितान्तर्गत होने के विषय में कुछ नहीं कह सकते, फिर भी यह तो सब को स्वीकार करना पड़ेगा कि बहुवचनान्त 'छन्दांसि' पद का अर्थ एकवचन 'छन्द' अर्थात् (पूर्व प्रमाणों की दृष्टि से) अथर्ववेद ही है। रहा क्रियापद 'जज्ञिरे'। सो वह व्यत्यय ही समझना चाहिये; यद्यपि ऐसे व्यत्ययों के उदाहरण सम्प्रदाय वैदिक ग्रन्थों में अत्यल्प मिले हैं।

पूर्वोद्धृत अथर्ववेद के मन्त्रों से निश्चय होता है कि 'छन्दांसि' आदि पदों का अर्थ एक वचन में ही है। ऐसी अवस्था में यजुः पद भी यजुः मन्त्रों का जाति-वाचक न रहेगा। इस विषय में अन्य प्रमाण देखो—

(३) यस्माद्वचो अपातक्षन् यजुर्यस्मादपाक्षन् । सामानि यस्य लोमान्यथर्वाङ्गिरसो मुखं स्कम्भं तं ब्रूहि कतमः स्वदेवसः ॥

अथर्व १०।७।२०॥

इस प्रमाण में 'यजुः' पद एक वचन में है, और अथर्वाङ्गिरस स्पष्ट ही ब्रह्मवेद का द्योतक है। अतएव 'ऋचः' और 'सामानि' पदों का अर्थ भी ऋग्वेद और सामवेद ही होना चाहिये।

विचारान्तर्गत "तस्माद्यज्ञात्" ऋ० १०।६०।६ मन्त्र की व्याख्या में सत्यव्रत सामाश्रमी त्रयीपरिचय तथा निरुक्ताजोचन में लिखते हैं कि 'सामवेद छन्द और गान दो भागों वाला है। सो छन्द भाग का ग्रहण छन्दांसि पद से और गान भाग का ग्रहण सामानि पद से करना चाहिये।' इसका कुछ खण्डन तो हरिप्रसाद

जी ने वेदसर्वस्व के उपोद्घात पृ० १५ पर किया है। यद्यपि हम उनके विचार-क्रम से सहमत नहीं, तथापि उन के इस परिणाम के कि गान भाग तो मूलसंहिता का गेय-रूपान्तर ही है, अनुकूल सम्मति रखते हैं। इस गान भाग के लिये कहीं अन्यत्र मन्त्रों में 'सामानि' वा 'साम' पद प्रयुक्त हुआ होता तो सत्यव्रत जी का पक्ष कुछ ठहर सकता; पर ऐसा है नहीं, अतः उनका पक्ष निराधार होने से सम्मान योग्य नहीं।

सत्यव्रत जी के पक्ष को एक बात कुछ आश्रय दे सकती है, यद्यपि यह उन्होंने ने स्वयं नहीं लिखी। अथर्ववेदीय पिप्पलाद शास्त्रा में 'सामानि यस्य लोमानि' के स्थान में 'छन्दांसि यस्य लोमानि' पाठ आया है। ऐसी दशा में सत्यव्रत कह सकता था कि 'छन्दांसि' पद 'सामानि' का पर्यायवाची है, और सामवेद के छन्द भाग का द्योतक है। यह बात भी सत्य नहीं ठहरती क्योंकि 'सामानि' आदि पद जैसा आगे चल कर और भी विदित हो जायगा सामवेद वाचक हैं। वैसा कोई छन्द वेद है नहीं, और 'छन्द' पद अथर्ववेद वाची सिद्ध हो चुका है, अतः पिप्पलाद का पाठ जब तक कि उस शास्त्र के अन्य लिखित ग्रन्थ न मिलें (जो कि बहुत कम सम्भव है) अशुद्ध ही कहा जायगा।

विदेशीय (पारसीक) भाषा में छन्द का अर्थ।

भाषा-विज्ञानी जानते हैं कि छन्द शब्द ही पारसीक भाषा में ज़न्द बना है। यही ज़न्द पारसीकों का धर्मग्रन्थ है। इस में अथर्वन पुरोहितों का नाम भी कई बार आया है। हाग के मतानुसार तो इस में आया हुआ एक मन्त्र भी अथर्ववेद का प्रथम मन्त्र है। इस प्रकार प्रतीत होता है कि ज़न्द का अथर्ववेद से सम्बन्ध-विशेष है, अतएव छन्द शब्द का अर्थ पूर्वोक्त मन्त्र में अथर्ववेद ही युक्तियुक्त है। ऐसी दशा में 'सामानि' आदि शब्द भी सामवेद आदि के वाचक हैं।

ब्राह्मणग्रन्थों में सामानि पद का अर्थ ।

- (१) सामवेद आदित्यात् (ऐ० २५।७)
- (२) आदित्यात्सामानि (कौशी० ६।१०)
- (३) सूर्यात् सामवेदः (श० ११।५।८)
- (४) सामान्यादित्यात् (छा० उ० ४।१।७।२)
- (५) सामवेद आदित्यात् (जै० उ० ब्रा० ३।१५।७)
- (६) सामवेदोऽमुष्मात् (षड्विं० ४।१)
- (७) आदित्यात् सामवेदम् (गो० १।६)

इन सात प्रमाणों में से दूसरे और चौथे प्रमाण में 'सामानि' पद आया है, अन्य पांच प्रमाणों में सामवेद । ये ब्राह्मणवाक्य एक प्रकार से पूर्वोक्त वेद मन्त्रों की व्याख्या में ही कहे गये हैं । इन में अधिकांश स्थलों में सामवेद का प्रयोग बता रहा है कि प्राचीन ब्रह्मादि ऋषियों की दृष्टि में भी इन स्थलों में 'सामानि' पद से सामवेद का ही अभिप्राय होता था। अतएव "तस्माद्यज्ञात्" मन्त्र का इस लेख के आरम्भ में किया हुआ अर्थ ही सत्य है, और दूसरा नहीं । इस मन्त्र का यही अर्थ ऋषि दयानन्द सरस्वती ने अपने अनेक ग्रन्थों में किया है । हम ने तो उसी का उद्धरण मात्र दिया है ।

इस कल्पारम्भ में सामवेद सब से प्रथम किस को प्राप्त हुआ ?

पूर्वलेख से यह स्पष्ट होगया होगा कि सामवेदादि वेद इसी यज्ञ=स्कन्ध=परब्रह्म से प्राप्त हुए । यहां यह विवाद नहीं उठाया जायगा कि वेद-ज्ञान क्यों परमात्मा का है ? इसे किसी अन्य अवसर पर लेंगे । यहां अब यही निर्णय करना है कि इस कल्पारम्भ में सामवेद किसी एक व्यक्ति को परमात्मा से प्राप्त हुआ था अनेकों को ।

अनेकों को प्राप्त हुआ, ऐसा मानने वाले बहुत थोड़े हैं। उन के पक्ष में कोई प्रमाण भी नहीं है। जो यह मानते हैं कि सामवेद किसी एक व्यक्ति को परमात्मा से प्राप्त हुआ, वे दो भागों में विभक्त हो जाते हैं। एक भाग वालों का मत है कि सामवेद अग्नि के अधिष्ठाता देव को प्राप्त हुआ। उसी से मन्त्र-द्रष्टा ऋषियों को प्राप्त हुआ। दूसरे भाग वालों का मत है कि मनुष्य-देह-धारी अग्नि ऋषि को प्राप्त हुआ जो इस कल्पारम्भ में अमैथुनि सृष्टि का एक सभासद था। इस पर विचार—

(१) अग्नि आदि द्रव्यों का कोई चेतन जीव अधिष्ठाता है अर्थात् इनको स्व-शरीरवत् बनाये है, ऐसा वेद में कहीं नहीं आया। हां, अग्नि ईश्वरदेव का नाम तो सर्वत्र प्रसिद्ध है। इस का विशेष व्याख्यान भगवान् दयानन्द सरस्वती की ऋग्वेदादिभाष्य-भूमिका में मिल सकता है। इसी पक्ष के खण्डन में 'जड़अग्नि से ऋग्वेद का प्रकाश हुआ' इस का खण्डन हो जाता है। कारण कि जड़ को ज्ञान होना असम्भव है।

(२) दूसरे मत में भी एक भारी आपत्ति आती है। पूर्वोक्त ब्राह्मणग्रन्थों के सात प्रमाणों में सूर्यात्=आदित्यात्=अमुष्मात् पद आये हैं। इस पर—

(पूर्वपक्ष) यदि सूर्यादि मनुष्य देहधारियों के नाम होते तो उन के पर्याय आदित्य आदि और 'वायु' का पर्याय "योऽयं पवते" शत० ११।५।८। २ न आते। ब्राह्मणग्रन्थों में "अमुष्मात्" प्रयोग स्पष्ट इसी सूर्य के लिये आया है। और वायु यदि कोई मानव समाज का सदस्य था तो क्या वह "योऽयं पवते" अर्थात् "जो यह बहता है" ऐसा ही था? क्या मनुष्य भी पवन समान बहते हैं?

(उत्तर पक्ष) प्राचीन संस्कृत वाङ्मय के न जानने का ही कारण है कि ऐसे पूर्वपक्ष स्वड़े होते हैं। देखो महाभारत को—

(क) वहां कर्ण के समीप उस के पिता सूर्य का आनालिखा है। यह सूर्य कोई देवता न था, प्रत्युत मनुष्य देहधारी व्यक्ति ही था। उस के निम्नलिखित नाम महाभारत वनपर्व अध्याय ३०१ में आये हैं।

अभिप्रायमथो ज्ञात्वा महेन्द्रस्य विभावसुः ।

कुण्डलार्थे महाराज सूर्यः कर्णमुपागतः ॥६॥

स्वप्नान्ते निशि राजेन्द्र दर्शयामास रश्मिवान् ।

कृपया परयाऽऽविष्टः पुत्रस्नेहाच्च भारत ॥८॥

ब्राह्मणो वेदविद्रूत्वा सूर्यो योगद्विरूपवान् ॥९॥

अहं तात सहस्रांशुः सौहृदात्त्वां निर्दशये ॥२२॥

इस का संक्षिप्त अभिप्राय यह है कि योगसिद्धि-समन्वित सूर्य महात्मा ब्राह्मण वेष में रात्रि के अन्तिम प्रहर में कर्ण के जागने पर उसके समीप आया। उस सूर्य के यहां कई नाम आये हैं जो सूर्य शब्द के पर्याय हैं, यथा विभावसु=रश्मिवान्=सहस्रांशु। अब रामायण पर किञ्चित् ध्यान दो—

(ख) वाल्मीकिरामायण में वानर जाति का सुविख्यात वर्णन है। वहां भी मुनि वाल्मीकि वानर शब्द के अनेक पर्याय उस जाति के लिये प्रयोग में लाते हैं। ध्यान रहे कि मिथ्या-कथा युक्त विवरण को छोड़ कर वानर जाति मानवेतर जाति सिद्ध नहीं हो सकती। और सत्य तो यह है कि (क) और (ख) स्थलों में सूर्य और वानर के क्रमशः पर्याय-प्रयोग को देख कर ही मध्यम कालीन लोगों ने इन्हें देवता वा पशु मान लिया था। अन्त में ब्राह्मण ग्रन्थों के वाक्य-प्रयोग पर भी ध्यान देना चाहिये—

(ग) तैत्तिरीयब्राह्मण ३।१।८ में नचिकेता की कथा आई है। वहां उस का जिस ऋषि से प्रश्नोत्तर हुआ, उस का नाम मृत्यु ही कहा है। कठोपनिषद् में भी यही कथा बड़े विस्तार से आई है। वहां मूल ऐतिहासिक कथा के साथ २ कुछ अलङ्कार भाग मिश्रित करके औपनिषद्-भाव अधिक खोला गया है। पर सब से अधिक विचारणीय यह है कि यहां मृत्यु ऋषि के कई दूसरे भी नाम दिये गये हैं। ये सब नाम मृत्यु शब्द के पर्यायवाची हैं यथा “यम १।५ अन्तक १।२६”।

(घ) वेद के ऋषियों के तो कई ऐसे नाम सर्वानुक्रमणी में आये हैं जैसे “अग्निः पावकः” ऋ० १०।१४०॥ अग्निस्तपसः ऋ० १०।१४१॥ यहां विशेष्य विशेषण भाव से ये समानार्थक शब्द प्रयुक्त हुए हैं। इन पूर्वोक्त प्रमाणों से यही निश्चित होता है कि बहुत प्राचीन काल में व्यक्ति-विशेषों के नामों के यदि कोई पर्याय हों तो वे भी उसी के नाम के लिये प्रयुक्त हो जाते थे। और जैसे महाभारत में ‘सूर्य’ को ‘रश्मिवाक्’ आदि कहा है वैसे ही शतपथ ब्राह्मण में ‘वायु’ को ‘योऽयं पवते’ कह दिया गया है। अतएव ब्राह्मण आदि ग्रन्थों के पूर्वोक्त सात प्रमाणों में “आदित्य” मनुष्य देहधारी ऋषिदेव है, कोई जड़ वा जड़ सूर्य का अधिष्ठाता देव नहीं। इसी आदित्य=सूर्य=रवि के मन में इस कल्पारम्भ के समय सब से पहले परमात्मा ने सामवेद का प्रकाश किया। उसी ने ब्रह्मा आदि को पढ़ाया और फिर यह वेद सर्वत्र फैलता गया। षड्विंशब्राह्मण में जो “अमुष्मात्” प्रयोग आया है उस का यही अभिप्राय है कि मनुष्य शरीर में शिर स्थान आदित्य वा सूर्य सम्बन्धी है। सूर्य ऋषि को समाधिस्थ दशा में शिर की नाड़ियों में मन के जाने से इस वेद का ज्ञान होता था, अतः यह प्रयोग आया है।

सामवेद की शाखाएं ।

आर्यावर्त्त में सृष्टि के आरम्भ से लेकर दीर्घ कालपर्यन्त लौकिक और वैदिक भाषा का बहुत प्रचार रहा । उस समय वेदादि शास्त्र आज कल की अपेक्षा अल्पपरिश्रम से ही समझे जाते थे । तब प्रवचनकर्त्ता आचार्य वा ऋषि अपने शिष्यों के लाभार्थ कठिन वैदिक शब्दों के स्थान में अन्य सरल वैदिक शब्द प्रयुक्त करके अथवा कुछ २ व्याख्या करके पढ़ाया करते थे । उतने से ही शिष्य यथार्थ अभिप्राय समझ लेते थे । तब किन्हीं विस्तृत भाष्यों की आवश्यकता न थी । यही ऋषि-प्रवचन था जो पीछे शाखा आदि नाम से प्रसिद्ध हुआ । इसी प्रवचन के सम्बन्ध में भाष्यकार पतञ्जलि मुनि ने लिखा है—

“ न हि च्छन्दांसि क्रियन्ते । नित्यानि च्छन्दांसीति ।
यद्यप्यर्थो नित्यो या त्वसौ वर्णानुपूर्वी सानित्या । तद्देदाच्चैतद्भवति
काठकं कालापकं सौदकं पैप्पलादकमिति । ” ४।३।१०१॥

अर्थात् वेद तो क्या, साधारण ग्रन्थों के समान शाखाएं भी बनाई नहीं गईं । इनका शब्दार्थ नित्य है । हां, अर्थ के नित्य होते हुए भी वर्णानुपूर्वी अनित्य है । इसी के भेद से ऋषियों ने नित्य वेदार्थ खोला है । और इसी भेद से काठक आदि अनेक शाखाएं हुई हैं ।

(प्रश्न) मूल सामवेद जिस की आगे शाखाएं बनीं अब कहाँ है ? उस में ऋग्वेदीय ऋचाएं न होनी चाहियें । अब तो जितने ग्रन्थ सामवेद के नाम से मिलते हैं उन सब में ऋग् भाग सम्मिलित है ।

(उत्तर) मूल सामवेद था तो अवश्य क्योंकि बिना इस के साम-शाखाएं बनती कैसे, और प्रवचन किस का होता ? उसी मूल का वर्णन ऋग्वेदादि वेदों और ऐतरेय आदि ब्राह्मणों में आया है । वह मूल भी प्रतीत होता है, प्रवचन के बल से पीछे ऋषि-विशेष के नाम से प्रसिद्ध हो गया । ऋग्वेदीय ऋचाएं सामवेद में न थीं

और न हैं। हम यह कह सकते हैं कि ऋग्वेद और सामवेद के अनेक मन्त्र सदृश हैं। उन्हीं मन्त्रों का पारिभाषिक नाम 'ऋक्' भी है। कर्त्ता परमात्मा ने प्रयोजन-विशेष के लिए ये समान मन्त्र दो वेदों में रखे हैं। मिथ्या-इतिहास-प्रचारक जो लेखक हमारे इस कथन को नहीं मानते उन्हें हम ऋग्वेद का एक मन्त्र बताते हैं—

गायत्रेण प्रति मिमीते अर्कमर्केण साम त्रैष्टुभेन वाकम् ।

वाकेन वाकं द्विपदा चतुष्पदाक्षरेण मिमते सप्त वाणीः ॥

ऋ० १।१६४।२४॥

सुप्रसिद्ध एकसौ चौसठवें सूक्त का यह चौबीसवां मन्त्र है। उन पूर्वपक्षी लेखकों के मतानुसार प्रथम मण्डलीय होने से यद्यपि यह मन्त्र अत्यन्त पुराना नहीं, तथापि बहुत नया भी नहीं है। इस मन्त्र में भी स्पष्ट ही साम में ऋचाओं का होना जताया गया है। अर्थ इस का अतीव सरल है। पूर्व लिखा जा चुका है कि ऋग्वेद गायत्री छन्द प्रधान और यजुर्वेद त्रिष्टुप् छन्द प्रधान है। अर्क पद मन्त्र वा ऋचा का भी पर्यायवाची है। अतएव मन्त्रार्थ यह है—

गायत्री छन्द से अर्क=ऋचा=ऋग्वेद का (जगदीश्वर) प्रतिमान करता है। ऋचाओं से सामवेद का। त्रिष्टुप् छन्द से वाक=यजुर्वेद का। यजुः मन्त्रों से वाक=अथर्ववेद का। [जो ऐसी] सात छन्द युक्त वेद वाणी का मान करते हैं [वे कृतकृत्य होते हैं।] इस से पूर्वपक्षियों को भी मानना पड़ेगा कि ऋचाएं वा ऋग्वेदीय मन्त्रों जैसे मन्त्र बहुत पुराने काल से सामवेद में चले आते हैं। हम पूर्व बता चुके हैं कि आर्येतिहासानुसार सामवेद आरम्भ से ही संहितारूप में चला आ रहा है, अतः इस दृष्टि से जो सत्य ही है आदि सृष्टि से सामवेद में ऋचाएं चली आती हैं। जो व्यक्ति इन ऋचाओं को साम पाठ से पृथक् जानें, मानों, वह वैदिक वाङ्मय के इतिहास से अज्ञ है।

शाखा-विभाग ।

अब रहा शाखा-विभाग पर विचार । इस पर प्रकाश डालने वाला कोई अति प्राचीन ग्रन्थ हमारे पास विद्यमान नहीं । एक चरण-व्यूह ग्रन्थ ही रह गया है । यह विक्रम से पांच, छः सौ वर्ष पूर्व का ही प्रतीत होता है । इस में पाठभेद का बाहुल्य है । नीचे उसी की साक्षी उपस्थित की जाती है ।

चरणव्यूह की साक्षी ।

शौनकीय परिशिष्ट ।

सामवेदस्य किल सहस्रभेदा भवन्ति ।
एष्वनध्यायेष्वधीयानारते शतक्रतुवज्रे-
ष्वाभिहताः ।

शेषान्व्याख्यास्यामः । तत्र राणायनीया
नां सप्तभेदा भवन्ति । (१) राणाय-
नीयाः (२) शाट्यमुग्राः* (३) का-
ल्लोपा (४) महाकाल्लोपा (५) लाङ्ग-
खायनाः (६) शार्दूलाः (७) कौथु-
माश्चेति ।

महिदास-प्रदर्शित प्रकारान्तर ।

तत्र कौथुमानां षड्भेदा भवन्ति ।
(१) कौथुमाः । (२) आसुरायणाः
(३) वातायनाः (४) प्राञ्जलिद्वैन-
मृतः (५) प्राचीनयोग्याः (६)
मैगमीयाः ।

अथर्व-परिशिष्ट ।

तत्र सामवेदस्य शाखासहस्रमासीत् ।
अनध्यायेष्वधीयानाः सर्वे ते शक्रेण
विनिहतः [प्रविलीनाः] तत्र केचिदवा-
शिष्टाः प्रचरन्ति । तद्यथा ।

(१) राणायनीयाः (२) साद्य-
मुग्राः* (३) कालापाः (४) महा
कालापाः (५) कौथुमाः (६) लाङ्ग-
लिकाश्चेति ।

कौथुमानां षड्भेदा भवन्ति । तद्यथा ।
(१) सारायणीयाः (२) वातराय-
णीयाः (३) वैतथृताः (४) प्राचीनाः
(५) तेजसाः (६) अनिष्टकाश्चेति ।

* सात्यमुग्रा नाम अधिक युक्त है । महाभाष्य १।१।४॥

१।१।४८ ॥ पर ऐसा ही पाठ है ।

जहाँ सैकुड़ों साम-शाखाओं के नाम विलुप्त हो गये हैं वहाँ विद्यमान नामों में भी पाठ भेद के कारण एक बड़ा अन्तर पड़ गया है। पूर्वोक्त शाखा-नामों के पढ़ने से यह बात सुस्पष्ट हो जाती है। चरणव्यूह के टीकाकार महिदास ने निज व्याख्या में कुछ ग्रन्थ नाम भी दिये हैं। उन्हीं का पाठभेद स्वामी हरिप्रसाद जी के वेदरुचि के पृष्ठ १७२ पर मिलता है। पता नहीं उन्होंने ने स्व-बुद्धि से पाठ संशोधन किया है अथवा किसी लिखित ग्रन्थ के आधार पर ये नाम दिये हैं। तथापि हम उनके पाठभेदों को कोष्ठों में रख कर महिदास के पाठ जो संवत् १८५१ के काशी-संस्करण में छपे हैं, नीचे देते हैं।

(१) आसुरायणीया (२) वासुरायणीया (३) वार्त्तान्तेरिया [वार्त्तान्तेरियाः] (४) प्राञ्जल [प्राञ्जलाः] (५) ऋग्वैनविधाः [ऋग्वर्ण-भेदाः] (६) प्राचीनयोग्याः [७ ज्ञानयोग्याः] (७) राणायनीयाश्चेति। तत्र राणायनीयानां नव भेदा भवन्ति। (१) राणायनीयाः (२) शाख्यायनीयाः (३) शाख्यमुद्राः [सात्वलाः] (४) खल्वलाः (५) महाखल्वलाः (६) लाङ्गलाः (७) कौथुमाः (८) गौतमाः (९) जैमिनीयाश्चेति।

पतञ्जलि मुनि कहते हैं “सहस्रवर्त्मा सामवेदः” (महाभाष्य कीलहार्न सं० भाग १, पृ० ९) अर्थात् ‘सहस्र शाखा वाला साम वेद है।’ उन्हीं सहस्र शाखाओं में से कुच्छेक का उल्लेख पूर्वोद्धृत चरणव्यूह के पाठों में है। चरणव्यूह के शाखा-नाश-इतिहास में तथ्य की किस अल्पमात्रा का होना सम्भव है। तदनुसार वर्षा वा किसी विद्युत्-प्रकीर्ण वाले दिन किसी सामशाखीय अध्यापक ने अपनी शाखा का पाठ किया होगा। वह इन्द्र=सूर्य के वज्र=तड़ित की धारा से अपने प्राण नष्ट कर बैठा होगा। साथ ही

उस के ग्रन्थ विनष्ट हो गये होंगे*। परन्तु यह सब दूर की कल्पना प्रतीत होती है। वस्तुतः कालक्रम से ही ये सब शाखाएं लुप्त होती गई होंगी।

सम्प्राप्त तीन शाखाएं।

सम्प्रति सामवेद की तीन शाखाएं ही प्रसिद्ध हैं। चरणव्यूह में भी इन्हीं का उल्लेख है। 'गुर्जरदेशे कौथुमी प्रसिद्धा। कार्णाटके जैमिनी प्रसिद्धा। महाराष्ट्रदेशे राणायनीया प्रसिद्धेति।' अर्थात् गुजरात में कौथुमी, कार्णाटक में जैमिनी और महाराष्ट्र में राणायनीय शाखा प्रसिद्ध हैं।

पूर्वोक्त तीन शाखाओं में से कौथुमी शाखा ही सम्प्रति मूल सामवेद माना जाता है। इस का एक कारण तो इस का समस्त भारत में अत्यन्त प्रसिद्ध होना है। अन्य प्रबल कारणों की आगे खोज होनी चाहिये।

इस सामवेद के आठ ब्राह्मण हम तक पहुंचे हैं। (१) ताण्ड्य ब्राह्मण अथवा पञ्चविंशब्राह्मण अथवा प्रौढ ब्राह्मण अथवा छान्दोग्य ब्राह्मण। (विबलियोथीका इण्डिका संस्करण संवत् १८२७-३०)। (२) षड्विंशब्राह्मण (जीवानन्द सं० १८८१ सन् तथा "विज्ञापनभाष्य-सहितम्," एच० एफ० ईलसिंह सम्पादित, लीडन १८०८)। (३) सामविधानब्राह्मण (ए० सी० बर्नेल सम्पादित १८८० सन्, लण्डन, तथा सत्यव्रत सामा० सम्पा० सं० १८५१)। (४) आर्षेय ब्राह्मण (ए० सी० बर्नेल सम्पा० १८७८ सन्, लण्डन, तथा सत्यव्रत सा० सम्पा०

* अलबेरूनी लिखता है कि 'उस के काल से कुछ पूर्व ही कश्मीर के वसुक्र नामक ब्राह्मण ने वेदों को लिपिबद्ध करने की प्रथा चलाई थी।' (अलबेरूनी का भारत। भाग दूसरा। श्रीसंतरामकृत अनुवाद। सन् १८२०। पृ० ११)। हमें इस बात पर विश्वास नहीं।

सं० १६४८) । (५) देवताध्याय वा दैवत ब्राह्मण (ए० सी० बर्नेल सम्पा० सन् १८७३ तथा जीवानन्द सन् १८८१) । (६) उपनिषद् ब्राह्मण—(क) मन्त्रब्राह्मण (सत्यव्रतसा० सम्पा० सं० १६४७ तथा प्रथम प्रपाठकमात्र के० स्टोन्नर सम्पा० १६०१) (ख) छान्दोग्योपनिषद् (अनेक संस्करण निकल चुके हैं) । (७) संहितोपनिषद् ए० सी० बर्नेल सन् १८७१) । (८) वंशब्राह्मण (ए० सी. बर्नेल सम्पा. १८७३ तथा सत्यव्रत सा० सं० १६४६) ।

कई विद्वानों का मत है कि वस्तुतः सामब्राह्मण एक ही है । वह सम्प्रति चार भागों में विभक्त हो गया है । (१) पञ्चीस अध्यायात्मक पञ्चविंशब्राह्मण (२) पञ्च अध्यायात्मक षड्विंशब्राह्मण (३) अष्ट अध्यायात्मक छान्दोग्योपनिषद् (४) दो अध्यात्मक गृह्य-कर्म-प्रधान मन्त्रब्राह्मण । सात ब्राह्मण चालीस अध्याय युक्त था । अन्य पाँच ब्राह्मण अनुब्राह्मणमात्र हैं । जब तक सामवेद सम्बन्धी अनेक ग्रन्थों के शुद्ध वैज्ञानिक संस्करण न रूप जावें, तब तक इस विषय पर कुछ कहना हमारे लिये अयुक्त है । इस का विचार तभी होसकता है जब इन ब्राह्मण-ग्रन्थों का काल-निरूपण हो जावे ।

ताराज्यब्राह्मण की प्राचीनता ।

अष्टाध्यायी ४। २। १३८॥ पर एक वार्तिक है “चरणसम्बन्धेन निवास लक्षणोऽयम्” इस पर लिखते हुए पतञ्जलिमुनि चरणसम्बन्धी नौ (९) ऋषियों को निवास-विचार से तीन भागों में बांटते हैं । “त्रयः प्राच्याः । त्रय उदीच्याः । त्रयो माध्यमाः ।” काशिकाकार इसी वाक्य को ध्यान में रखकर अष्टा० ४ । ३ । १०४ ॥ पर लिखता है—“वैशम्पायनान्तेवासिनो नव ।” आगे चलकर वह कुछ प्राचीन कारिकाएँ उद्धृत करता है । उन में से एक का अर्थ भाग यह है—

ऋचाभारुणितारुड्याश्च मध्यमीयास्त्रयोऽपरे ॥

अर्थात् ऋचाभ, भारुणि और तारुड्य तीनों वैशम्पायन-शिष्य माध्यम=मध्यम भूमि निवासी थे। इन तीनों के अपने २ चरण थे। इन में से तारुड्यों की शाखा आरम्भ से कौथुमी ही चली आ रही है। इस का कुछ पता पाणिनीय गणपाठ से लगता है। वहाँ ६।२।१७ पर यह तीन गण भी दिये हैं। “कठकालापाः। कठकौथुमाः। कौथुमलौकाक्षाः।” हम कह चुके हैं कि कठ और तारुड्य आदि सतीर्थ्य=एक गुरु के शिष्य थे। उन में से कठों की अपनी शाखा थी, परन्तु तारुड्यों का अपना चरण ही था। इस लिये गण में कठ और तारुड्य दोनों की शाखाओं का परिचय देने के लिये “कठकौथुमाः” कहा है। इस कथन में एक बात ध्यान देने योग्य है। सामविधान ब्राह्मण के अन्त में जो ऋषि-परम्परा दी है वहाँ तारुड्य का गुरु प्राजापत्यविधि से बादरायण कहा है। यथा—

सोऽयं प्राजापत्यो विधिस्तमिमं प्रजापतिर्बृहस्पतये प्रोवाच ।
बृहस्पतिर्नारदाय । नारदो विष्वक्सेनाय । विष्वक्सेनो व्यासाय
पाराशर्याय । व्यासः पाराशर्यो जैमिनये । जैमिनिः पौष्पिण्ड्याय ।
पौष्पिण्ड्यः पाराशर्यायणाय । पाराशर्यायणो बादरायणाय ।
बादरायणस्ताण्डिशायनिभ्याम् । ताण्डिशायनिनौबहुभ्यः॥

एक तारुड्य का वर्णन शतपथब्राह्मण ६।१।२। २५ में आया है— “अथ ह स्माह तारुड्यः ।” अतः इतना निश्चित है कि चाहे तारुड्य कोई भी हो, है वह अतिप्राचीन। तब उस की संहिता क्यों कौथुम हुई और भूल सामवेद क्यों कौथुम कहलाया ? इस के विचार के लिए बड़े परिश्रम की आवश्यकता है।

सूत्रों का विवरण निम्नलिखित प्रकार से है। (१) मशककल्पसूत्र

अथवा आर्षेयकल्प (डबल्यू० कालेण्ड सम्पा० सन् १९०८) ।
 (२) क्षुद्रसूत्र आर्षेयकल्प का परिशिष्ट ही है (उसी के उत्तर भाग में छपा है) । (३) लाट्यायन श्रौतसूत्र (बिब० इण्डि० सं० १८२८) ।
 (४) गोभिलीय गृह्यसूत्र (क्लापर सम्पा० १८८४ सन् तथा बिब० इण्डि०, द्वि० सं०, सन् १८०८) । (५) आश्वकल्प, परिशिष्ट, गोभिल अथवा वसिष्ठकृत (बिब० इण्डि० द्वि० सं० सन् १८०६) ।
 (६) कर्मप्रदीप अथवा कुन्दोगृह्यपरिशिष्ट (धर्मशास्त्रसंग्रह, सन् १८७६, जीवानन्द संस्करण के पूर्वार्ध पृ० ६०३-६४४ तक, कात्यायन-स्मृति वा कात्यायनविरचित कर्मप्रदीप के नाम से छपा है । तथा प्रथम प्रपाठक फ्र० श्रेडर सम्पा०, हले १८८६ सन् तथा बिब० इण्डि० में सन् १८०८ और द्वि० प्रपाठक सृ० होलस्टाईन सम्पा० हले सन् १८६०) ।
 (७) गृह्यासंग्रह, गोभिलपुत्रकृत (ब्लूमफील्ड द्वारा Z.D. M. G. Vol ३५ में सम्पा० तथा बिब० इण्डि० द्वि० सन् १८१०) । (८) पञ्च-विधसूत्र (सत्यव्रतसा० सम्पा० तथा रि० ज़ीमन सम्पादित १८६३ ब्रेसला) । शिज्ञाग्रन्थों में तीन शिज्ञा प्रसिद्ध हैं ।

(१) नारदीय शिज्ञा (सत्यव्रतसा० सं०, दत्तात्रेय सम्पा० लाहौर सन् १८०६ तथा शिज्ञासंग्रह काशी में, सन् १८६३) । (२) लोमशीय शिज्ञा (शिज्ञा संग्रह सं०) (३) गौतमीयशिज्ञा (शिज्ञा संग्रह सं०) । प्रातिशाख्यों में निम्नलिखित ग्रन्थ हैं ।

(१) ऋक्तन्त्र (ए० सी० बर्नेल सम्पा० १८७६) । (२) सामतन्त्र (दयानन्द महाविद्यालय के लालचन्द पुस्तकालय में इस की एक प्रतिलिपि है जो मद्रास गवर्नमेण्ट के संग्रह के एक ग्रन्थ से काराई गई थी) । (३) पुष्पसूत्र वा फुल्लसूत्र (रि० ज़ीमन सम्पादित) ।

कुल चौदह (१४) ग्रन्थों का हम ने ऊपर उल्लेख किया है । इन के अतिरिक्त अठतीस (३८) और ग्रन्थ हैं ! उन सब के नामादि

जैमिनीय संहिता (von Dr. W. Caland, Breslau, 1917) पृ०
१३—१५ पर देखो ।

२. राणायनीय शाखा ।

इस शाखा की संहिता अभी तक नहीं छपी । इस के सूत्र
अथ निम्नलिखित हैं ।

- (१) द्राह्यायण श्रौतसूत्र (कुछ भाग रियूटर सम्पादित लगडन
१८०४ सन्) । (२) खादिरगृह्यसूत्र अथवा द्राह्यायण गृह्यसूत्र (मैसूर
राज्य संस्कृत ग्रन्थमाला १८१३ सन् तथा आनन्दाश्रम पूना सन् १८१४) ।
(३) गौतमपितृमेघसूत्र (कालेण्ड सम्पा० लाईपज़िग १८६६ सन्) ।
(४) गौतमस्मृति (स्मृतिसमुच्चय, पूना) ।

राणायनीय-शाखा सम्बन्धी इतने ग्रन्थों का वर्णन करके
डाक्टर कालेण्ड महाशय एक विचार उपस्थित करते हैं । वह इतना
आवश्यक है कि हम उस का अनुवाद दिये बिना नहीं रह सकते—

“ परन्तु इन सब ग्रन्थों का राणायनीय-शाखा सम्बन्धी होना
अनिश्चित ही है । कर्मप्रदीप पर आशार्क का भाष्य है । उस में वह
बताता है कि गोभिलसूत्र कौथमों का ही गृह्यसूत्र नहीं प्रत्युत राणाय-
नीयों का भी है । हेमाद्रि भी अपने श्राद्धकल्प में तीन बार (पृ० १४२४,
१४६०, १४६८) गोभिल को राणायनीय-सूत्रकृत् कहता है । यदि यह
बात मान ली जावे तो खादिरगृह्यसूत्र राणायनीयों का सूत्र नहीं रह
सकता । अस्तु, दक्षिण भारत में शारदूलों के एक खादिर गृह्यसूत्र
की विद्यमानता कही जाती है । (देखो Report on a search for
Sanskrit mss. in the Bombay Presidency 1892-95, by
A. V. Kathavate Bombay, 1901, No. 79) । शारदूल भी
सामवेद की एक शाखा है । अब यही खादिर गृह्यसूत्र शारदूल
सामगों के खादिर सूत्र से कुछ पाठभेदों को छोड़ के प्रायः मिलता

बताया जाता है। हेमाद्रि के काल में शार्दूल शाखा की ऐतिह्य गृह्यन्ता अदृष्ट थी, यह भी श्राद्धकल्प से ज्ञात होता है। उस में (पृ० १०७८) पर, वह वेद के उन भागों का उल्लेख करता है जो ब्राह्मणों के भोजन-समय शार्दूल-शाखा वालों को गाने चाहियें। अतएव यह स्पष्ट है कि कम से कम खादिरगृह्यसूत्र में मूलतः शार्दूलों सम्बन्धी गृह्यकर्म थे। परन्तु एक और ऐतिह्य भी खादिर-सूत्र सम्बन्धी है। मैसूर में १८८१ सव में कण्ठभूषण भाष्य सहित जो गृह्यरत्न छपा है उस में अनेक बार गौतमगृह्यसूत्र का उल्लेख है। उस में जितने भी वाक्य गौतम के नाम से दिये गये हैं, वे सब हमारे खादिरगृह्यसूत्र में मिलते हैं। इस के अतिरिक्त जैसा हम पूर्व कह चुके हैं, हमारे पास एक गौतम पितृमेघसूत्र है, एक गौतम धर्मसूत्र (स्टैनज़लर सम्पा० लगडन १८७६) * और एक स्मृति भी है। ये सब गौतमों के ग्रन्थ भी हो सकते हैं कि जो सामवेद का गौण भाग है। ”

हम ने विद्वान् पाठकों के विचारार्थ श्री कालेरड-प्रदर्शित ये सब पत्र उद्धृत कर दिये हैं। अपनी सम्मति किसी और समय पर प्रकाशित करेंगे ॥

जैमिनीय शाखा ।

इस शाखा के निम्नलिखित ग्रन्थ अब तक प्रकाशित हो चुके हैं । (१) जैमिनीय संहिता (Dr. W. Caland's edition, Breslau, 1907.) । (२) जैमिनीय-ब्राह्मण (इस के अनेक खण्ड हब्स अटेल ने पाश्चात्य अनुसन्धान पत्रों में प्रकाशित किये हैं। अन्य उपयोगी खण्डों का अधिकांश भाग ग्रन्थरूप में छप गया है—Das Taiminiya Brāhmaṇa in Auswahal, Amsterdam, 1919) हस्तलिखित सामग्री के अपर्याप्त होने से यह बृहद्ब्राह्मण अभी पूरा नहीं छप सका) । (३) जैमिनीय-उपनिषद्ब्राह्मण (अर्थात् गायत्र्युपनिषद्,

* इसके दो भारतीय संस्करण निकल चुके हैं (१) मैसूर (२) मद्रास ।

पूर्वोक्त ब्राह्मण का उत्तर भाग है। हन्नस अटेलसम्पा० १८६४ सन्।
 (४) आर्षेय-ब्राह्मण (५० सी० बर्नेल सम्पा० मंगलोर १८७८)।
 (५) जैमिनीय श्रौतसूत्र अग्निष्टोम-प्रकरण (डी० गेस्ट्रा सम्पा०
 लाईडन सन् १९०६)*। (६) जैमिनीय-गृह्यसूत्र (edited by Dr.
 W. Caland, Amsterdam, 1905.)†

जैमिनीय-ब्राह्मण ।

“शौनकादिभ्यश्छन्दसि।” ४।३।१०६ के गण में पाणिनि
 “तलवकार” शब्द पढ़ते हैं। इसी तलवकार ऋषि के नाम पर
 तलवकार शाखा प्रसिद्ध थी। उसी का अब जैमिनि-शाखा नाम
 हो गया है। इसका कारण अभी पूर्णतया ज्ञात नहीं। संहिता के
 समान ब्राह्मण को भी अब जैमिनीय ब्राह्मण कहते हैं।

श्री शङ्कराचार्य केनोपनिषद् भाष्य के प्रारम्भ में लिखते हैं—
 “केनेषितम्” इत्याद्योपनिषत्परब्रह्मविषया वक्तव्येति नवमस्या-
 ध्यायस्यारम्भः। प्राणेतस्मात्कर्माण्यशेषतः परिसमापितानि समस्त-
 कर्माश्रयभूतस्य च प्राणस्योपासनान्युक्तानि कर्माङ्गसामविषयाणि
 च। अनन्तरं च गायत्रसामविषयं दर्शनं वंशान्तमुक्तम्।”

(अर्थ) “केनेषितम्” से आरम्भ होने वाली, परब्रह्मविषय के
 कहने वाली उपनिषद् कही जानी चाहिये। यह नवम अध्याय का
 आरम्भ है। इस से पूर्व (आठ) अध्यायों में यज्ञ कर्म पूरे कहे गये
 हैं। प्राणोपासना भी कही गई है। तत्पश्चात् गायत्रसाम और वंश
 कहा गया है।” तलवकार ब्राह्मण का यह वर्णन शङ्कर ने किया है।

जैमिनीयब्राह्मण जो सम्प्रति मिलता है उसका अध्यायक्रम

* जैमिनीय श्रौतसूत्र समग्र सभाष्य बड़ोदा राजकीय ग्रन्थमाला में
 अग्रि ही छपेगा।

† जैमिनीय गृह्यसूत्र का कालेरड सम्पादित भारतीय संस्करण ला०
 मोतीलाल बनारसीदास सैदमिह्रा बाज़ार लाहौर द्वारा शीघ्र प्रकाशित किया जायगा।

शङ्कर-प्रदर्शित अध्यायक्रम से विभिन्न है। प्रथम तीन अध्याय हैं। पश्चात् उपनिषद् ब्राह्मण आरम्भ होता है। उस में चार अध्याय हैं। केन उपनिषद् चतुर्थाध्याय के अठारहवें खण्ड से आरम्भ होता है, और इक्कीसवें पर समाप्त हो जाता है। वंश इस से पूर्व ही समाप्त हो जाता है। सात खण्ड इस से आगे और हैं। सो सारे भिन्न के ब्राह्मण के सात अध्याय होते हैं। यदि आर्षेय-ब्राह्मण भी मिला लिया जावे तो सारे आठ अध्याय होते हैं। सम्भव है और ग्रन्थ मिलने पर इस बात का निर्णय हो जावे।

उपनिषद् ब्राह्मण ।

उपनिषद् ब्राह्मण को हन्नस अर्टेल महाशय ने अमेरिकन ओरिएण्टल सोसायटी के जर्नल सं० १५ में रोमन-लिपि में सम्पादित किया था। मेरे कहने पर पण्डित रामदेव जी ने उसी से इस का देवनागरी संस्करण तय्यार किया था। वही अब यहां छपा गया है।

हस्तलिखित सामग्री ।

जिस हस्तलिखित सामग्री से अर्टेल ने अपना संस्करण तय्यार किया था उस का उल्लेख उस ने अपनी भूमिका में इस प्रकार दिया है—

A. बनेल के नोटानुसार जो लपेटने वाले कागज़ पर है, यह हस्तलेख “मलाबार हस्तलेख से नकल किया गया,” १८७८ सन् में। अन्त में वह लिखता है “मूल की तिथि, कुलुम १०४०=१८६४ सन्। पलघट के हस्तलेख से।”

B. तालपत्रों पर लिखे ग्रन्थ से, लगभग ३०० वर्षपूर्व लिखा गया, तिन्नेवली से प्राप्त, परन्तु पहले अलेप्पी से लाया गया था।” इस के पाठभेद ही दिये गये हैं।

C. बनेल के हाथ की रोमनलिपि में किया हुआ ग्रन्थ। यह १८५६ पर समाप्त हो जाता है।

A. ग्रन्थ का पाठ और B. के पाठभेद ग्रन्थाक्षरों में हरिवर्षीय कागज पर हैं। वे प्रो० जानअवेरे द्वारा रोमन में लिखे गये थे, और कापी प्रो० व्हिटने ने मूल से मिला ली थी। उन्होंने C. के पाठभेद भी दे दिये थे। इसी कापी से यह संस्करण तय्यार किया गया है। मूल अब इण्डिया आफ़िस लण्डन के पुस्तकालय में है।

हस्तलेखों में ऐसा शीर्षक है —

तलवकारआक्षरों उपनिषद्वाङ्मयम् ।

अनुवाक, खण्ड और कण्डिकादि के विभाग विषय में श्रीअर्देल ने यह लिखा है। “वाक्यों (कण्डिकाओं) के अङ्क देने में हस्तलेख असावधान और असङ्गत हैं। A. अनुवाक और खण्डविभाग नहीं देता, परन्तु प्रत्येक अध्याय की कण्डिकाओं पर क्रमशः अङ्क देता है। मैंने अनुवाक और खण्ड विभागों में B. और C. की कण्डिकाओं के अङ्कों में तीनों हस्तलेखों की साधारण अशुद्धियों और विलोपों का लिखना उपयोगी नहीं समझा। अध्याय २१ से A. और B. अङ्कों का नया प्रकार (कण्डिकाओं की समाप्ति पर) आरम्भ करते हैं। तथापि तीन पहली कण्डिकाएं (२१-३) छोड़ते हैं, और २४ को २ लिखते हैं। पर इस के पश्चात् नियमपूर्वक अर्थात् २५=५ इत्यादि, लिखकर तृतीय अध्याय के अन्त तक जाते हैं, ३४=५७। B. में अङ्क देने के एक और क्रम के भी अवशेष हैं। यहां तीसरे अध्याय की प्रथम तीन कण्डिकाओं पर और अङ्कों के साथ क्रमशः ५६, ५७ और ५८ लिखा है। B. में ३१८ पर ७०, ३२२ पर ७३, ३३२ पर ७६ के अङ्क अधिक हैं। इन अन्तिम तीन अनुवाकों की गणना स्पष्ट ही इस अध्याय के प्रथम तीन से विभिन्न है। साथ ही मूल की कण्डिकाओं के क्रम से भी भिन्न है।

“तीनों हस्तलेख एकही सदोष मूल से आए हैं। तीनों में बहुत सामान्य भ्रष्टपाठ हैं। विराम, अक्षर-विन्यास और सन्धि-सम्यन्धी

बातों में भी वे असावधानी से लिखे गए हैं। मैंने इन बातों के ठीक करने में स्वतन्त्रता बर्ती है। सब स्थलों में, जो केवल अक्षर-विन्यास सम्बन्धी नहीं हैं, मैंने हस्तलेखों के पाठ-भेद पृष्ठ के नीचे दिये हैं। निर्देशों की सरलता के लिये मैंने प्रत्येक अध्याय में निरर्थक अनुवाक विभाग का ध्यान न करते हुए क्रमशः खण्डाङ्क दे दिया है। हस्त लेखों में कण्डिकाओं पर कोई अङ्क नहीं तथापि मैंने यह दे दिया है।

अमेरिकन संस्करण के अन्त में अटेल महाशय ने चार सूचियाँ दी हैं। [१] आवश्यक शब्दों और ऋषि नामों आदि की सूची। [२] निर्वचनों की सूची। [३] व्याकरण सम्बन्धी प्रयोजनीय स्थल। [४] उद्धरणों की सूची। हमने प्रथम सूची में से ऋषि नाम पृथक् करके उनकी सूची दे दी है। अन्य शब्दों को इस लिए नहीं दिया कि दयानन्द महाविद्यालय के अनुसन्धान विभाग की ओर से उपलब्ध ब्राह्मणों आदि की एक विस्तृत सूची तय्यार हो रही है। उसमें ये शब्द और अन्य शब्द भी आवेंगे, अतः उनको यहाँ छापना आवश्यक नहीं समझा। सूचियाँ (२) और (४) भी हमने दे दी हैं। तीसरी को हम आर्यावर्त्तीय परिदलों के लिए अनावश्यक समझते हैं।

पं० रामदेव ने पाठभेदों को देने के लिये A.B.C. के हवाले नहीं दिये। सो आवश्यक होने पर भी यह रह गये हैं। पहले फार्मों में उन्होंने Omitted के स्थान में "ओम" दिया था। मैंने आगे चल कर उस के स्थान में संस्कृत शब्द "नास्ति" कर दिया है। यह संस्कृत शब्द होने से एतद्देशीय जनों के लिये अधिक उपयोगी है। अटेल ने प्रत्येक स्वर सन्धि पर 'कामे' का चिह्न दिया हुआ था। रामदेव जी ने उस के स्थान में 'ऽ' चिह्न दे दिया था। संस्कृत में यह अनावश्यक है, अतः दूसरे फार्म से मैंने इसे भी हटा दिया है॥

जैमिनीय उपनिषद्ब्राह्मण के सम्बन्ध में विशेष वक्तव्य ।

जैसा पूर्व लिखा जा चुका है, यह ब्राह्मण, बृहद् जैमिनीय ब्राह्मण का एक भागमात्र है। इस का मूल नाम “गायत्र उपनिषद्” है। जै० उ० ब्रा० ४। ७ के अन्त में यही नाम आया है। यह नाम है भी सार्थक, क्योंकि इन सारे अध्यायों में गायत्र साम का ही वर्णन है। इसी से अमृत अर्थात् मोक्ष की प्राप्ति जताई गई है। जै० उ० ब्रा० ३।४० के आरम्भ में यही कहा गया है—

तदेतदमृतं गायत्रम् । एतेन वै प्रजापतिरमृतत्वमगच्छदेतेन
देवा एतेनर्षयः ॥१॥

अर्थात् वह यही अमृत गायत्र (साम) है। इसी से प्रजापति मुक्त हुआ, इसी से (अन्य) विद्वान्, इसी से मन्त्रार्थ द्रष्टा (ऋषि)।

इस ब्राह्मण में दो स्थलों पर अर्थात् ३।४०-४२॥ और ४।१६, १७॥ पर दो वंश परस्परापे आई हैं। अन्तिम वंश परस्परा पहली से कुछ ही अन्य नाम रखती है। यह है भी छोटी। पहली का आरम्भ “ब्रह्म” से होता है। (१) ब्रह्म ने (२) प्रजापति के लिये। उसने (३) परमेष्ठी के लिये। उसने (४) देवसविता के लिये इत्यादि।

शतपथब्राह्मण (माध्यन्दिन) में भी दशम काण्ड की समाप्ति पर और चौदहवें काण्ड के अन्त से कुछ पहले दो ऋषि वंश-वलियां आई हैं। पूर्वली में बताया गया है कि स्वयम्भु ब्रह्म ने प्रजापति को बिद्या पढ़ाई, और उत्तरली में कहा है कि परमेष्ठी को। जै० उ० ब्रा० में एक रूप से इन दोनों का मेल है। अर्थात् ब्रह्म, प्रजापति, और परमेष्ठी यद्यपि समकालीन थे, तथापि गायत्र साम का रहस्य ब्रह्म ने स्वयं परमेष्ठी को नहीं बताया, प्रत्युत यह उस तक प्रजापति द्वारा आया।

जैमिनीय ब्राह्मण कोई नया ब्राह्मण नहीं ।

शतपथ ब्रा० के द्वि० वंश में ब्रह्म से लेकर अपने आप (वयं) तक ६८ नाम हैं । जै० उ० ब्रा० के प्रथम वंश में ब्रह्म से लेकर वैपश्चित दा० गुप्त लौहित्य तक ५० नाम हैं । प्रत्येक ब्राह्मण के सब वंशों को मिला कर और यदि कुछ नाम छूट गये हैं तो उनका स्थान छोड़ कर भी ब्रह्म से ऋषियों की एक जैसी संख्या होजायगी। इस से प्रतीत होता है कि आर्यावर्त्त के इतिहास में ब्राह्मणों के संकलन का समय प्रायः एक ही था । ब्रह्मा से जो अनेक विधायें अनेकों कुलों में चली आई थीं, वही इतिहासयुक्त करके प्रायः एक काल में एकत्र कर ली गई । जैमिनीय ब्राह्मण भी उसी समय संकलित हुआ ।

जब यह ग्रन्थ छप रहा था, तब श्रीमान् कालेण्ड महाशय ने मुझे पत्र लिखा कि वे अटेल के कई पाठ शुद्ध कर देंगे । तब मैंने उन्हें मुद्रित ७२ पृष्ठ भेज दिये थे । उन्होंने उनके हाशिये पर संशोधन कर दिया है । वह भूमिका के अन्त में छाप दिया गया है । अगले पृष्ठों का संशोधन फिर कभी छपा जायगा । इस परिश्रम के लिए जो उन्होंने स्वयं भेरा ध्यान उधर खेंच कर किया है, उन का अत्यन्त अनुगृहीत हूँ ।

इस ग्रन्थ के मूक पं० विश्वबन्धु एम० ए० शास्त्री, तथा पं० हंसराज पुस्तकाध्यक्ष लालचन्द पुस्तकालय ने देखे हैं । इन दोनों महाशयों का भी मैं कृतज्ञ हूँ ।

परमदयामय भगवान् अपनी कृपा से इन हृदय-पाथक ग्रन्थों के प्रचार में मेरी सहायता करें ।

इत्योम्

दयानन्द महाविद्यालय

लालचन्द पुस्तकालय लाहौर

माघ, संक्रान्ति सं० १९७७

भगवद्भक्त

श्री कालेरुड-प्रदर्शित सटिप्पण पाठ संशोधन ।

पृ०	पंक्ति	प्रकाशित पाठ	संशोधित पाठ
३,	१२	०सिच्यादेवमे०	सिच्येतैवमे०
५,	१	हैऽषा खला	हैषाखला
५,	७	उतैषां खला	उतैषाखला
५,	११	०प्रति यस्य	प्रत्यस्य
हस्त ले० पाठ शुद्ध है। देखो पाठभेद।			
७,	६	लोष्टो	लोष्टो
८,	१	ल्यित्वा पनि०	ल्यित्वापनि०
८,	६	ववर्ज	ववृजे*
८,	८	बहुभू०	बहोभू०
११,	१२	वे वेद०	वावेद०
१६,	४	यदमुने	यदमुचे
१७,	८	देवा	देवाः
१७,	८	कस्मादु	कस्मा उ
२०,	६	०सन्नाहोरात्राः	सन्ना होत्राः
३४,	१५	अभिपर्यक्त	अभिपर्यस्त
३७,	३	उच्चा	[उच्चा]
३७,	८	ह चै०	ह [स्म] चै०
४०,	२	तद्यद्वै	यद्यद्वै
४६,	१	प्रजापतिर्वा वेद अग्र	प्रजापतिर्वावेदमग्र
४६,	१२	सुनोति	सनोति
५२,	२	०सर्क	०सर्क
५३,	४	वायतन	वायतना †
५८,	३	०पुनीध्वं न पूता वै	०पुनीध्वमपूता वै
६०,	१५	ययाच ‡	पपाच or पपर्च

* The mss. (Grantha) have ववृज or वव्रज which nearly is the same in Grantha. If the Sandhi is effaced we ought to return ववृजे ।

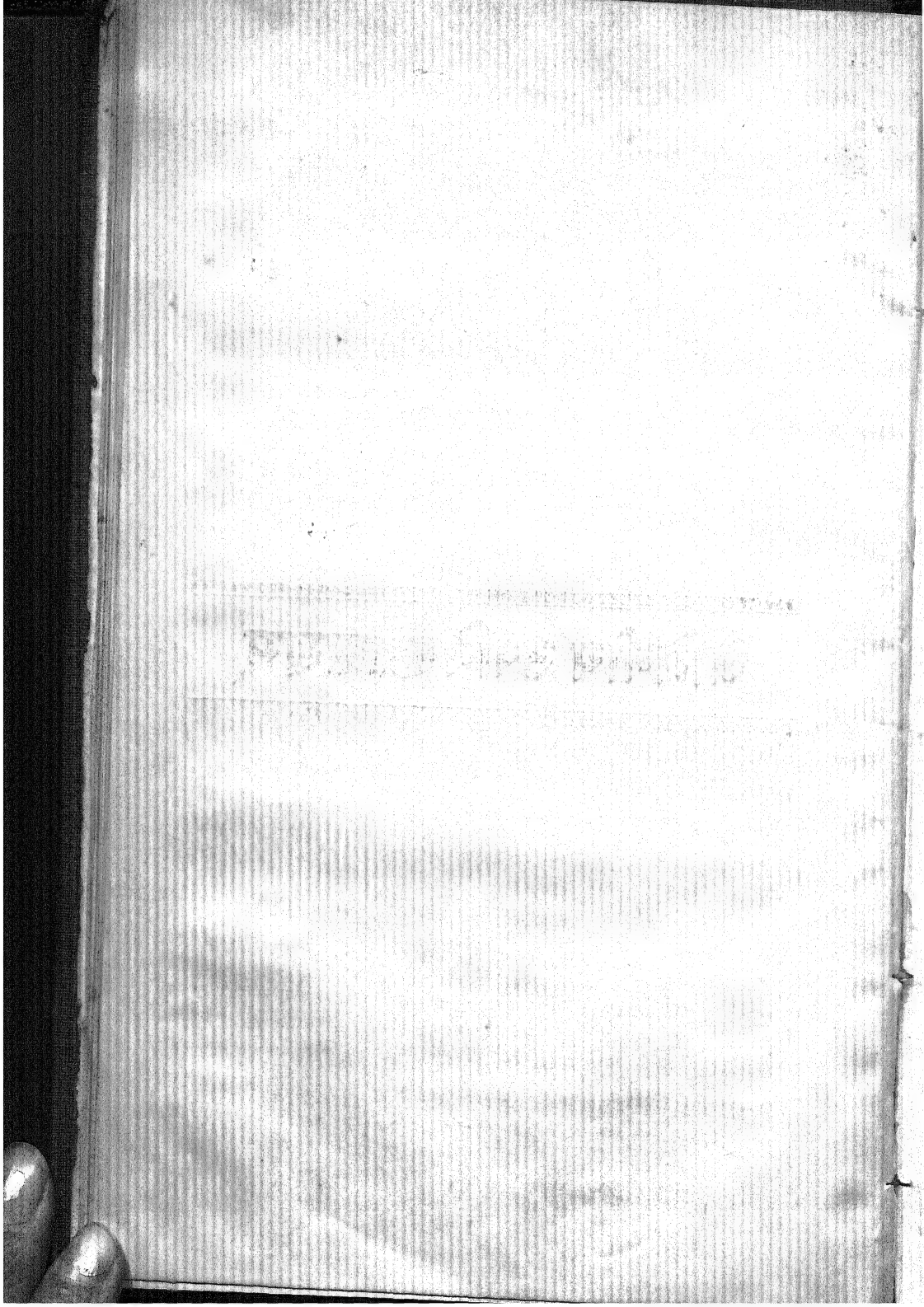
† इदमायतना is a bahuvrihi compound. पाठभेद जो नीचे दिया है, वह ठीक है ।

‡ Must be corrupt.

शुद्धिपत्रम् ।

पृ०	पं०	अशुद्ध	शुद्ध
मू० ४	५	सिंहि०	संहि०
" ६	४, ६, ८, ११	अग्नि	सूर्य
१६	१३	०सा	०सा—
२४	१	यत्पर तद्०	यत्परतद्०
३८	३	शामूल प०	शामूलप०
५४	१३	श्रेय स	श्रेयस
६३	२	एवं वि०	एवंवि०
१००	१५	०भ्य	०भ्य—
१०६	१४	वाङ्	वाङ्
१०७	१५	० पाणौ	० पानौ
१११	७	युष्मासु	युष्मासु
११३	११	रेतां	रेतो
१३६	३	०स्पृणाति	स्पृणाति
१४२	६	स्वर्गस्य	स्वर्गस्य
१४६	६	चकुलं	चकुलं

जैमिनीय उपनिषद्ब्राह्मणम्



ओ३म्

जैमिनीय-उपनिषद्-ब्राह्मणम्

प्रजापतिर्वा इदं त्रयेण वेदेना^१ऽजयद् यदस्ये^२ऽदं जितं
तत् ॥ १ ॥ स ऐक्षते^३ऽत्थं चेद्वा अन्ये देवा अनेन वेदेन^३ यक्ष्यन्त
इमां वाव तेजितिं जेष्यन्ति ये^४ऽयम्मम । हन्ता^४त्रयस्य वेदस्य रस-
माददा इति ॥ २ ॥ स भूरित्येव^५र्वेदस्य रसमादत्त । से^५ऽयम्पृ-
थिव्यभवत् । तस्य यो रसः प्राणोदत् स^५ोऽग्निरभवद्द्रसस्य रसः
॥ ३ ॥ भुव इत्येव यजुर्वेदस्य रसमादत्त । तदिदमन्तरिक्षम-
भवत् । तस्य यो रसः प्राणोदत् स वायुरभवद्द्रसस्य रसः ॥ ४ ॥
स्वरित्येव सामवेदस्य रसमादत्त । सौ^६ऽसौ द्यौरभवत् । तस्य यो
रसः प्राणोदत् स आदित्योऽभवद्द्रसस्य रसः ॥ ५ ॥ अथै^६ऽकस्यै-
ऽथाऽक्षरस्य रसे नाऽशक्रोदादातुम् ओमित्येतस्यै^६ऽव ॥ ६ ॥
से^६ऽयं वागभवत् । ओमेव नामै^६ऽषा । तस्या उ प्राण एव रसः ॥ ७ ॥
तान्येतान्यष्टौ । अष्टाक्षरा गायत्री । गायत्रं साम । ब्रह्म उ गायत्री ।
तद् उ ब्रह्मा^७ऽभिसंपद्यते । अष्टाशफाः पशवस्तेनो पशव्यम् ॥ ८ ॥ १, १,
प्रथमेऽणुवाके प्रथमः खण्डः ।

१. १ वेदेन । २ वाजयद् । ३ पदेन । ४ हन्ता । ५ 'द' अधिक । ६ सा ।

स यद् ओमिति सोऽग्निर्वागिति पृथिव्योमिति वायुर्वा-
 गित्यन्तरिक्षो^१मोमित्यादित्यो वागिति द्यौरोमिति प्राणो वागित्येव
 वाक् ॥ १ ॥ स य एवं विद्वानुद्गायत्योमित्येवाऽग्निमादाय पृथि-
 व्याम्प्रतिष्ठापयत्योमित्येव वायुमादायाऽन्तरिक्षे प्रतिष्ठापयत्यो-
 मित्येवाऽऽदित्यमादाय दिवि प्रतिष्ठापयत्योमित्येव प्राणमादाय
 वाचि^२ प्रतिष्ठापयति ॥ २ ॥ तद्वैऽतच्छैलना^३ गायत्रं गायन्त्यो-
 वा ३ च ओवा ३ च ओवा ३ च हुम्भा ओवा इति ॥ ३ ॥ तदु ह
 तत्पराङ् इवाऽनोयुष्यम इव । तद्वायोश्चाऽपां चानुवर्त्म गेयम् ॥ ४ ॥
 यद्वै वायुः पराङ् एव पवेत क्षीयेत (स) । स पुरस्ताद्वाति स
 दक्षिणतस्स पश्चात्स उत्तरतस्स उपरिष्ठात्स सर्वा दिशोऽनुसं-
 वाति ॥ ५ ॥ तदेतदाहुरिदानीं वा अयमितोऽवासीदथेऽत्थाद्वाती
 ऽति । स यद्रेष्माणं जनमानो निवेष्टमानो वाति क्षयादेव बिभ्यत्
 ॥ ६ ॥ यदु ह वा आपः पराचीरेव प्रसृतास्स्यन्देरन् क्षीयेरंस्ताः ।
 यदङ्ग्रांसि^{११} कुर्वाणा निवेष्टमाना आवर्तन् सृजमाना यन्ति क्षयादेव
 बिभ्यतीः । तदेतद्वायोश्चैऽवाऽपां चाऽनु वर्त्म गेयम् ॥ ७ ॥ १, २ ॥
 प्रथमेऽनुवाके द्वितीयः खण्डः ।

२. १ अन्तरीक्षं । २ आपा । ३ वाची । ४ छेत्, क्षीत् । ५
 च । ६ पराङ्, पुराद् । ७ रिष्ठात् । ८ क्षीत् । ९ यजमानो, जमानो ।
 १० वक् ११ दयद्, यद् १२ अङ्ग्रांसि ।

ओवा ओवा ओवा हुम्भा ओवा इति करोत्येव^१ । एताभ्यां
 सर्वमायुरेति ॥ १ ॥ स यथा वृत्तमाक्रमणैराक्रममाण इयादे-
 वमेवैऽते द्वे-द्वे देवते संधायेऽमां लोकान् रोहन्ति ॥ २ ॥ एक उ
 एव मृत्युरन्वेत्यशनयैऽव ॥ ३ ॥ अथ हिङ्करोति । चन्द्रमा
 वै हिङ्करोऽन्नमु वै चन्द्रमाः । अन्नेनाऽशनयां व्रान्ति ॥ ४ ॥
 तां-तामशनयामन्नेन हत्वोऽमित्येतमेवाऽऽदित्यं^५ समयाऽतिमुच्यते ।
 एतदेव दिवश्छिद्रम् ॥ ५ ॥ यथा खं वाऽनसं^६ सस्याद्रथस्य वैऽवमे-
 तदिवश्छिद्रम् । तद्रश्मिभिस्संछन्नं दृश्यते ॥ ६ ॥ यद्वायवस्योऽऽ-
 र्ध्वं हिङ्कारात्तदमृतम् तदात्मानं दध्यादथो यजमानम् । अथ
 यदितरात्^९ सामोऽऽर्ध्वं तस्य प्रतिहारात् ॥ ७ ॥ स यथाऽद्विरा-
 षस्संसृज्येरन् यथा ऽग्निनाऽग्निस्संसृज्येत यथा क्षीरे क्षीरमा-
 सिच्यादेवमेवैऽतदक्षरमेताभिर्देवताभिस्संसृज्यते ॥ ८ ॥ १, ३ ॥

प्रथमेऽनुवाके तृतीयः खण्डः ।

तं वा एतं हिङ्कारं हिम्भा इति हिङ्कुर्वन्ति । श्रीर्वै भाः ।
 असौ वा आदित्यो भा इति ॥ १ ॥ एतं ह वा एतं न्यङ्गमनु गमे^२

३. १ ओव २ ऐव ३ अक्रम ४ इति ५ त्यां, त्य ६ नस ७ रसस्य

८ अ ९ त्वद्, तद् (?) १० रात् ।

४. १ ओम् २ गंभ ।

इति । यद् इति स्त्रीणां प्रजननं निगच्छति तस्मात्ततो ब्राह्मण
 ऋषिकल्पो जायतेऽतिव्याधी राजन्यश्शूरः ॥ २ ॥ एतं ह वा
 एतं न्यङ्गमनु वृषभ इति । यद् इति निगच्छति तस्मात्ततः पुण्यो
 बलीवर्दो दुहाना धेनुरुक्षा दशवाजी जायन्ते ॥ ३ ॥ एतं ह वा
 एतं न्यङ्गमनु गर्दभ इति । यद् इति निगच्छति तस्मात्स पापीया-
 ञ्छ्रेयसीषु चरति तस्मादस्य पापीयसश्श्रेयो जायतेऽश्वतरो वा-
 ऽश्वतरी वा ॥ ४ ॥ एतं ह वा एतं न्यङ्गमनु कुभ्र इति । यद् इति
 निगच्छति तस्मात् सोऽमार्गस्सन्नपिराज्ञः प्राप्नोति ॥ ५ ॥ तं है-
 ष्तमेके हिङ्गारं हिम्भा ओवा इति बहिर्धेऽव हिङ्गुर्वन्ति । बहिर्धे
 ऽव वै श्रीः । श्रीर्धे साम्नो हिङ्गार इति ॥ ६ ॥ स य एनं तत्र
 ब्रूयाद्बहिर्धान्वा अयं श्रियमधित पापीयान् भविष्यति ।

स यदा वै ध्रियतेऽथाऽग्नौ प्रास्तो भवति ।

त्तिप्रेवत मरिष्यत्यश्वेनम्प्रासिष्यन्ति" इति तथा हैऽव स्यात्
 ॥ ७ ॥ तस्माद् हैऽतं हिङ्गारं हिं वो इत्यन्तरिवैष्वाऽऽत्मन-
 ज्ञेयत् । तथा ह न बहिर्धा श्रियं कुरुते सर्वमायुरेति ॥ ८ ॥ १, ४
 प्रथमेऽनुवाके चतुर्थः खण्डः ।

४. ३ स्त्रिया ४ जायत इतिव्य ५ यषत् ६ व ७ 'ऽति' अधिक ८
 नाक्यवरस, नार्थ्यस ९ ओम् बहिर्धेऽव.....तत्र ब्रूयाद् १०
 बहिर्धेवे, ओम् । व ११ यत्तीऽति

सा हैऽषा खला देवताऽपसेवन्तीऽतिष्ठति । इदं वै त्वमत्र
पापमकर्णोऽहैऽऽप्यसि । यो वै पुरयकृत् स्यात् स इहेऽयादिति
॥१॥ स ब्रूयादप्ययो वै त्वं त्वदहं तदकरवं तद्वै मा त्वं नाऽका-
रयिष्यस्त्वं वै तस्य कर्ताऽसीति ॥२॥ सा ह वेदसत्यम्माऽऽहे-
ऽति । सत्यं हैऽषा देवता । सा ह तस्य नेऽऽशे यदेनमपसेधेत्
सत्यमुपैष्वह्यते ॥ ३ ॥ अथ होऽवाचैऽऽच्चाको वा वार्ष्णे-
ऽनुवक्ता वा सात्यकीर्त उतैषा खला देवताऽपसेदधुमेव ध्रियतेऽ-
स्यै दिशः ॥ ४ ॥ [तद्] दिवोऽन्तः । तदिमे द्यावापृथिवी
संश्लिष्यतः । यावती वै वेदिस्तावतीऽयमपृथिवी । तद्यत्रैतच्चा-
त्वालं स्वातं तत्सम्प्रति स दिव आकाशः ॥ ५ ॥ तद्वहिष्पवमाने
स्तूयमाने मनसोऽद्गृह्णीयात् ॥ ६ ॥ स यथोऽच्छ्रायम्प्रति यस्य
प्रपद्येतैष्वमेवैतया^{१२} देवतयेदममृतमभिपर्येति यत्राऽयमिदं तपती-
ति ॥ ७ ॥ अथ होवाच—॥ ८, १, ४ ॥

प्रथमेऽनुवाके पञ्चमः खण्डः ।

गोबलो वार्ष्णः क एतमादित्यमर्हति सम्यैऽनुम् । दूराद्वा एष
एतत् तपति न्यङ् । तेन वा एतम्पूर्वेण लाभयथस्तदेव मनसा-

८. १ 'ऽति' अधिक २ त्वद् ३ अर्क ४ स ५ सत्यम्माहे ६ ममम्
७ लको ८ सत्यकीर्त ९ अ १० धृय ११ प्रत्यस्य १२ अतय ।

हृत्योऽपरिष्ठा देतस्यैऽतस्मिन्नमृते निदध्यादिति ॥ १ ॥ तद् ल
 होवाच शात्र्यायानिस्समयैऽवाऽतदेनं कस्तद्वेद । यद्येता आपो वा
 अभितो यद्वायुं वा एष उपह्वयते रश्मीन्वा एष तदेतस्मै व्यूह-
 तीति ॥ २ ॥ अथ हो^४वाचोऽलु^५क्यो जानश्रुतेयो यत्र वा एष
 एतत् तपत्येतदेवामृतम् । एतच्चेद्वै प्राप्नोति ततो मृत्युना पाप्मना
 व्यावर्तते ॥ ३ ॥ कस्तद्वेद यत्परेणाऽऽदित्यमन्तरिक्षमिदमना-
 लयनमवरेण ॥ ४ ॥ अथैऽतदेवाऽमृतम् । एतदेव मां श्रूयम्प्राप-
 यिष्यथ ^{१०} । एतदेवाहं नातिमन्य ^{११} इति ॥ ५ ॥ तान्येतान्यष्टौ ।
 अष्टाक्षरा गायत्री । गायत्रं साम । ब्रह्म उ गायत्री । तद् ब्रह्मा-
 भिसम्पद्यते अष्टाशफाः पशवस्तेनो पशव्यम् ॥५॥ १, ६ ॥

प्रथमेऽनुवाके षष्ठः खण्डः ।

ता एता अष्टौ देवताः । एतावदिदं सर्वम् । ते [.....]
 करोति ॥ १ ॥ स नैषु लोकेषु पाप्मने भ्रातृव्यायावकाशं
 कुर्यात् । मनसैनं निर्भजेत् ॥ २ ॥ तदेतद्वचाऽभ्यनूच्यते ।

“चत्वारि वाक् परिमिता पदानि

तानि विदुर्ब्राह्मणा ये मनीषिणः ।

६. १ वाऽयं २ तत्, त ३ स्वैः ४ अथो ५ ओम् ६ वाचा (!) उलुक्क्यो,
 उलुक्क्यो ७ यत् ८ परोक्ष ९ अन्विलय १० त, प्रापि ११ यत् ।

गुहा त्रीणि निहिता^१ नेऽङ्गयन्ति^२

तुरीयं वाचो मनुष्या वदन्ति^३” इति ॥३॥

तद् यानि तानि गुहात्रीणि निहिता नेऽङ्गयन्ती (ऽती) ऽम एव
ते लोकाः ॥४॥ तुरीयं वाचो मनुष्या वदन्तीति^५ । चतुर्भाग ह वै
तुरीयं वाचः । सर्वयास्य वाचा सर्वैरेभिर्लोकैस्सर्वेणास्य कृतम्भ-
वाति य एवं वेद ॥ ५ ॥ स यथाश्मानमाखणमृत्वा^६ लोष्टो विध्वं-
सत एवमेव स विध्वंसते य एवं विद्रांसमुपवदति ॥ ६ ॥

प्रथमेऽनुवाके सप्तमः खण्डः ।

प्रथमोऽनुवाकस्समाप्तः ॥

प्रजापतिर्वा इदं त्रयेण वेदेनाऽजयद्यदस्येदं जितं तव ॥१॥
स ऐक्षतेत्थं चेद्वा अन्ये देवा अनेन वेदेन यक्ष्यन्त इमां वाच ते
जितिं जेष्यन्ति येऽयम्भम ॥ १ ॥ हन्तेऽमं त्रयं वेदम्पीळयानीति
॥ ३ ॥ स इमं त्रयं वेदमपीळयत । तस्य पीळयः नेकमेवात्तरं ना-
शक्नोत् पीळयितुमिति ददेतव ॥ ४ ॥ एष उ ह वाच सरसः ।
सरसा ह वा एवंविदस्त्रयीविद्या भवति ॥ ५ ॥ स इमं ररम्पी-

७, १ तानि २ जो, ओम ३ गयन्ति ४ तानि ५ ओम ६ कृत्वा
७ लोष्टो ८ ओम एवम् विध्वंसते ९ स एषो... उपवदन्ति ।

१, ने २—दा, द ३—क्तो ४. द्रवं ।

ऋयित्वा पनिधायोऽऽध्वोऽद्रवत् ॥ ६ ॥ तं द्रवन्तं चत्वारो देवाना-
 मन्वपद् यन्निन्द्रश्चन्द्रो रुद्रस्समुद्रः । तस्मादेते श्रेष्ठा देवानाम एते ह्ये-
 नमन्वपश्यन् ॥ ७ ॥ स योऽयं रस आसीत्तदेव तपोऽभवत् ॥ ८ ॥
 त इमं रसं देवा अन्वैक्षन्त । तेऽभ्यपष्यन्त् स तपो वा अभूदिति
 ॥ ९ ॥ इममु वै त्रयं वेदम्मरीमृशित्वा तस्मिन्नेतदेवाक्षरमपीळित-
 मविन्दन्नोमिति यदेतत् ॥ १० ॥ एष उ ह वाव सरसः । तेनै-
 नम्प्रायुवन् । यथा मधुना लाजान् प्रयुयादेवम् ॥ ११ ॥ तेऽभ्य-
 तप्यन्त । तेषां तप्यमानानामाप्यायत वेदः । तेऽनेन च तपसाऽपीनेन
 च वेदेन तासु एव जितिमजयन् याम्प्रजापतिरजयत् । त एते सर्व
 एव प्रजापतिमात्रा अयाश्म अयश्म इति ॥ १२ ॥ तस्मात्तप्यमा-
 नस्य भूयसी कीर्तिर्भवति भूयो यशः । स य एतदेवं वेदैवमेवा-
 ऽपीनेन वेदेन यजते । यदो याजयत्वेवमेवाऽपीनेन वेदेन याजयति
 ॥ १३ ॥ तस्य हैतस्य नैव काचनाऽर्तिरस्ति य एवं वेद । स
 य एवैनमुपवदति सार्तिमृच्छति ॥ १४ ॥

द्वितीयेऽनुवाके प्रथमः खण्डः ।

५. ह्येते ६. ओम् ७. सेनं = अन्, ऐच ८. तेभ्यप १०--इयंस्त-११
 पीळितं, ता १२ वा १३ प्राष १४ ययाद् १५. तेन, ते एन,
 तेनैव १६. यत् १७-यन् १८ अश् याम १९ ओम् यजते यदो-वेदेन
 २० एव अवि २१ असि २२ उपवृत्ति उवदति २३ अच्छति, अर्-

तदाहु^१र्दोवा ओवा इति गीयते कात्र^३भवति क सामेति ॥१॥ ओम
इति वै साम वागित्यूक् । ओमिति मनो वागिति वाक् । ओमिति
प्राणो वागित्येव वाक् । ओमितीन्द्रो वागिति सर्वे देवाः । तदे-
तदिन्द्रमेव सर्वे देवा अनुयन्ति ॥२॥ ओमित्येतदेवाक्षरम् । एतेन
वै संसवे परस्येन्द्रं वृज्जीत^४ । एतेन ह वै तद्वको दालभ्य आजके-
शिना^५भिन्द्रं ववर्ज^६ । ओमित्येतेनैवाऽऽनिनाय^७ ॥३॥ तान्येतान्यष्टौ ।
अष्टाक्षरा गायत्री । गायत्रं साम । ब्रह्म उ गायत्री । तदु ब्रह्माभिसम्प-
द्यते । अष्टाशफाः पशवस्तेनो पशव्यम् ॥४॥ तस्यैतानि नामानीन्द्रः
कर्माक्षितिर^८मृतं व्योमान्तो वाचः । बहुभूयस्सर्वं सर्वस्मा-
दुत्तरं ज्योतिः । ऋतं सत्यं विज्ञानं विवाचनमप्रतिवाच्यम्^९ । पूर्वं
सर्वं सर्वा वाक् । सर्वमिदमपि धेनुः पिन्वते परागर्वाक् ॥५॥१॥६॥

द्वितीयेऽनुवाके द्वितीयः खण्डः ।

सा^१ पृथक्सलिलं कामदुघाक्षिति प्राणसाहितं चक्षुश्श्रोत्रं^३
वाक्प्रभृतम्मनसा व्याप्तं हृदयाग्रं म्ब्राह्मणभक्तं मन्त्रशुभं वर्षपवित्रं^४

१. पवा । २. ओवात (= ओवा १?) ३. ऋग् ।

४. अवृज्ज-१५-शीव-शीम-१६. वव्रज ।

७. वनिनाय । ८-इ; क्षिति । ९-हिर । १०. विजिज्ञा-११-अः ।

१ सा । २-क्षुश्रोत्र-१३-दयो-१४. अक्त्रम्, भ्रत्रम्, भृत्रम् ।

गोभग मृथिव्युपरं तपस्तनु वरुणपरियतनमिन्द्रश्रेष्ठं सहस्राक्षर-
 मयुतधारममृतं दुहानां सर्वान् इमाँलोकानभिविच्छरतीऽति ॥१॥
 तदेतव सत्य मक्षरं यदोम इति । तस्मिन्नापः प्रतिष्ठिता अप्सु
 पृथिवी पृथिव्यामिमे लोकाः ॥२॥ यथा सूच्या पलाशानि
 सन्तृण्णानि स्युरेवमेतेनाक्षरेणोमे लोकास्संतृण्णाः ॥३॥
 तदिदमिमान् अतिविध्य दशधा क्षराति शतधा सहस्रधाऽयुतधा
 प्रयुतधा (नियुतधा) ऽर्बुदधा न्यर्बुदधा निखर्वधा पञ्चमक्षिति-
 व्योमान्तः ॥४॥ यथौघो विष्यन्दमानः परः-परोवरीयान् भव-
 त्येवमेवैतदक्षरम्परः-परोवरीयो भवति ॥५॥ ते हैते लोका
 ऊर्ध्वा एव श्रिताः । इम एवं त्रयोदशमासाः ॥६॥ स य एवं
 विद्वानुद्गायति स एवमेवैताँलोकानातिवहति । ओमित्येतेनाक्षरेणा-
 मुमादित्यम्मुख आधत्ते । एष ह वा एतदक्षरम् ॥७॥ तस्य
 सर्वमाप्तमभवति सर्वं जितं न हाऽस्य कश्चन कामोऽनाप्तो भवति
 य एवं वेद ॥८॥ तद्ग पृथुर्वैन्यो दिव्यान् व्रात्यान् पप्रच्छ ।

५. पर्यत-। ६-।। ७ ओमिति । ८-प्सुः । ९ आस, 'इदं' और
 दशधा के मध्य स्थान रिक्त है । १० निर्बु-। ११ निखर्वाच्च, निखर्वदाच्च ।
 १२-नान् । १३ ओम । परः परो । १४ तै । १५ तसि । १६ कण्व । १७ वै ।

स्थूणां दिवस्तम्भनीं सूर्य माहुरन्तरिक्षे सूर्यः

पृथिवीप्रतिष्ठः । अप्सु भूमी^{१८}शिशिरे^{१९} भूरिभाराः
किं सिन्महीरधितिष्ठन्त्याप इति ॥ ६ ॥ ते ह
प्रत्यूचुम्

स्थूणामेव दिवस्तम्भनीं सूर्य माहुरन्तरिक्षे
सूर्यः पृथिवीप्रतिष्ठः । अप्सु भूमी^{१८}शिशिरे^{१९} भूरि-
भारास्सत्यम्महीरधितिष्ठन्त्याप इति ॥ १० ॥

ओमित्येतदेवाक्षरं सत्यम् । तदेतदापोऽधितिष्ठन्ति ॥ ११ ॥ ११० ॥

द्वितीयेऽनुवाके तृतीयः खण्डः । द्वितीयोऽनुवाकस्समाप्तः ।

—:०:—

प्रजापतिः प्रजा असृजत । ता एनं सृष्ट्वा अन्नकाशिनीरभित-
स्समन्तम्पर्यविशन् ॥ १ ॥ ता अब्रवीत् किंकामास्स्थेति । अन्नाद्य-
कामा इत्यब्रुवन् ॥ २ ॥ सोऽब्रवीदेकं वै वेदमन्नाद्यमसृक्षि सामैव ।
तद्वः प्रयच्छानीति । तन्नः प्रयच्छेत्यब्रुवन् ॥ ३ ॥ सोऽब्रवीदिमान्वै
पशून् भूयिष्ठमुपजीवायः । एभ्यः प्रथमम्प्रदास्यामीति ॥ ४ ॥
तेभ्यो हिङ्गारम्प्रायच्छत् । तस्मात्पशवो हिङ्गारिकृतो विजिज्ञास-

१८-मिश्र । १९-शिशिरे । २०-अथित् ।

१. वा । २. पाम- । ३. पृथ- । ४ -कृतो ।

माना इव चरन्ति ॥५॥ प्रस्तावम्मुप्येभ्यः । तस्माद्बु ते बुवत्^५
 इवेदम्मे भविष्यत्वदो मे भविष्यतीति ॥६॥ आदिं वयोभ्यः ।
 तस्मात् तान्याददानान्युपापपातमिव चरन्ति ॥७॥ उद्गीथं देवेभ्यो
 ऽमृतम् । तस्मात्तेऽमृताः ॥८॥ प्रतिहारमारण्येभ्यः पशुभ्यः ।
 तस्मात्ते प्रतिहृतास्तन्तस्यमाना^६ इव चरन्ति ॥९॥ १ । १.१ ॥

तृतीयेऽनुवाके प्रथमः खण्डः ।

उपद्रवं गन्धर्वाप्सरोभ्यः^१ । तस्मात्त उपद्रवं गृह्णन्त इव
 चरन्ति ॥१॥ निधनम्पितृभ्यः । तस्माद्बु ते निधनसंस्थाः ॥२॥
 तद्यदेभ्यस्तत् साम प्रायच्छदेतमेवैभ्यस्तदादित्यम्प्रायच्छत् ॥३॥
 स यदनुदितस्सहिष्कारोऽर्धोदितः^२ प्रस्ताव आसंगवमादिर्माध्यन्दिन
 उद्गीथोऽपराहणः प्रतिहारो यदुपास्तमयं लोहितायाति स उपद्रवो
 ऽस्तामित एव निधनम् ॥४॥ स एष सर्वैर्लोकेस्समः । तद्यदेष
 सर्वैर्लोकेस्समस्तस्मादेष एव साम । स ह वै सामवित स साम
 वेद य एवं वेद ॥५॥ ते ऽब्रुवन् दूरे वा इदमस्मत् । तत्रेदं कुरु

१. स्तुवतेव । ६. प्रतिहृतास् । ७. ताव (?) स् (!) यमाना;
 तातास्यमाना ।

१-आपस्तरेभ्यः । २ अर्धोदितः । ३ आदित्यः । ४ द्विवार 'स सामवेद'
 वेता है ।

यत्रोपजीवामेति ॥६॥ तद्वतूनभ्यत्यनयत् । स वसन्तमेव हिङ्गार-
मकरोद्ग्रीष्मप्रस्तावं वर्षामुद्गीथं शरदम्प्रतिहारं हेमन्तं निधनम् ।
मासार्धमासावेव सप्तमावकरोत् ॥७॥ तेऽब्रुवन्नेदीयो न्वावैतर्हि ।
तत्रैव कुरु यत्रोपजीवामेति ॥८॥ तत् पर्जन्यमभ्यत्यनयत् । स
पुरोवातमेव हिङ्गारमकरोत् ॥९॥ १ । १२॥

तृतीयेऽनुवाके द्वितीयः खण्डः ।

जीमूतान् प्रस्तावं स्तनयित्नुमुद्गीथं विद्युतम्प्रतिहारं वृष्टिं
निधनम् । यद्वृष्टात्प्रजाश्चौषधयश्च जायन्ते ते सप्तम्यावकरोत्
॥१॥ तेऽब्रुवन्नेदीयो न्वावैतर्हि । तत्रैव कुरु यत्रोपजीवामेति ॥२॥
तद्यज्ञमभ्यत्यनयत् । स यजूंष्येव हिङ्गारमकरोदृचः प्रस्तावं
सामान्युद्गीथं स्तोमम्प्रतिहारं छन्दो निधनम् । स्वाहाकारवषट्-
कारावेव सप्तमावकरोत् ॥३॥ तेऽब्रुवन् नेदीयो न्वावैतर्हि । तत्रैव
कुरु यत्रोपजीवामेति ॥४॥ तत्पुरुषमभ्यत्यनयत् । स मन एव
हिङ्गारमकरोद्वाचम्प्रस्तावम्प्राणमुद्गीथं चक्षुःप्रतिहारं श्रोत्रं निधनम्
रेवश्चैव प्रजां च सप्तमावकरोत् ॥५॥ तेऽब्रुवन्त्र वा एनत्तद-

५-म इति । ६ कर- । ७ प्रस्तावः । वर्षा उद्गीथः, शरत्प्रतिहारः,
ओम शरदम्प्रतिहारम् ।

१. प्रस्तात्रैवम् । २-तिर । ३सप्तम- । ४म इति । ५ अभ्यत्यत्यन-

कर्मत्रोपजीविष्याम इति ॥६॥ स विद्यादहमेव सामास्मि मय्येता
देवता इति ॥७॥ १ । १.३॥

तृतीयेऽनुवाके तृतीयः खण्डः ।

न ह दूरे देवतस्स्यात् । यावद्ध वा आत्मना देवानुपास्ते
तावदस्मै देवा भवन्ति ॥ १ ॥ अथ य एतदेवं वेदाऽहमेव
सामाऽस्मि मय्येतास्सर्वा देवता इत्येवं हाऽस्मिन्नेतास्सर्वा देवता
भवन्ति ॥२॥ तदेतदेवश्रुत्साम । सर्वा ह वै देवताश्श्रुण्वन्त्येवं-
विदम्पुण्याय साधवे । ता एनम्पुण्यमेव साधु कारयन्ति ॥ ३ ॥
स ह स्माऽऽह सुचित्तश्चैलनो वो यज्ञकामो मामेव स वृणीताम् ।
तत एवैऽनं यज्ञ उपनंस्यति । एवंविदं बुद्धायन्तं सर्वा देवता
अनुसंतृप्यन्ति । ता अस्मै तृप्तास्तथा करिष्यन्ति यथैऽनं यज्ञ
उपनंस्यतीऽति ॥४॥ १ । १.४॥

तृतीयेऽनुवाके चतुर्थः खण्डः । तृतीयोऽनुवाकस्समाप्तः ।

—०—

देवा वै स्वर्गं लोकमैप्सन् । तं न शयाना नाऽऽसीना न
तिष्ठन्तो न धावन्तो नैव केनचन कर्मणाऽऽप्नुवन् ॥ १ ॥ ते
देवाः प्रजापतिमुपाधावन् स्वर्गं वै लोकं मौप्सिष्म । तं न शयाना

१ देवत । २ ओम् । ३ एस्म । ४ देवश्चैत । देवश्चूत । एवश्चूत । ५-नं ।
१-ऽऽशीना । २-न्त्यो । ३ उपाय-

नाऽऽसीना न तिष्ठन्तो न धावन्तो नैव केनचन कर्मणाऽऽपाम ।
 तथा नोऽनुशाधि यथा स्वर्गं लोकमाप्नुयामेऽति ॥२॥ तानब्रवीत्
 साम्नाऽनृचेन स्वर्गं लोकम्पयातेऽति । ते साम्नाऽनृचेन स्वर्गं
 लोकम्प्रायन् ॥ ३ ॥ प्र वा इमे साम्नाऽगुरिति । तस्मात्प्रसाम
 तस्मादु प्रसाम्यन्नमत्ति ॥४॥ देवा वै स्वर्गं लोकमायन् । त एता-
 न्यृक्पदानि शरीराणि धून्वन्त आयन् । ते स्वर्गलोकमजयन् ॥५॥
 तान्या दिवः प्रकीर्णान्यशेरन् । अथेऽमानि प्रजापतिर्ऋक्पदानि
 शरीराणि सञ्चित्याऽभ्यर्चत् । यदभ्यर्चत्ता एवर्चोऽभवन् ॥६॥
 १ । १.५॥

चतुर्थेऽनुवाके प्रथमः खण्डः ।

सैऽवर्गभवदियमेव श्रीः । अतो देवा अभवन् ॥१॥
 अथैऽषामिमामसुराश्चिन्त्यमविन्दन्त । तदेवाऽऽसुरमभवत् ॥२॥
 ते देवा अभवन् या वै नऋश्रीरभूदविदन्त तामसुरः । कथं न्वेषा-
 मिमांश्चिन्त्यम्पुनरेव ज्येमेऽति ॥३॥ तेऽब्रुवन्नुच्येव साम गायामेति ।

४ प्रयामे । ५ प्रयाते, प्रधामे, प्रयामे । ६ लोकंमप्रायत् । ७ इसके
 बाद कुछ गड़ बड़ है । ५ के पूर्व यह सब में लिखा है 'त एतान्यृक्पदानि
 शरीराणि धून्वन्त आयन् (र्ययन्) । ते स्वर्गलोकमजयन् (-अत्) ।
 अथेऽमानि प्रजापतिर्...ता एवर्चोऽभवन् । ८ यत् । ९ ओम् । ते स्वर्ग
 अजयन्, यहां अधिक है । १० ओम् । यद्..... । ११ ओम् । ता एव ।
 १ आस्- । २ तद् । ३ एवा । ४ विन्दन्त । ५ अब ।

ते पुनः प्रत्यादुत्या^६र्चं सामाऽगायन् । तेनाऽस्माल्लोकाद्-
 सुराननुदन्त ॥४॥ तद्वै माध्यन्दिने च सवने तृतीयसवने^७ च
 नर्चोऽपराधोऽस्ति । स यत्ते ऋचि^८ गायति तेनाऽस्माल्लोकाद्
 द्विषन्तम्भ्रातृव्यं नुदते । अथ यदमृते^९ देवतासु प्रातस्सवनं गायति
 तेन स्वर्गं लोकमेति ॥५॥ प्रजापतिर्वै साम्नेऽमांजितिमजयद्याऽस्ये
 ऽयं जितिस्ताम^{११} । स स्वर्गं लोकमारोहत्^{१२} ॥६॥ ते देवाः प्रजापति-
 सुपेत्याऽब्रुवन् न सम्यमपीदं साम प्रयच्छेति । तथेति । तदेभ्य-
 स्साम प्रायच्छत् ॥७॥ तदेनानिदं साम स्वर्गं लोकं नाऽकामयत्^{१३}
 वोढुम् ॥८॥ ते देवाः प्रजापति सुपेत्याऽब्रुवन् यद्वै नस्साम प्रादा
 इदं वै नस्तस्वर्गं लोकं न कामयते वोढुमिति ॥९॥ तद्वै पाप्मना
 संसृजतेति । कोऽस्य पाप्मेति । ऋगिति । तदृचा समसृजन्
 ॥१०॥ तदिदम्प्रजापतेर्गर्ह्यमाणमतिष्ठदिदं वै मा तत्पाप्मना सम-
 स्ताच्छुरिति^{१४} । सीऽब्रवीद्यस्त्वैतेन व्यावर्तयाद्व्येव स पाप्मनावर्ताता
 इति ॥११॥ स य एतदृचा प्रातस्सवने व्यावर्तयति व्येवं^{१५} स
 पाप्मना वर्तते ॥१२॥ १ । १६॥

चतुर्थेऽनुवाके द्वितीयः खण्डः ।

६-दुच्यत्य । ७-त्रीत्- । ८-पराधो । ९-चि । १०-नृते । ११-तम् ।
 १२-अर्- । १३-न कामयते, न कामयते । १४-कामाय्-, सामय्, ।
 १५-संस्- । १६-एव ।

तदाहुयदोवा ओवा इति गीयते कात्रगर्भवति क सामेति॥१॥
 प्रस्तुवन्नेवाष्टाभिरक्षरैः प्रस्तौति । अष्टाक्षरा गायत्री । अक्षरमक्षरं
 त्र्यक्षरम् । तच्चतुर्विंशतिस्सम्पद्यन्ते । चतुर्विंशत्यक्षरा गायत्री ॥२॥
 तामेताम्प्रस्तावेन^१र्चमाप्त्वा या श्रीर्याऽपचितिर्यस्स्वर्गो^२लोको यद्यशो
 यदन्नाद्यं तान्यागायमान आस्ते ॥३॥ १।१७॥

चतुर्थेऽनुवाके तृतीयः खण्डः ।

प्रजापतिर्देवानसृजत । तान्^१ मृत्युः पाप्मान्वसृज्यत ॥१॥
 ते देवा प्रजापतिमुपेक्षाब्रुवन् कस्मादु^२ नोऽसृष्टा^३ मृत्युं चेन्नः पाप्मा-
 नमन्ववस्रक्ष्यन्नासिथेति ॥२॥ तानब्रवीच्छन्दसि सम्भरत । तानि
 यथायतनम्प्रविशत^४ ततो मृत्युना पाप्मना व्यावर्त्स्यथेति ॥३॥
 वसवो गायत्रीं समभरन् । तां ते प्राविशन् । तान् साऽच्छादयत्
 ॥४॥ रुद्रास्त्रिष्टुभं समभरन् । तां ते प्राविशन् । तान् साऽच्छाद-
 यत्^५ ॥५॥ आदित्या जगतीं समभरन् । तां ते प्राविशन् । तान्
 साऽच्छादयत् ॥६॥ विश्वेदेवा अनुष्टुभं समभरन् । तां ते प्राविशन् ।
 तान् साऽच्छादयत् ॥७॥ तान् अस्यामृच्यस्वरायाम्मृत्युर्निरजा-

१. प्रस्तावेप्रस्तवेन । २-र्ग ।

१. ता, ताः । २ कस्मा । ३-ष्टा । ४-सृजन् । ५-शब्द
 द्व-वक्तव्य, वत्स्य- । ७ च्छाद, याम् ।

नाद्यथा मणौ मणिसूत्रम्परिपश्येदेवम् ॥८॥ ते स्वरम्प्राविशन् ।
 तान् स्वरे सतो न^१ निरजानात् । स्वरस्य तु घोषेणाऽन्वैत ॥९॥
 त ओमित्येतदेवाक्षरं समारोहन् । एतदेवाक्षरं त्रयीविद्या । यददो^{१०}
 ऽमृतं तपति तत्प्रपद्य ततो मृत्युना पाप्मना व्यावर्तन्त ॥१०॥
 एवमेवैवं विद्वान् ओमित्येतदेवाक्षरं समारूढं यददो^{११} ऽमृतं तपति
 तत्प्रपद्य ततो मृत्युना पाप्मना व्यावर्ततेऽथो यस्यैवं विद्वानुद्गा-
 यति ॥११॥ १।१८॥

चतुर्थेऽनुवाके चतुर्थः खण्डः । चतुर्थोऽनुवाकस्समाप्तः ॥

—:०:—

अथैतदेकविंशं साम ॥१॥ तस्य त्रय्येव विद्या हिङ्गारः ।
 अग्निर्वायुरसावादित्य एष प्रस्तावः । इम एव लोका आदिः ।
 तेषु^२ हीदं लोकेषु सर्वमाहितम् । श्रद्धा यज्ञो दक्षिणा एष उद्गीथः ।
 दिशोऽवान्तरदिश आकाश एष प्रतिहारः । आपः प्रजा ओषधय
 एष उपद्रवः । चन्द्रमा नक्षत्राणि पितर एतन्निधनम् ॥२॥
 तदेतदेकविंशं साम । स य एवमेतदेकविंशं साम वेदैतेन हास्य

८-यैद् । ९ नास्ति । १० ओ । ११-पेद् । १२ एदो, ओ ।

१. त्रै । २ वावायुर । ३ येषु । ४-ज्ञा ।

सर्वेणोद्गीतम्भवस्येतस्माद्वे^५ सर्वस्मादावृ^६च्यते य एवं विद्वांसमुप-
वदति ॥३॥ १।१.६॥

पञ्चमोऽनुवाकस्समाप्तः ।

—:०:—

इदमेवेदमग्रेऽन्तरिक्षमासीत् । तद्वेवाप्येतर्हि ॥१॥ तद्यदेतदन्तरिक्षं^{१ २}
य एवाऽयम्पवत एतदेवान्तरिक्षम् । एष ह वा अन्तरिक्षनाम् ॥२॥
एष उ एवैष किततः तद्यथा काष्ठेन पलाशे विष्कब्धे स्यातामक्षेण
वा चक्रावेवमैतेनैमौ लोकौ विष्कब्धौ ॥३॥ तस्मिन्निदं सर्वमन्तः ।
तद्यदस्मिन्निदं सर्वमन्तस्तस्मादन्तर्यक्षम् । अन्तर्यक्षं ह वै नामैतत् ।
तदन्तरिक्षमिति परोक्षमाचक्षते ॥४॥ तद्यथा मूताः प्रवद्धाः प्रलम्बे-
रन्नेवं हैतस्मिन्सर्वे लोकाः प्रवद्धाः प्रलम्बन्ते ॥५॥ तस्यैतस्य
साम्नस्तिस्त्र आगास्त्रीण्यागीतानि षड्विभूतयश्चतस्रः प्रतिष्ठा दश
प्रगास्सप्त संस्था द्वौ स्तोभावेकं रूपम् ॥६॥ तद्यास्तिस्त्र आगा इमं
एव ते लोकाः ॥७॥ अथ यानि (त्रीण्य्) आगीतान्यग्निर्वायुरसा

५-अस् । ६ आवृच्योते ।

१-रीक्ष- । २ अधिक है ' एष ह वा अन्तरिक्षम् । ३ एवम् ।

४ नास्ति । ५-क्षोना- । ६ नवम् । ७ एतेन । ८ नास्ति । तद्.....

अन्तस् । ९ नास्ति । १०-बन्द- । ११-नस् । १२ अगमाः । १३ एक-
रूपम्, एकरूपम् । १४ लो ।

वादिस एतान्यागीतानि । न ह वै कांचनश्रियमपराध्नोति य एवं
वेद ॥८॥ १।२०॥

पष्ठेऽनुवाके प्रथमः खण्डः ।

अथ याष्पद्विभूतय ऋतवस्ते ॥१॥ अथ याश्चतस्रः प्रतिष्ठा
इमा एव ताश्चतस्रोदिशः ॥२॥ अथ ये दश प्रमा इम एव ते दश
प्राणाः ॥३॥ अथ यास्सप्त संस्था या एवैतास्सप्ताहोरात्राः प्राची-
वर्षद्वकुर्वन्ति ता एव ताः ॥४॥ अथ यौ द्वौ स्तोभावहोरात्रे एव-
ते ॥५॥ अथ यदेकरूपं कथैव तत् । कर्मणा द्विदं सर्वं विक्रियते
॥६॥ तस्यैतस्य सान्नोदेवा आजिमायन् । स प्रजापतिर्हरसा
हिङ्गारमुदजयदग्निस्तेजसा प्रस्तावं रूपेण बृहस्पतिरुद्गीथं स्वधया
पितरः प्रतिहारं वीर्येणोन्द्रोनिधनम् ॥७॥ अथेतरे देवा अन्तरिता
इवासन् । त इन्द्रमब्रुवन् तव वै वयं स्मोऽनुन एतस्मिन् सामन्ना-
भजेति ॥८॥ तेभ्यस्स्वरम्प्रायच्छत् । तम्प्रजापतिरब्रवीत्कथेत्यमकः ।
सर्वं वा एभ्यस्साम प्रादाः । एतावद्वाव साम यावान् स्वरः ऋग्वा
एषते स्वराद्भवतीति ॥९॥ सोऽब्रवीत् पुनर्वाअहमेषामेतरसमादा-
स्य इति । तानब्रवीऽदुप मा गायत । अभि मा स्वरतेति । तथेति

१ नास्ति । सप्त..... एतास् । २-आ । ३ वर्ष- । ४ वद् ।
५ रैर्पि । ६-सं । ७ तावव । ८-रम । ९ सवद्- । १० एषो, एषोम ।

॥१०॥ तमुपागायन् । तमभ्यस्वरन् । तेषाम्पुनारसमादत्त ॥११॥
१।२१॥

षष्ठेऽनुवाके द्वितीयः खण्डः ।

स यथा मधुधाने^१ मधुनाळीभिर्मध्वासिश्चादेवमेव तत्सामन्
पुना रसमासिञ्चत् ॥१॥ तस्माद्दु ह नोऽपगायेत् । इन्द्र एष
यदुद्गाता । स यथा सावमीषां^२ रसमादत्त एवमेष तेषां रसमादत्ते
॥२॥ कामं ह तु यजमान उपगायेद्यजमानस्य हि तद्भवत्यथो ब्रह्म-
चार्याचार्योक्तः ॥३॥ तद् वा आहुरूपैव गायेत् । दिशो ह्युपागा-
यन् दिशामेवं सलोकतां जयतीति ॥४॥ ते य एवमे^५ मुख्याः
प्राणा एत एवोद्गातारश्चोऽपगातारश्च । इमे ह त्रय उद्गातार इम
उ चत्वार उपगातारः ॥५॥ तस्माद्दु चतुर एवोऽपगातृन्^७ कुर्वीत ।
तस्मादुहोऽपगातृन् प्रत्यभिमुखोद्दिशस्स्थश्रोत्रं मे माहिसिष्टेति ॥६॥
स यस्स रस आसीद्य एवायम्पवत एष एव स रसः ॥७॥ स यथा
मध्वालोपमद्यादिति ह स्माह सुचित्तदशैलन एवमेतस्य रसस्यात्मान-
म्पूरयेत् । स एवोद्गातात्मानं च यजमानं चामृतत्वं गमयतीति ॥८॥ १।२२

षष्ठेऽनुवाके तृतीयः खण्डः । षष्ठोऽनुवाकस्समाप्तः ।

—:०:—

११-त्ता ।

१-मधुधाने । २ 'स' अधिक पठो । ३-यत् । ४-शम् । ५ एवम् ।
६ व । ७ उद्गा-तृन् । ८-तृन् ।

अयमेवेदमग्र आकाश आसीत् । स उ एवाप्येतर्हि ॥१॥
 स यस्स आकाशो वागेन्न सा । तस्मादाकाशाद्वाग्वदति ॥२॥
 तामेतां वाचम्प्रजापतिरभ्यपीळयत् । तस्या अभिपीळितायै रसः^२
 प्राणोदत्^३ । त एवेमे लोका अभवन् ॥३॥ स इमां लोकानभ्यपीळयत् ।
 तेषामभिपीळितानां रसः प्राणोदत् । ता एवैता देवता अभवन्नाग्नि-
 र्वायुरसावादिस् इति ॥४॥ स एता देवता अभ्यपीळयत् ।
 तासामभिपीळितानां रसः प्राणोदत् । सा त्रयीविद्याभवत् ॥५॥
 स त्रयीं विद्यामभ्यपीळयत् । तस्या अभिपीळितायै रसः प्राणोदत् ।
 ता एवैता व्याहृतयो ऽभवन् भूर्भुवस्स्वरिति ॥६॥ स एता व्या-
 हृतीरभ्यपीळयत् । तासामभिपीळितानां रसः प्राणोदत् । तदेतद-
 क्षरमभवदोमिति यदेतद् ॥७॥ स एतदक्षरमभ्यपीळयत् । तस्या-
 ऽभिपीळितस्य रसः प्राणोदत् ॥८॥ १।२३॥

सप्तमेषुवाके प्रथमः खण्डः ।

तदक्षरदेव । यदक्षरदेव तस्मादक्षरम् ॥१॥ यद्वैवाक्षरं ना-
 क्षीयत् तस्मादक्षरम् । अक्षरं ह वै नामैतत् । तदक्षरमिति

१. एता वा । २. रसम् । ३. 'स त्रयीम्.....रसम् (!)
 प्राणोदत्' अधिक है । ४. नास्ति । ५-आ । ६ नास्ति । स त्रयीम्
प्राणोदत् । ७-आ ।

१-वा ।

परोक्षमाचक्षते ॥२॥ तद्वैतदेक ओमिति गायन्ति । तत्तथा न
 गायेत् । ईश्वरो हैनदेतेन रसेनान्तर्धातोः^२ । अथो^३ द्वे^४ इवैवम्भवत्
 ओमिति । ओ इत्यु हैके गायन्ति । तदु^५ ह तन्न^६ गीतम् । नैव^७
 तथा गायेत् । ओं^८ इत्येव गायेत् । तदेनदेतेन रसेन सन्दधाति ॥३॥
 तदेतं रसं तर्पयति । रसस्तृप्तोऽक्षरं^९ तर्पयति । अक्षरं^{१०} तृप्तं व्याहृती
 स्तर्पयति । व्याहृतयस्तृप्तावेदास्तर्पयन्ति । वेदास्तृप्ता देवतास्तर्प-
 यन्ति । देवतास्तृप्ता लोकास्तर्पयन्ति । लोकास्तृप्ता अक्षरं^{११} तर्पयन्ति ।
 अक्षरं^{१२} तृप्तं वाचं तर्पयति^{१३} । वाक् तृप्ताकाशं तर्पयति । आकाशस्तृप्तः
 प्रजास्तर्पयति । तृप्यति प्रजया पशुभिर्य एतदेवं वेदाथो यस्यैवं
 विद्वानुद्गायति^{१४} ॥४॥ १।२४॥

सप्तमेऽनुवाके द्वितीयः खण्डः । सप्तमोऽनुवाकस्समाप्तः ।

—:०:—

अयमेवेदमग्र आकाश आसीत् स उ एवाप्येतर्हि ॥१॥ स
 यस्स आकाश आदित्य एव स । एतस्मिन् (ह्य) उदिते^२ सर्व-
 मिदमाकाशते ॥२॥ तस्य मर्षामृतयोर्वै^३ तीराणि^४ समुद्र एव ।

२ या-। ३-ये । ४ द्वै, द्वे । ५ नास्ति । ६ नि-। ७ ने एव ।
 ८ ओ । ९ अक्षरंवाचं तर्पयति यह पाठ नहीं । १०-यन्ति ।
 ११ वार्कस् । १२ गायति ।

१ दव् (!) । २ सुदिते । ३ वैर्व । ४ तरणी ।

तद्यत्समुद्रेण^१ परिगृहीतं तन्मृत्योराप्तमथ यत्पर तदमृतम् ॥३॥ स
 यो ह स समुद्रो य एवायम्भवत् एष एव स समुद्रः । एतं हि
 सद्रवन्तं^६ सर्वाणि भूतान्यनुसंभवन्ति ॥४॥ तस्य द्यावापृथिवी एव
 रोधसी । अथ यथा नद्यां^{१०} कंसानि^{१०} वा प्रहीणानि^{११} स्युस्सरांसि वै-
 व मस्यायम्पार्थिवस्समुद्रः ॥५॥ स एष पार एव समुद्रस्योदेति ।
 स उद्यन्नेव वायोः पृष्ठ आक्रमते । सोऽमृतादेवोदेति । अमृतमनु-
 संचरति । अमृते^{१२} प्रतिष्ठितः ॥६॥ तस्येतत् त्रिष्टूपा^{१२} मृत्योरनाप्तं शुक्लं
 कृष्णाम्पुरुषः ॥७॥ तद्यच्छुक्लं तद्वाचोरूपमृचोऽग्नेर्मृत्योः । सा या
 सा वागृक् सा । अथ योऽग्निर्मृत्युस्सः ॥८॥ अथ यत्कृष्णं तदपां
 रूपमन्नस्य मनसोयजुषः । तद्यास्ता आपोऽन्नं तत् । अथ यन्मनो
 यजुष्टत् ॥९॥ अथ यः पुरुषस्स प्राणस्तत्साम तद्ब्रह्म तदमृतम् ।
 स यः प्राणस्तत्साम । अथ यद्ब्रह्म तदमृतम् ॥१०॥ १।२५॥

अष्टमेऽनुवाके प्रथमः खण्डः ।

अथाध्यात्मम् । इदमेव चतुस्त्रिष्टुक्लं कृष्णाम्पुरुषः ॥१॥
 तद्यच्छुक्लं तद्वाचो रूपमृचोऽग्नेर्मृत्योः । सा या सा वागृक् सा ।

५-गृह-१-६-द्रे-१-७ अनुद्र-१-८-या । ९-याम् । १० कसा-
 नि । ११ प्रहीणहीनि । १२ अधिक है 'सस्' स । १३ प्रतिष्ठितः ।
 १४ वाक्, वाग् । १५ मृत । १६ अन्नमस्य । १७ नास्ति, तद्यः-यः
 पुरुषस् ॥ १ मृत । २ अधिक 'जसा' ।

अथ योऽभिर्मृत्युस्तः ॥२॥ अथ यत्कृष्णं तदपां रूपमन्नस्य मनसो
 यजुषः^३ । तद्यास्ता आपोऽन्नं तत् । अथ यन्मनो यजुष्टत् ॥३॥
 अथ यः^४ पुरुषस्त प्राणस्तत्साम तद्ब्रह्म तदमृतम् । स यः प्राण-
 स्तत्साम । अथ यद्ब्रह्म तदमृतम् ॥४॥ सैऽषोऽत्क्रान्तिर्ब्रह्मणः ।
 अथातः पराक्रान्तिः ॥५॥ सा या साऽऽक्रान्तिर्विद्युदेव सा । स
 यदेव विद्युतो विद्योतमानायै श्येत रूपम्भवति तद्वाचो रूपमृचो-
 ऽग्नेर्मृत्योः ॥६॥ यदेव विद्युतस्संद्रवन्सै नीलं रूपम्भवति तदपां
 रूपमन्नस्य मनसो यजुषः ॥७॥ य एवैष विद्युति पुरुषस्त प्राण-
 स्तत्साम तद्ब्रह्म तदमृतम् । स यः प्राणस्तत्साम । अथ यद्ब्रह्म
 तदमृतम् ॥८॥ १।२६॥

अष्टमोऽनुवाके द्वितीयः खण्डः ।

स हैषोऽमृतेन परिवृढो मृत्युमध्यास्तेऽन्नं कृत्वा ॥१॥ अथै-
 ष एव पुरुषो योऽयं चतुर्षि^१ । य आदित्ये^२ सोऽतिपुरुषः । यो
 विद्युति स परमपुरुषः ॥२॥ एते ह वाच त्रयः पुरुषाः^३ । आ हास्यैते
 जायन्ते ॥३॥ स योऽयं चतुर्ष्येषोऽनुरूपो नाम । अन्वद्^४ हैष

३-षो । स्र (!) । ४-त् । ५ नास्ति । ६ अथैतं । ७-त् । ८-ये ।
 ९-आ ।

१-सी । २-यो । ३-षो, वा, -ष । ४-वज । ५ ह ।

सर्वाणि रूपाणि । तमनुरूप इत्युपासीत । अन्वञ्चि^४ हैनं^५ सर्वाणि
 रूपाणि भवन्ति ॥४॥ य आदिसे स प्रतिरूपः । प्रत्यङ् ह्येष
 सर्वाणि रूपाणि । तम्प्रतिरूप इत्युपासीत । प्रत्यञ्चि^६ हैनं^५ सर्वाणि
 रूपाणि भवन्ति ॥५॥ यो विद्युतिं स सर्वरूपः । सर्वाणि^१ हेतस्मिन्
 रूपाणि । तं^३ सर्वरूप इत्युपासीत । सर्वाणि^१ हाऽस्मिन् रूपाणि^१
 भवन्ति ॥६॥ एते ह वाच त्रयः पुरुषाः । आ हाऽस्यैते जायन्ते य
 एतदेवं वेदाथो यस्यैवं विद्वानुद्गायति ॥७॥ १।२।७॥

अष्टमेऽनुवाके तृतीयः खण्डः । अष्टमोऽनुवाकः समाप्तः ।

— : ० : —

अयमेवेदमग्र आकाश आसीत् । स उ एवाप्येतर्हि ॥१॥ स
 यस्स आकाश इन्द्र एव सः । स यस्स इन्द्र एष एव स य एष
 एव तपति । स एष सप्तरश्मिर्दृषभस्तुविष्मान् ॥२॥ तस्य वाङ्मयो
 रश्मिः प्राङ् प्रतिष्ठितः । सा या सा वागग्निस्सः । स दशधा
 भवति शतधा सहस्रधाऽयुतधा प्रयुतधा नियुतधाऽर्बुदधा^२ न्यर्बुदधा
 निखर्वधा^३ पञ्चमक्षितिर्व्योमान्तः^५ ॥ ३ ॥ स एष एतस्य रश्मिर्वा-

६-त्रयी, चङ्गी, चं । ७-हेनम् । ५-प्रत्यं । ६-अधिक हे
 'रूपाणि;' नास्ति-तं रूपाणि ।

१-नास्ति । २-अङ्- । ३-निखर्वचं । ४-ति । ५-त, स्तोम-

भूत्वा सर्वास्वासु प्रजासु प्रत्यवस्थितः । स यः कश्च वदसेतस्यैव
 रश्मिना वदति ॥४॥ अथ मनोमयो दक्षिणा^१ प्रतिष्ठितः । तद्य-
 त्तन्मनश्चन्द्रमास्सः । स दशधा भवति ॥५॥ स एष एतस्य रश्मिर्मनो
 भूत्वा सर्वास्वासु प्रजासु प्रत्यवस्थितः । स यः कश्च मनुत एतस्यैव
 रश्मिना मनुते ॥६॥ अथ चक्षुर्मयः^{११} प्रत्यङ् प्रतिष्ठितः^{१२} । तद्यत्तश्चक्षु-
 रादित्यस्सः । स दशधा भवति ॥७॥ स एष एतस्य रश्मिश्चक्षु-
 भूत्वा सर्वास्वासु प्रजासु प्रत्यवस्थितः । स यः कश्च पश्यसेतस्यैव
 रश्मिना पश्यति ॥८॥ अथ श्रोत्रमय उदङ् प्रतिष्ठितः^{१५} । तद्यत्तच्छ्रोत्रं
 दिशस्ताः । स दशधा भवति ॥९॥ स एष एतस्य रश्मिश्श्रोत्र-
 म्भूत्वा सर्वास्वासु प्रजासु प्रत्यवस्थितः । स यः कश्च शृणोसेतस्यैव
 रश्मिना शृणोति ॥१०॥ ११२८॥

नवमेऽनुवाके प्रथमः खण्डः ।

अथ प्राणमय ऊर्ध्वः^१ प्रतिष्ठितः । स यस्स प्राणो वायुस्सः ।
 स दशधा भवति ॥१॥ स एष एतस्य रश्मिः प्राणोभूत्वा सर्वास्वासु
 प्रजासु प्रत्यवस्थितः । स यः कश्च प्राणितेतस्यैव रश्मिना प्राणिति

६ पश्यति । ७ पश्यति । ८ नास्ति । ९ दक्षिणा । १० मन्वन् ।
 ११ चक्षुर्म- । १२-य । १३ वस्थितः । १४ त, नास्ति । १५ प्रत्यवस्थितः ॥

१-स्य- । २ नास्ति ।

॥२॥ अथाऽसुमयस्तिर्यङ् प्रतिष्ठितः । स ह स ईशानो नाम । स
 दशधा भवति ॥३॥ स एष एतस्य रश्मिरसुभूत्वा सर्वास्वासु प्रजासु
 प्रसवस्थितः । स यः कश्चाऽसुमानेतस्यैव रश्मिनाऽसुमान् ॥४॥
 अथाऽन्नमयोऽर्वाङ् प्रतिष्ठितः । तद्यत्तदन्नमापस्ताः । स दशधा
 भवति शतधा सहस्रधाऽयुतधा प्रयुतधा नियुतधाऽर्बुदधान्यर्बुदधा
 निखर्वधा पञ्चमत्तितिव्योमान्तः ॥५॥ स एष एतस्य रश्मिरन्नम्भूत्वा
 सर्वास्वासु प्रजासु प्रसवस्थितः । स यः कश्चाश्नायेतस्यैव रश्मिना-
 श्नाति ॥६॥ स एष सप्तरश्मिर्वृषभस्तुविष्मान् । तदेतदृचाऽभ्यनूच्यते
 यस्सप्तरश्मिर्वृषभस्तुविष्मानवासृजत्सर्तवे सप्तसिन्धून् ।
 योरौहिणमस्फुरद्वज्रबाहुर्धामारोहन्तं स जनासइंद्र इति
 ॥७॥ यस्मप्तरश्मिरिति । सप्त ह्येत आदिसस्य रश्मयः । वृषभ
 इति । एष ह्येवाऽऽसाम्प्रजानामृषभः । तुविष्मानिति । महीयैऽवा
 स्यैषा ॥८॥ अवासृजत् सर्तवे सप्तसिन्धूनि । सप्तह्येतेसिन्धवः ।

३ स्थान खाली है 'स.....ई' । ४-वन्ति । ५ 'यत्' के
 पश्चात् 'तत्तुदं नाम' पाठ है, 'तदन्नम्.....स' नहीं है । ६ अदन्नम् ।
 ७ तेदा, स्त । ८ निखर्वाचम्, निखर्वधाच । ९ वंम- । १० सामास्
 ११ नास्ति तदेतद् वृषभस्तुविष्मान् । १२ रोह- । १३-हु ।
 १४-त । १५ मद्भ्यै ।

तैरिदं सर्वं सितम् । तद्यदेतैरिदं सर्वं सितं तस्मात्सिन्धवः ॥६॥
 यो रौहिणमस्फुरद्वज्रबाहुरिति । एष (हि) रौहिणमस्फुरद्वज्रबाहुः
 ॥१०॥ ग्रामारोहन्तं स जनास इन्द्र इति । एष हीन्द्रः ॥११॥ १।२६॥

नवमेऽनुवाके द्वितीयः खण्डः ।

तद्यथा गिरिम्पन्थानस्समुदियुरिति हस्माऽऽह शाक्यायनि-
 रेवमेत आदित्यस्य रश्मय एतमादित्यं सर्वतोऽपियन्ति । स हैवं
 विद्वानोमिताददान एतैरेतस्य रश्मिभिरेतमादित्यं सर्वतोऽप्येति ॥१॥
 तदेतत् सर्वतो द्वारमनिषेधं साम । अन्यतोद्वारं हैऽनदेक एवा-
 ऽभ्रज्जमुपासते । अतोऽन्यथाविद्युः ॥२॥ अथ य एतदेवं वेद स
 एवैतत् सर्वतो द्वारमनिषेधं सामवेद ॥३॥ सा एषा विद्युत् । (यद्)
 एतन्मण्डलं समन्तम्परिपतति तत्साम । अथ यत्परमतिभाति स
 पुण्यकृत्यायै रसः । तमभ्यतिमुच्यते ॥४॥ तदेतद्भ्रातृव्यं साम ।
 न ह वा इन्द्रः कंचन भ्रातृव्यम्पश्यते । स यथेन्द्रो न कंचन
 भ्रातृव्यम्पश्यत एवमेव न कंचन भ्रातृव्यम्पश्यते य एतदेवं
 वेदाथो यस्यैवं विद्वानुद्रायति ॥५॥ १।३०॥

नवमेऽनुवाके तृतीयः खण्डः । नवमोऽनुवाकस्समाप्तः ।

—:०:—

१६ स्थान खाली है-हन्-वाला,-हत्तं ।

१ एवम् । २ तिप्रतिवियन्ति । ३ अनुष्- । ४ नास्ति । ५ नत, त ।
 ६ नास्ति । ७ एताव, एता । ८ गम् । ९ एतो । १० विदुः । ११-तृवि ॥

अयमेवेदमग्र आकाश आसीत् । स उ एवाऽप्येतर्हि । स
यस्स आकाश इन्द्र एव सः । स यस्स इन्द्रस्सामैव तत् ॥१॥ तस्यै-
तस्य साम्न इयमेव प्राचीदिग्धिङ्कार इयम्प्रस्ताव इयमादिरियमुद्री-
थोऽसौ प्रतिहारोऽन्तरिक्षमुपद्रव इयमेवनिधनम् ॥२॥ तदेतत्सप्त-
विधं साम । स य एवमेतत्सप्तविधं साम वेद यत्किञ्च प्राच्यांदिशि
या देवता ये मनुष्या ये पशवो यदन्नाद्यं तत्सर्वं हिङ्कारेणामोति
॥३॥ अथ यदक्षिणायां दिशि तत्सर्वं प्रस्तावेनामोति ॥४॥ अथ
यत्पृथीच्यां दिशि तत्सर्वमादिनामोति ॥५॥ अथ यदुदीच्यांदिशि
तत्सर्वमुद्रीथेनामोति ॥६॥ अथ यदमुष्यां दिशि तत्सर्वम्प्रतिहारेणा-
मोति ॥७॥ अथ यदन्तरिक्षे तत्सर्वमुपद्रवेणामोति ॥८॥ अथ
यदस्यां दिशि या देवता ये मनुष्या ये पशवो यदन्नाद्यं तत्सर्वं
निधनेनामोति ॥९॥ सर्वं हैवाऽस्याऽऽप्तम्भवति सर्वं जितं न हा-
ऽस्य कश्चन कामोऽनाप्तो भवति य एवं वेद ॥१०॥ स यद्वकिञ्च
किञ्चैवं विद्वानेषु लोकेषु कुरुते स्वस्य हैव तत्स्वतः कुरुते । तदे-
तद्वचाऽभ्यनूच्यते ॥११॥ १।११॥

दशमेऽनुवाके प्रथमः खण्डः ।

१ दीर् । २-ईच् । ३ एव । ४ 'मनुष्या' अधिक है । ५-वा ।
६ यहां चौथा श्लोक (मन्त्र) अधिक है और साथ ही प्रतिहारेण
'प्रस्तावेन' के स्थान में । ७ 'अन्याद्य' अधिक है । ८ 'दक्षिणायांदिशि' ।

यद् द्याव इन्द्र ते शतं शतम्भूमीरुत स्युः । नत्वा
 वज्रिन्सहस्रं सूर्या अनु न जातमष्ट रोदसी इति ॥१॥
 यद् द्याव इन्द्र ते शतं शतम्भूमीरुतस्युरिति । यच्छतं द्यावस्स्युश्शत-
 म्भूम्यस्ताभ्य एष एवाऽऽकाशो ज्यायान् ॥२॥ नत्वा वज्रिन्सहस्रं
 सूर्या अन्विति । न ह्येतं सहस्रं च न सूर्या अनु ॥३॥ न जातमष्ट
 रोदसी इति । न ह्येतं जातं रोदन्ति । इमे ह वाव रोदसीताभ्या-
 मेष एवाकाशो ज्यायान् । एतस्मिन् ह्येव ते अन्तः ॥४॥ स यस्स
 आकाश इन्द्र एव सः । स यस्स इन्द्र एष एव स य एष तपति ॥५॥
 स एषोऽभ्राणयतिमुच्यमान एति । तद्यथैषोऽभ्राणयतिमुच्यमान
 एषेवमेव स सर्वस्मात्पाप्मनोऽतिमुच्यमान इति य एवं वेदाथो
 यस्यैवं विद्वानुद्गायति ॥६॥ १।३२॥

दशमेऽनुवाके द्वितीयः क्षण्डः । दशमोऽनुवाकस्समाप्तः ।

—:०:—

त्रिवृत्साम चतुष्पाद । ब्रह्म तृतीयमिन्द्रस्तृतीयम्प्राजापति-
 स्तृतीयमन्नमेव चतुर्थः पादः ॥१॥ तद्यद्वै ब्रह्म स प्राणोऽथ य इन्द्र-

१ नास्ति । २-यां । ३ नास्ति । ४-यन् । ५ नास्ति, स-स ।

६ स्थान खाली 'य' तक । ७-मानय, -यमानश्च ॥

१त्रिवृत्-

स्सा वागथ यः प्रजापतिस्तन्मनोऽन्नमेव चतुर्थः पादः ॥२॥ मन
 एव हिङ्गारो वाक्प्रस्तावः प्राण उद्गीथोऽन्नमेव चतुर्थः पादः ॥३॥
 करोत्येव वाचा जयति प्राणेन गमयाति मनसा । तदेतन्निरुद्धं यन्मनः ।
 तेन यत्र कामयते तदात्मानं च यजमानं च दधाति ॥४॥ अथाधि-
 दैवतम् । चन्द्रमा एव हिङ्गारोऽग्निः प्रस्ताव आदित्य उद्गीथ आप
 एव चतुर्थः पादः । तद्दि प्रसङ्गमक्षम् ॥५॥ ता वा एता देवता
 अमावास्यां रात्रिं संयन्ति । चन्द्रमा अमावास्यां रात्रिमादित्यम्प्र-
 विशत्यादित्योऽग्निम् ॥ ६ ॥ तद्यत्संयन्ति तस्मात्साम । स ह वै
 सामवित्स साम वेद य एवं वेद ॥७॥ तासां वा एतासां देवतानामे-
 कैकैव देवता साम भवति ॥८॥ एष एवादित्यस्त्रिष्टुष्पाद्रश्मयो
 मण्डलम्पुरुषः । रश्मय एव हिङ्गारः । तस्मात्ते प्रथमत एवोद्यत-
 स्तायन्ते । मण्डलम्प्रस्तावः पुरुष उद्गीथो या एता आपोऽन्तस्स
 एव चतुर्थः पादः ॥९॥ एवमेव चन्द्रमसो रश्मयो मण्डलम्पुरुषः ।
 रश्मय एव हिङ्गारो मण्डलम्प्रस्तावः पुरुष उद्गीथो या एता आपोऽन्त
 स्स एव चतुर्थः पादः ॥१०॥ चत्वार्यन्यानि चत्वार्यन्यानि । तान्यष्टौ ।
 अष्टाक्षरा गायत्री गायत्रं साम ब्रह्म उ गायत्री । तदु ब्रह्माऽभि-
 सम्पद्यते । अष्टाशफाः पशवस्तेनोपशव्यम् ॥११॥ १।३३ ॥

एकादशोऽनुवाके प्रथमः खण्डः ।

अथाऽध्यात्मम् । इदमेव चक्षुस्त्रिवृच्चतुष्पाच्छुक्लं कृष्णम्पुरुषः ।
 शुक्लमेव हिङ्गारः कृष्णाम्प्रस्तावः पुरुष उद्गीथो या इमा अपोऽन्तस्स
 एव चतुर्थः पादः ॥ १ ॥ इदमादिसस्यायनमिदं चन्द्रमसः । चत्वारिमानि
 चत्वारिमानि । तान्यष्टौ । अष्टाक्षरा गायत्री । गायत्रं साम ब्रह्म उ गा-
 यत्री । तदु ब्रह्माभिसम्पद्यते^१ । अष्टाशफाः पञ्चवस्तेनो पञ्चव्यम् ॥ २ ॥
 स योऽयम्पवते^२ स एष एव प्रजापतिः । तद्वेव साम । तस्यायं देवो
 योऽयं चक्षुषि पुरुषः । स एष आहुतिमतिमसोत्क्रान्तः ॥ ३ ॥ अथ
 यावेतौ चन्द्रमाश्चादिसश्च यावेतावप्सु दृश्येते^३ एतावेतयोर्देवौ ॥ ४ ॥
 यद् वा इदमाहुर्देवानां देवा इत्येते ह ते । त एत आहुतिमतिमसो-
 त्क्रान्ताः ॥ ५ ॥ तद् पृथुर्वैन्यो दिव्यान्त्रासान्पञ्च^४ येभिर्वात
 इषितः प्रवाति ये ददन्ते पञ्च दिशस्समीचीः । य
 आहुतीरत्यमन्यन्त^५ देवा अपां नेतारः कतमे त आ-
 सन्निति ॥ ६ ॥ ते ह प्रत्यूक्षु रिमामेषाम्पृथिवीं वस्त एको-
 ऽन्तरिक्षम्पर्येको बभूव । दिवमेको ददते यो विधर्ता^६
 विश्वा आशाः प्रतिरक्षन्त्यन्य^७ इति ॥ ७ ॥ इमामेषाम्पृथिवीं

१-पाद-। २ नास्ति । ३-यते । ४ एता उ । ५ तान् । ६ एभिर् ।
 ७ दशस्, दश । ८-ईत् । ९ इत्यम्-। १० पराङ् । ११-ईत् । १२-वत्ता ।
 १३ अन्य ।

वस्त एक इत्यग्निर्हसः ॥८॥ अन्तरिक्षम्पर्येको बभूवेति वायुर्हसः ॥९॥

दिवमेको ददते यो विधर्ते^{१४}ऽस्यादित्यो ह सः ॥१०॥ विश्वा आशाः
प्रतिरक्षन्त्यन्य इति । एता ह वै देवता विश्वा आशाः प्रतिरक्षन्ति
चन्द्रमा नक्षत्राणीति । ता एतास्सामैव सस्यो व्यूढोऽन्नाद्याय ॥११॥

१ । ३४ ॥

एकादशोऽनुवाके द्वितीयः खण्डः । एकादशोऽनुवाकस्समाप्तः ।

—:०:—

अथैतत्साम । तदाहुस्संवत्सर एव सामेति ॥१॥ तस्य वसन्त
एव हिङ्गारः । तस्मात्पशवो वसन्ता हिङ्गुरिकतस्समुदायन्ति ॥२॥
ग्रीष्मः प्रस्तावः । अनिरुक्तो वै प्रस्तावोऽनिरुक्त ऋतूनां ग्रीष्मः
॥३॥ वर्षा उद्गीथः । उदिव वै वर्षं गायति ॥४॥ शरत्प्रतिहारः ।
शरादि ह खलु वै भूयिष्ठा ओषधयः पच्यन्ते ॥५॥ हेमन्तो निधनम् ।
निधनकृता इव वै हेमन्प्रजा भवन्ति ॥६॥ तावेतावन्तौ संधत्तः ।
एतदन्वनन्तस्संवत्सरः^१ । तस्यैतावन्तौ यद्वेमन्तश्च वसन्तश्च । एतदनु
ग्रामस्यान्तौ समेतः । एतदनु निष्कस्यान्तौ समेतः । एतदन्वहिर्मो-
गान्पर्याहस्यशये ॥७॥ तद्यथा ह वै निष्कस्समन्तं ग्रीवा^५ अभिपर्यक्त^६

१४ विधर्ते, विधत्ते । १५ अन्व-, 'न्व'-याया ।

१-करिक्तस्, -करिक्तस् । २ नास्ति । ३-तत् । ४ सबत्- ।

५ ग्री- । ६-यत्तः ।

एवमनन्तं साम । स य एवमेतदनन्तं साम वेदानन्ततामेव जयति
॥८॥ १।३५॥

द्वादशेऽनुवाके प्रथमः खण्डः ।

अथैतत्पर्जन्ये साम । तस्य पुरोवात एव हिङ्गारः । अथ य-
दभ्राणि सम्प्लावयति स प्रस्तावः । अथ यत् स्तनयति स उद्गीथः ।
अथ यद्विद्योतते स प्रतिहारः । अथ यद्वर्षति तन्निधनम् ॥१॥
तदेतत्पर्जन्ये साम । स य एवमेतत्पर्जन्ये साम वेदवर्षुको^१ हास्मै
पर्जन्यो भवति ॥२॥ अथैतत् पुरुषे साम । तस्यायमेव हिङ्गारो-
ऽयम्प्रस्तावोऽयमुद्गीथोऽयम्प्रतिहार इदं निधनम् ॥३॥ तदेतत्पुरुषे
साम । स य एवमेतत्पुरुषे साम वेदोऽऽर्ध्व एव प्रजया^२ पशुभिरा-
रोहन्नेति ॥४॥ य उ एनत्प्रत्यग्वेद ये प्रत्यञ्चो लोकास्ताञ्जयति ।
तस्यायमेव हिङ्गारोऽयम्प्रस्तावोऽयमुद्गीथोऽयम्प्रतिहार इदं निधनम् ।
ये प्रत्यञ्चो लोकास्ताञ्जयति ॥५॥ य उ एनत्तिर्यग्वेद ये तिर्यञ्चो^३
लोकास्ताञ्जयति । तस्य लोमैव हिङ्गारस्त्वक्प्रस्तावो मांसमुद्गीथोऽस्थि
प्रतिहारो मज्जानिधनम् ॥६॥ तस्य त्रीण्याविर्गायति प्रस्तावम्प्रतिहारं^४

७ ऽनन्ताम् ।

१-षक्-। २-घो । ३ प्रजा । ४-नं । ५ नास्ति । ६ एन, एनं ।

७-युच्-, 'म' अधिक है । ८ लाक्-। ९ हिंकारं ॥

निधनम् । तस्मात्पुरुषस्य त्रीण्यस्थीन्याविर्दन्ताश्च द्रव्याश्चनखाः ।
 ये तिर्यञ्चो लोकास्ताञ्जयति ॥७॥ य उ एनत्संयग्वेद ये सम्यञ्चो
 लोकास्ताञ्जयति । तस्य मन एव हिङ्कारो वाक्प्रस्तावः प्राण उद्गीथ-
 श्चक्षुः प्रतिहार श्रोत्रं निधनम् । ये सम्यञ्चो लोकास्ताञ्जति ॥८॥
 अथैतद्देवतासु साम । तस्य वायुरेव हिङ्कारोऽग्निः प्रस्ताव आदिश
 उद्गीथश्चन्द्रमा प्रतिहारो दिश एव निधनम् ॥९॥ तदेतद्देवतासु साम ।
 स य एनमेतद्देवतासु साम वेद देवतानामेव सलोकतां जयति ॥१०॥

१।३६॥

छादशेऽनुवाके द्वितीयः खण्डः ।

तस्यैतास्तिस्त्रागा आग्नेय्ये^१कैन्द्र^२थैका वैश्वदेव्येका ॥१॥ सा या
 मन्द्रा साऽऽग्नेयी^३ । तथा प्रातस्सवनस्योद्देयम् । आग्नेयं वै प्रातस्स-
 वनमाग्नेयोऽयं लोकः । स्वयाऽऽगया प्रातस्सवनस्योद्गायत्यृधोतीमं
 लोकम् ॥२॥ अथ या घोषिण्युपन्दिमती^४ सैऽऽन्दी । तथा माध्य-
 न्दिनस्य^५ सवनस्योद्देयम् । ऐन्द्रं वै माध्यन्दिनं सवनं मैन्द्रोऽसौ
 लोकः । स्वयाऽऽगया माध्यन्दिनस्य सवनस्योद्गायत्यृधोसमुं लोकम्
 ॥३॥ अथ या^६ वीङ्ख्यान्निव प्रथयन्निव गायति सा वैश्वदेवी । तथा

१ ऐक- । २ ऽऽन्द्र । ३ नास्ति, सा इ । ४ मैनधी ।
 ५ नास्ति अथ लोकम् । ६-अन्वी-के लिखे स्थान खाली है ।
 ७-७ दिन । ८-तिष्मं । ९ या, 'घोषिण्यु', भी लिखा है ।

तृतीयसवनस्योद्वेयम् । वैश्वदेवं वै तृतीयसवनं वैश्वदेवोऽयमन्तरा-
 लोकः । स्वयाऽऽगया तृतीयसवनस्योद्गायत्यु^{१०}धोतीममन्तरालोकम्
 ॥४॥ अथो उच्चा खल्वाहु रेकैवाऽऽगयोद्वेयं यदेवास्यमध्यं वाच
 इति । तच्चया वै वाचा व्यायच्छमान उद्गायति तदेवास्यमध्यं वाचः ।
^{११}तया वा एतथा वाचा सर्वा वाच उपगच्छति । अव्यासिक्तामेकस्थां
 श्रियमृध्नोति य एवं वेद ॥५॥ अथ या क्रौञ्चा सा बार्हस्पत्या । स
 यो ब्रह्मवर्चसकामस्स्यात्स^{१२} तयोद्गायेत् । तद्ब्रह्म वै बृहस्पतिः । तद्वै
 ब्रह्मवर्चसमृध्नोति तथा ह ब्रह्मवर्चसीभवति ॥६॥ अथ ह चैकिता-
 नेय एकस्यैव साम्न आगां गायति गायत्रस्यैव । तदनवानं गेयम्^{१३} ।
^{१४}तत् साम्न एवा प्रतिहारादनवानं गेयम् । तत्प्राणो वै गायत्रम् ।
 तद्वै प्राणमृध्नोति । तथा ह सर्वमायुरेति ॥७॥ १।३७॥

द्वादशोऽनुवाके तृतीयः खण्डः ।

अथ ह ब्रह्मदत्तं^१ चैकितानेयमुद्गायन्तं कुरव उपोदुरुज्जहिहि^२
 साम दालभ्येऽति ॥१॥ स होऽपोद्यमानो नितरां जगौ । तं होचुः
 किमुपोद्यमानो नितरामगासीरिति ॥२॥ स होवाचेदं वै लोमेऽस्ते-

१०-यन्ति । ११ ताया । १२ स, नास्ति । १३ 'वै गायत्रम्'
 नीचे से ले के अधिक लिखा है । १४ 'साम्नस्' अधिक है ॥

१ तश् । २ उज्जिहि । ३ सोमे ।

तदेवैतत्प्रत्युपश्रमः^४ । तस्मादुये न एतदुपावादिषु^५लोमशानीष्व तेषां
 श्मशानानि भवितारः । अथ वयमुदेव गातारस्म इति ॥३॥ अथ
 ह राजा जैवलिंगलूनसमार्त्ताकायणं शामूल पर्णाभ्यामुत्थितम्पत्र-
 च्छर्चाऽऽगाता^६ शालावत्या ३ साम्ना ३ इति ॥४॥ तैव राजन्नृचेति
 होवाच न साम्नेऽति । तद्यूयं तर्हि सर्व एव पणाय्या भविष्यथ य
 एवं विद्वांसोऽगायतेति ॥५॥ अथ यद्वाऽवक्ष्ये च साम्ना चाऽऽगामे-^{१०}
 ति धीतेन वै तद्या तयाम्नाऽमलाकाण्डेनाऽऽगतेऽति हैनास्तदवक्ष्यत् ।
 तद्ध तदुवाच स्वरेण चैव हिङ्कारेण चाऽऽगामेति ॥६॥ १।३८॥

द्वादशोऽनुवाके चतुर्थः खण्डः ।

अथ ह सखाधिवाकश्चैत्ररथिस्सययज्ञम्पौलुषितमुवाच प्राचीन-
 योगेति मम चैद्वै त्वं साम विद्वान् साम्नाऽऽत्विज्यं करिष्यसि नैव
 तर्हि पुनर्दीक्षामभिध्यातासीति । मुहुर्दीक्षी^२ ह्यसं^३ ॥१॥ स होवाच
 यो वै साम्नाश्श्रियं विद्वान्साम्नाऽऽत्विज्यं करोति श्रीमानेव भवति ।
 मनो वाव साम्नाश्श्रीरिति ॥२॥ यो वै साम्नः प्रतिष्ठां विद्वान्साम्ना-
 ऽऽत्विज्यं करोति प्रखेव तिष्ठति । वाग्वाव साम्नः प्रतिष्ठेति ॥३॥

४-उपाश- ५-बुद्ध । ६-तार । ७ गलूनसम, शुद्धिनसम ।
 ८-त । ९ पणाय्या । १० च आगमे ॥

१ मच । २-क्षी । ३ आ ।

यो वै साम्नस्सुवर्णी विद्वान् साम्नाऽऽर्विज्यं करोत्यध्यस्य गृहे
 सुवर्णी गम्यते । प्राणो वाव साम्नस्सुवर्णमिति ॥४॥ यो वै साम्नो
 ऽपचितिं विद्वान्साम्नाऽऽर्विज्यं करोत्यपचितिमानेव भवति । चक्षु-
 र्वाव साम्नोऽपचितिरिति ॥५॥ यो वै साम्नश्श्रुतिं विद्वान्साम्ना-
 ऽऽर्विज्यं करोति श्रुतिमानेव भवति । श्रोत्रं वाव साम्नश्श्रुतिरिति
 ॥६॥ १।३-६॥

द्वादशोऽनुवाके पञ्चमः खण्डः । द्वादशोऽनुवाकस्समाप्तः ।

—:०:—

चत्वारिवाक्परिमिता पदानि तानि विदुर्ब्राह्मणा
 ये मनीषिणः । गुहा^१ त्रीणि^२ निहिता^३ नैऽङ्गयन्ति^४
 तुरीयं^५ वाचो मनुष्या वदन्तीति ॥ १ ॥

वागेव साम । वाचा हि साम गायति । वागेवोऽक्थम् । वाचा
 गुक्थं शंसति । वागेव यजुः । वाचा हि यजुरनुवर्तते ॥२॥ तद्य-
 त्किंचाऽर्वाचीनम्ब्रह्मणस्तद्वागेव सर्वम् । अथ यदन्यत्र ब्रह्मोपदिश्यते ।
 नैव हि तेनाऽऽर्विज्यं करोति । परोक्षेणैव तु कृतम्भवति ॥३॥

४-हो ।

१-हानि । २-हितानी । ३ नास्ति । ४-क्-न । ५-वाचं । ६ ने ।

७ नास्ति ।

तस्या एतस्यै वाचो मनः पादश्चक्षुः^९ पादश्च्रोत्रम्पादो वागेव चतुर्थः
 पादः^१ ॥४॥ तद्यद्वै मनसा ध्यायति तद्वाचा वदति । यच्चक्षुषा पश्यति
 तद्वाचा वदति । यच्छ्रोत्रेण श्रुणोति^{१०} तद्वाचा वदति ॥५॥ तद्यदे-
 तत्सर्वं वाचमेवाऽभिसमयति^{११} तस्माद्वागेव साम । स ह वै सामवित्स
 साम वेद य एवं वेद ॥६॥ तस्या एतस्यै वाचः प्राणा^{१२} एवाऽसुः ।
 एषु^{१३} हीदं सर्वमसूतेति ॥७॥ १।४०॥

त्रयोदशोऽनुवाके प्रथमः खण्डः ।

तेन हैतेनाऽसुना देवा जीवन्ति पितरो जीवन्ति मनुष्या जी-
 वन्ति पशवो जीवन्ति गन्धर्वाप्सरसो जीवन्ति सर्वमिदं जीवति ॥१॥
 तदाहुर्न^२दसुनेदं^३ सर्वं जीवति कस्सात्मनोऽसुरिति । प्राण इति ब्रूयात् ।
 प्राणो ह वाव सात्मनोऽसुः ॥२॥ स एष प्राणो वाचि प्रतिष्ठितो वागु
 प्राणो प्रतिष्ठिता । तावेतावेवमन्योऽन्यस्मिन्प्रतिष्ठितौ । प्रतिष्ठितौ
 य एवं वेद ॥३॥ तदेतद्वचाऽभ्यनूच्यते—

८ 'चतुर्थः' अधिक है । ९ स्वाद् । १० श्रुणोति । ११ ऽहिसम्-
 १२-ण । १३ 'असूते' के परे 'एषु हीदं सर्वं सूतेऽति' सब में
 लिखा है (नास्ति 'ति) ॥

१-न्तीऽति । २ यदा । ३ येने । ४ 'इदं' अधिक है । ५-ये ।
 ६ मन्यस्- ७ प्रतिष्ठितः ।

अदितिर्द्यौरदितिरन्तरिक्षमदितिर्माता स पिता
स पुत्रः । विश्वे देवा अदितिः पञ्चजना अदिति-
र्जातमदितिर्जनित्वम् ॥ इति ॥४॥

अदितिर्द्यौरदितिरन्तरिक्षमिति । एषा वै द्यौरेषा^{११}न्तरिक्षम्
॥५॥ अदितिर्माता स पिता स पुत्र इति । एषा वै मातैषा^{१२} पितैषा
पुत्रः ॥६॥ विश्वेदेवा अदितिः पञ्चजना इति । येदेवा असुरेभ्यः
पूर्वे पञ्चजना आसन् य एवासावादित्ये पुरुषो यश्चन्द्रमसि यो
विद्युति योऽप्सु योऽयमक्षन्तरेष एव ते । तदेवैव ॥७॥ अदिति-
र्जातमदितिर्जनित्वमिति । एषा ह्येव जातमेषा जनित्वम् ॥८॥ १।४१॥

त्रयोदशोऽनुवाके द्वितीयः खण्डः । त्रयोदशोऽनुवाकस्तमाप्तः ।

—:०:—

आरुणिर्ह वासिष्ठं चैकितानेयम्ब्रह्मचर्यमुपेयाय । तं होत्राचा-
ऽऽजानासि सौम्य गौतम यदिदं वयं चैकितानेयास्सामैवोपास्महे ।
कां त्वं देवतामुपास्स इति । सामैव भगवन्त इति होत्राचः ॥१॥
ते ह पप्रच्छ यदशौ तद्रेत्या ३ इति । ज्योतिर्वाप्ततत्तस्य साम्नो यद्वयं

८-रीक्स-। ६ नास्ति, अदितिर्माता.....अदितिरन्तरिक्षम् ।

१०-चै । ११-यो । १२-वैर् । १३-यम् । १४ इतिर्, इति ॥

१ (वाचा) आज । २ यं । ३-माह-इति । ४-स नहीं । ५-वत । ६ ता ।

सामोऽपास्मह इति^१ ॥२॥ यत्पृथिव्यां तद्वेत्या^२ इति । प्रतिष्ठा वा
 एषा तस्य साम्नो यद्वयं सामोपास्मह इति ॥३॥ यदप्सु तद्वेत्या^३
 इति । शान्तिर्वा एषा तस्य साम्नो यद्वयं सामोपास्मह इति ॥४॥
^४यदन्तरिक्षे तद्वेत्या^४ इति । आत्मा वा एष तस्य साम्नो यद्वयं
 सामोपास्मह इति ॥५॥ यद्रायौ तद्वेत्या^५ इति । श्रीर्वा एषा तस्य
 साम्नो यद्वयं सामोऽपास्मह इति ॥६॥ यदिक्षु तद्वेत्या^६ इति ।
 व्याप्तिर्वा एषा तस्य साम्नो यद्वयं सामोपास्मह इति^७ ॥७॥ यदिवि
 तद्वेत्या^८ इति । विभूतिर्वा एषा तस्य साम्नो यद् वयं सामोपा-
^९स्मह इति ॥८॥ १।४२॥

चतुर्विंशोऽनुवाके प्रथमः खण्डः ।

यदादिसे तद्वेत्या^१ इति । तेजो वा एतत्तस्य साम्नो यद्वयं
 सामोपास्मह इति ॥१॥ यच्चन्द्रमसि तद्वेत्या^२ इति । भा वा एषा^३
 तस्य साम्नो यद्वयं सामोपास्मह इति ॥२॥ यन्नक्षत्रेषु तद्वेत्या^४
 इति । प्रज्ञा वा एषा तस्य साम्नो यद्वयं सामोपास्मह इति ॥३॥
 यदग्ने तद्वेत्या^५ इति । रेतो वा एतत्तस्य साम्नो यद्वयं सामोपास्मह

७ हाशिया पर लिखा है । ८ एतस्य । ९ नास्ति यद् इति ।
 १० नास्ति साम्नो ऽप । ११-हा । १२ नास्ति ष स्मह ॥
 १ नास्ति । २ प्रज्ञा । ३ नास्ति, 'एतत्' में 'लत्' ।

इति ॥४॥ यत्पशुषु तद्वेत्या३ इति । यशो वा एतत्तस्य साम्मो
यद्वयं सामोपास्मह इति ॥५॥ यद्वचि तद्वेत्या३ इति । स्तोमो^६ वा एष
तस्य साम्नो यद्वयं सामोपास्मह इति ॥६॥ यद्यजुषि तद्वेत्या३ इति ।
कर्म वा एतत्तस्य साम्नो यद्वयं सामोपास्मह इति ॥७॥ अथ किं
उपास्स इति । अक्षरमिति । कतमत्तदक्षरमिति । यत्क्षरन्नाऽक्षीयते-
ति । कतमत्तत् क्षरन्नाऽक्षीयतेति । इन्द्र इति ॥८॥ कतमस्स इन्द्र
इति । योऽक्षत्रमत इति । कतमस्स योऽक्षत्रमत इति । इयं देवतेति
होऽवाच ॥९॥ योऽयं चक्षुषि पुरुष एष इन्द्र एष प्रजापतिः । (स)
समः पृथिव्या सम आकोशन समोदिवा समस्सर्वेण भूतेन । एष
परो दिवो दीप्यते । एष एवेदं सर्वमित्युपासितव्यः ॥१०॥ स य
एवेदेवं वेद ज्योतिष्मान् प्रतिष्ठावाञ्छान्तिमानात्मवाञ्छीमान्
व्याप्तिमान् विभूतिमांस्तेजस्वी भावान् प्रज्ञावाञ्छेतस्वी यशस्वी
स्तोमवान् कर्मवानक्षरवानिन्द्रियवान् सामन्वीभवति ॥११॥ तद्वे-
तद्वचाऽभ्यनूच्यते ॥१२॥ १।४३॥

चतुर्दशमेऽनुवाके द्वितीयः खण्डः ।

४ नास्ति । ५ वो । ६ स्ते- । ७.....'स्स' के लिये स्थान छोड़ा है ।
८-इ । ९ अक्षरं । १०-क्ष । ११ इन्द्रमत । १२ सो । १३ नास्ति ।
१४-ई । १५ दिव्य- । १६-सीतव्यं । १७-वी । १८ स्तोमान् ।
१९ उद् ॥

रूपं-रूपम्प्रतिरूपोबभूव तदस्य रूपम्प्रतिचक्षणाय ।
इन्द्रोमायाभिः^१पुरु^२रूपं ईयते^३ युक्ता ह्यस्य हरयश्शतादश ॥

इति ॥१॥रूपं-रूपम्प्रतिरूपो बभूवेति । रूपं-रूपं ह्येष प्रतिरूपो बभूव

॥२॥ तदस्य रूपम्प्रतिचक्षणायेति । प्रतिचक्षणाय^३ हाऽस्यैतद्रूपम्

॥३॥ इन्द्रो मायाभिः^४ पुरु^५रूपं ईयते^६ इति । मायाभिर्ह्येष एतत्पुरु

रूपं ईयते ॥४॥ युक्ता ह्यस्य हरयश्शतादशेति । सहस्रं^५ हैत आदि-

त्यस्य रश्मयः । तेऽस्य युक्तास्तैरिदं सर्वं हरति । तद्यदेतैरिदं

सर्वं हरति तस्माद्धरयः ॥५॥रूपं रूपम्मघवा बोभवीति

मायाः कृण्वानः परितन्वं स्वाम् । त्रिर्यद्विवः

परि मुहूर्तमागात् स्वैर्मन्त्रैरनृतुपा ऋतावेति ॥६॥

रूपं-रूपम्मघवा बोभवीतीति । रूपं-रूपं^{१०} ह्येष मघवा बोभवीति

॥७॥ मायाः^{१२} कृण्वानः परि तन्वं स्वामिति । मायाभिर्ह्येष एतत्स्वां^{१३ १४ १५}

तन्वं गोपायति ॥८॥ त्रिर्यद्विवः परिमुहूर्तमागादिति^{१६} । त्रिह वा

एष एतस्य मुहूर्तस्येवाम्पृथिवीं समन्तः पर्येतीमाः प्रजासंचक्षणाः

॥९॥ स्वैर्मन्त्रैरनृतुपा^{१७} ऋतावेति । अनृतुपा^{१८} ह्येष एतद्वतावा ॥१०॥११४४

चतुर्दशेऽनुवाके तृतीयः खण्डः ।

१ पुरुर इप, पुरु^१रूपं । २ रम्यते । ३-णा । ४-पम् । ५-पम् । ६ रमीयते ।

७ नास्ति, हरयश् तेऽस्य । ८ 'म' अधिक है । ९ मुहूर्त- । १० नास्ति,

इति । ११ पुनः खिला है 'रूपंरूपं' वीचीति (!) । १२ कृशवा ।

१३-भि । १४ श । १५ नास्ति । १६ अति । १७ नृत- । १८ ऋता ॥

तद्ध पृथुर्वैन्यो दिव्यान्वासान्पप्रच्छ—

^१इन्द्रमुक्थमृचमुद्गीथमाहुर्ब्रह्म साम प्राणं व्यानम् ।

^२मनो वा चत्तुरपानमाहुश्श्रोत्रं श्रोत्रिया बहुधावदन्ती-

ति ॥१॥ ते प्रत्यूचुः—

ऋषय एते मन्त्रकृतः पुराजाः पुनराजायन्ते वेदानां गुप्त्यैकम् ।

ते वै विद्वांसो वैन्य तद्वदन्ति समानम्पुरुषम्बहुधा निविष्टम्, इति ॥२॥

इमां^३ ह वा तद्देवतां त्रय्यां^४ विद्यायामिमां^५ समानामभ्येक^६ आप-
यन्ति नैके । यो ह वावैतदेवं वेद स एवैतां^७ देवतां सम्प्रति वेद
॥३॥ स एष इन्द्र उद्गीथः । स यदैष इन्द्र उद्गीथ आगच्छति
नैवोद्गातुश्चोपगातृणां^८ च विज्ञायते^९ । इत एवोऽऽर्ध्वस्स्वरुदेति^{१०} ।
स उपरि मूर्ध्नी लेलायति ॥४॥ स विद्यादगमदिन्द्रो नेह कश्चन
पाप्मा न्यङ्गः^{११} परिशेच्यते इति । तस्मिन् ह न कश्चन पाप्मा न्यङ्गः
परिशिष्यते ॥५॥ तदेतदभ्रातृव्यं साम । न ह वा इन्द्रः कंचन
भ्रातृव्यम्पश्यते । स यथेन्द्रो न कंचन भ्रातृव्यम्पश्यत एवमेव न कंचन
भ्रातृव्यम्पश्यते य एतदेवं वेदाथो यस्यैवं विद्वानुद्गायति ॥६॥ १४५॥

चतुर्दशोऽनुवाके चतुर्थः खण्डः । चतुर्दशोऽनुवाकस्तमाप्तः ।

:०:

१-इदम् । २ नो । ३ त्रय्यां, तृय्यां । ४ इमां । ५-ना । ६ न्य । ७ हवै ।
८ य वै । ९-तृन्- । १० 'ति' अधिक करो । ११ धर्वा । १२ स्वर । १३ परिषे-

प्रजापतिर्वा वेद अग्र आसीत् । सोऽकामयत् बहुस्याम्प्रजोयेय
 भूमानं गच्छेयमिति ॥१॥ स षोडशधाऽऽत्मानं व्यकुरुत् भद्रं च
 समाप्तिश्चाऽऽभूतिश्च^१ सम्भूतिश्च भूतं च सर्वं च रूपं चाऽपरिमितं
 च श्रीश्च यशश्च नाम चाऽग्रं च सजाताश्च पयश्च महीया^२ च रसश्च
 ॥२॥ तद्यद्भद्रं हृदयमस्य तत् । तत्संस्वत्सरमसृजत् । तदस्य
 संवत्सरोऽनूपतिष्ठते^३ ॥३॥ समाप्तिः कर्मास्य तत् । कर्मणा हि
 समाप्नोति । तत् ऋतूनसृजत् । तदस्य र्तवोऽनूपतिष्ठन्ते ॥४॥ आ-
 भूतिरन्नमस्य^४ तत् । (तच्) चतुर्धा^५ भवति । ततो मासानर्धमा-
 सानहोरात्रायुषसोऽसृजत् । तदस्य मासा अर्धमासा अहोरात्रायु-
 षसोऽनूपतिष्ठन्ते ॥५॥ सम्भूती^६ रेतोऽस्य तद् । रेतसो हि सम्भव-
 ति ॥६॥ १।४६॥

पञ्चदशोऽनुवाके प्रथमः खण्डः ।

ततश्चन्द्रमसमसृजत् । तदस्य चन्द्रमा अनूपतिष्ठते । तस्मात्स
 रेतसः प्रतिरूपः ॥१॥ भूतम्प्राणोऽस्य सः । ततो वायुमसृजत् ।
 तदस्य वायुरनूपतिष्ठते ॥२॥ सर्वमपानोऽस्य सः । ततः पशूनसृजत् ।
 तदस्य पशवोऽनूपतिष्ठन्ते ॥३॥ रूपं व्यानोऽस्य सः । ततः प्रजा

१-चे । २-याँ । ३-अन्ते । ४ 'त' अधिक है । ५ तद् ।
 नास्ति । ६ अचर्धा, अर्धा । ७-ति, -ता, त ।

१-त । २-णा । ३-रूपशब्दो ।

असृजत । तदस्य प्रजा अनूपतिष्ठन्ते । तस्मादासु प्रजासु रूपाण्य-
धिगम्यन्ते ॥४॥ अपरिमितम्मनोऽस्य तत् । ततो दिशोऽसृजत ।
तदस्य दिशोऽनूपतिष्ठन्ते । तस्मात्ता अपरिमिताः । अपरिमितमिव हि
मनः ॥५॥ श्रीर्वागस्य सा । ततस्समुद्रमसृजत । तदस्य समुद्रो-
ऽनूपतिष्ठते ॥६॥ यशस्तपोऽस्य तत् । ततोऽग्निमसृजत । तदस्या-
ऽग्निरनूपतिष्ठते । तस्मात्स मथितादिव सन्तप्तादिव जायते ॥७॥
नाम चक्षुरस्य तत् ॥८॥ १।४७॥

पञ्चदशोऽनुवाके द्वितीयः खण्डः ।

तत आदिसमसृजत । तदस्यादिसोऽनूपतिष्ठते ॥१॥ अग्र-
मूर्धास्य सः । ततो दिवमसृजत । तदस्य द्यौरनूपतिष्ठते ॥२॥
सजाता अङ्गान्यस्य तानि । अङ्गैर्हि सह जायते । ततो वनस्पती-
नसृजत । तदस्य वनस्पतयोऽनूपतिष्ठन्ते ॥३॥ पयो लोमान्यस्य
तानि । तत ओषधीरसृजत । तदस्यौषधयोऽनूपतिष्ठन्ते ॥४॥ महीया
मांसान्यस्य तानि । मांसैर्हि सह महीयते । ततो वयस्यसृजत ।
तदस्य वयस्यनूपतिष्ठन्ते । तस्मात्तानि प्रपतिष्णूनि । प्रपतिष्णूनी-

४-यते । ५ नास्ति, ततो.....तस्मात् । ६ नास्ति । ७ तस्या ।
८ मथितामिद्, मथितिताद् ॥

१ अंगान्य, अंगहान्य, अङ्गं । २ ता । ३ गैर् । ४ नास्ति,
पयो.....अनूपतिष्ठन्ते । ५ मभिया, महिया । ६ त ।

ऽव महामाँसानि ॥५॥ रसो मज्जाऽस्य सः । ततः पृथिवीमसृजत ।
 तदस्य पृथिव्यनूपतिष्ठते ॥६॥ स हैवं षोडशधाऽऽत्मानं विकृत्य
 सार्धं समेत १० । तद्यत्सार्धं समेतत् तत्साम्नस्सामत्वम् ॥७॥ स एवैष
 हिरण्यमयः पुरुष उदतिष्ठत्प्रजानां जनिता ११ ॥८॥ १।४८॥

पञ्चदशोऽनुवाके तृतीयः खण्डः ।

देवासुरा अस्पर्धन्त । ते देवाः प्रजापतिमुपाधावाञ्जयामाऽसु-
 रानिति ॥१॥ सोऽब्रवीन्न वै मां यूयं विथ्य नाऽसुराः । यद्वै मां यूयं
 विद्यात् ततो वै यूयमेव स्यात् पराऽसुरा भवेयुरिति ॥२॥ तद्वै
 ब्रूहीऽस्य ब्रुवन । सोऽब्रवीत्पुरुषः प्रजापतिस्सामेति सोऽपाद्भवम् ।
 ततो वै यूयमेव भविष्यथ पराऽसुरा भविष्यन्तीति ॥३॥ तम्पुरुषः
 प्रजापतिस्सामेऽत्युपासत । ततो वै देवा अभवन् पराऽसुराः । स
 यो हैवं विद्वान्पुरुषः प्रजापतिस्सामेऽत्युपास्ते भवसात्मना पराऽस्य
 द्विषन् भ्रातृव्यो भवति ॥४॥ १।४९॥

पञ्चदशोऽनुवाके चतुर्थः खण्डः । पञ्चदशोऽनुवाकस्समाप्तः ।

—:०:—

७ महीम्-८ मज्ज्या । ९-न्ते । १० समेतः तत्पश्चात्,
 'तद्यत्सार्धं समेतत्' (!) पुनः है । ११ जयिता ॥

१-थ्य । २-यैत । ३-हि ॥

देवा वै विजिग्याना^१ अब्रुवन्^२द्वितीयं करवामहे । माऽद्वितीया
भूमेति । तेऽब्रुवन्^३ सामैव^४ द्वितीयं करवामहे । सामैव नो द्वितीय-
मस्त्विति ॥१॥ त इमे द्यावापृथिवी अब्रुवन्^५समेतं साम प्रजनयत्-
मिति ॥२॥ सोऽसावस्या^६ अवीभत्सत । सोऽब्रवीद्बहु^७ वा एतस्यां
किं चकिं च कुर्वन्सधिष्ठीवन्सधिचरन्सध्यासते । पुनीतन्वेनामपूता
वा इति ॥३॥ ते गाथामब्रुन्त्वया पुनामेति । किं ततस्स्यादिति ।
शतसनिस्स्या^८ इति । तथेति । ते गाथयाऽपुनन् । तस्मादुत गाथया
शतं मुनोति ॥४॥ ते कुम्भ्यामब्रुवन्^९ त्वया पुनामेति । किं तत-
स्स्यादिति । शतसनिस्स्या^{१०} इति । तथेति । ते कुम्भ्यया-
ऽपुनन् । तस्मादुत कुम्भ्यया^{११} शतं मुनोति ॥५॥ ते नाराशंसीमब्रु-
वन्^{१२} त्वया पुनामेति । किं ततस्स्यादिति । शतसनिस्स्या^{१३} इति ।
तथेति । ते नाराशंस्याऽपुनन् । तस्मादुत नाराशंस्या^{१४} शतं मुनोति
॥६॥ ते रैभीमब्रुवन्^{१५} त्वया पुनामेति । किं ततस्स्यादिति । शतस-
निस्स्या^{१६} इति । तथेति । ते रैभ्याऽपुनन् । तस्मादुत रैभ्या^{१७} शतं

१. विजिज्ञाना । २. वा । ३. सा । ४. अवीभत्त- । ५-ष्ठिव- ।
६-नि, -नी । ७-भ्य- । ८ '५' पुनः । लिखा है । ९ तेन । १० शतनी ।
११-भिम् । १२ त ॥

सुनोति ॥७॥ सेयम्पूता । अथाऽमुमब्रवीद्बहु वै किं च किं च
पुमाँश्चरति । त्वमनुपुनीष्वेति ॥८॥ १।५०॥

षोडशोऽनुवाके प्रथमः खण्डः ।

स ऐलवेना^१ऽपुनीत । पूतानि ह वा अस्य सामानि पूता
ऋचः पूतानि यजूषि पूतमनूक्तम्पूतं सर्वम्भवति य एवं वेद ॥१॥
ते समेस्य साम प्राजनयताम् । तद्यत्समेस्य साम प्राजनयतां तत्सा-
मस्सामत्वम् ॥२॥ तदिदं साम सृष्टमद उत्क्रम्य लेलायदतिष्ठत् ।
तस्य सर्वे देवा ममत्विन आसन्मम ममेति ॥३॥ तेऽब्रुवन्वीद-
म्भजामहा इति । तस्य विभागे न समपादयन् । तान्प्रजापतिर-
ब्रवीदपेत । मम वा एतत् । अहमेव वो विभक्षयामीति ॥४॥
सोऽग्निमब्रवीच्चं वै मे ज्येष्ठः पुत्राणामसि । त्वमप्रथमो वृणीष्वेति
॥५॥ सोऽब्रवीन्मन्द्रं साम्नो वृणेऽन्नाद्यमिति । स य एतद्वायाद-
न्नाद्य एव सोऽसन्मामु स देवानामृच्छाद्य एवं विद्वाँसमेतद्वायन्त-
मुपवदादिति ॥६॥ अथेन्द्रमब्रवीत्त्वमनुवृणीष्वेति ॥७॥ सोऽब्र-

१३ तम् ।

१-ऐलवैनां । २-वाम् । ३-प्रजू- । ४-अतः । ५-मे ।
६ 'वीऽदम्' के लिये स्थान खाली है, वीदां । ७-अबिष्य- । ८-अभियम् ।
९-गायत्राच्च । १०-ह्रीमात् । ११-अथ । १२-सोमम् ।

वीदुग्रं^{१३} साम्नो वृणे^{१४} श्रियमिति । स य एतद्वायाच्च^{१५}स्त्रीमानेव सोऽस-
न्मामु स देवानामृच्छाद्य एवं विद्राँसमेतद्वायन्तमुपवदादिति ॥८॥
अथ सोममब्रवीच्चमनुवृणीष्वेति ॥९॥ सोऽब्रवीद्वल्गु^{१५} साम्नो वृणे
प्रियमिति । स य एतद्वायात्प्रिय एव स कीर्तेः प्रियश्चक्षुषः प्रिय-
स्सर्वेषामसन् मामु स देवानामृच्छाद्य एवं विद्राँसमेतद्वायन्तमुप-
वदादिति ॥१०॥ अथ बृहस्पतिमब्रवीच्चमनुवृणीष्वेति^{१६} ॥११॥
सोऽब्रवीत्क्रौञ्चं साम्नो वृणे ब्रह्मवर्चसमिति । स य एतद्वायाद्ब्रह्म-
वर्चस्येव सोऽसन्मामु स देवानामृच्छाद्य एवं विद्राँसमेतद्वायन्तमुप-
वदादिति ॥१२॥ १।५१॥

षोडशोऽनुवाके द्वितीयः खण्डः ।

अथ विश्वान्देवानब्रवीद्यूमनुवृणीध्वमिति ॥१॥ तेऽब्रुवन्वैश्व-
देवं साम्नो वृणीमहे प्रजननमिति । स य एतद्वायात्प्रजावानेव सोऽस-
दस्मानु^१ देवानामृच्छाद्य एवं विद्राँसमेतद्वायन्तमुपवदादिति ॥२॥
अथ पशून्ब्रवीद्यूमनुवृणीध्वमिति ॥३॥ तेऽब्रुवन्वायुर्वा अस्माक-
मीशे । स एव नो वरिष्यत^३ इति । ते वायुश्च पशवश्चाब्रुवन्निरुक्तं^४ साम्नो

१३ वल्गु । १४ प्रियम् । १५ नास्ति, स य.....सोऽब्रवीद् २ में ।
१६ गायत्र्य् । १७ नास्ति । १८ लुब्ध-

१ 'म' अधिक है । २ नीचे से 'च स वायुं' अधिक लेता है ।
३ वरिष्ठ । ४ अनिर-

वृणीमहे पशन्व्यमिति । स य एतद्वायात्पशुमानेव सोऽसदस्मानु च
 स वायुं च देवानामृच्छाद्य एवं विद्वाँसमेतद्वायन्तमुपवदादिति ॥४॥
 अथ प्रजापतिरब्रवीदहमनुवारिष्य इति ॥५॥ सोऽब्रवीदनिरुक्तं
 साम्नो वृक्षे स्वर्ग्यमिति । स य एतद्वायात्स्वर्गलोक एव सोऽसन्मामु
 स देवानामृच्छाद्य एवं विद्वाँसमेतद्वायन्तमुपवदादिति ॥६॥
 अथ वरुणमब्रवीच्चमनुवृणीष्वेति ॥७॥ सोऽब्रवीच्चद्रो न कश्चना-
 ऽवृत तदहम्परिहरिष्य इति । किमिति । अप्रधान्तं साम्नो वृक्षोऽपश-
 व्यमिति । स य एतद्वायादपशुरेव सोऽसन्मामु स देवानामृच्छाद्य
 एतद्वायादिति ॥८॥ तानि वा एतान्यष्टौ गीतागीतानि साम्नः ।
 इमान्यु ह वै सप्तगीतानि । अथेयमेव वारुण्यागागीता ॥९॥ स
 यां ह कां चैवं विद्वानेतासां सप्तानामागानां गायति गीतमेवास्य
 भवत्येतानु कामाब्राध्नोति य एतासु कामाः । अथेयमेव वारुणी-
 मार्गा न गायेत् ॥१०॥ १।५२॥

षोडशोऽनुवाके तृतीयः खण्डः । षोडशोऽनुवाकरसमाप्तः ।

—:०:—

५-युथ । ६ 'इति' तक शेष नहीं लिखा । ७ ति । ८ स्वर्गम् ।
 ९ समुत् । १०-वृष्य-क-, यत् । ११ अपञ्जमातम्, अपध्मातम् । १२
 पश- । १३ ऋद्धाद् । १४-य, रथ । १५-श । १६ कामा । १७ नीरुध-,
 निर्धुधेति ॥

द्वयं वावेदमग्र आसीत्सच्चैवासच्च ॥१॥ तयोर्वेद सत्
 तत्साम तन्मनस्स प्राणः^१ । अथ यदसत्सर्क^२ सा वाक् सोऽपानः ॥२॥
 तद्यन्मनश्चप्राणश्च तत्समानम् । अथ या वाक् चापानश्च तत्समानम् ।
 इदमायतनम्मनश्च प्राणश्चेदमायतनं^३ वाक् चापानश्च । तस्मात्पुमा-
 न्दाक्षिणतो योषामुपशेते^४ ॥३॥ सेयमृगास्मिन् सामन्^५ मिथुनमै-
 च्छत । तामपृच्छत् का त्वमसीति । साहमस्मीत्यब्रवीत् । अथ वा
 अहममोऽस्मीति ॥४॥ तद्यत्सा चाऽमश्चतत् सामाऽभवत्
 तत्साम्नस्सामत्वम् ॥५॥ तौ वै सम्भवावेति । नेत्यब्रवीत्स्वसा
 वै मम त्वमस्यन्यत्र मिथुनमिच्छस्वेति ॥६॥ साऽब्रवीन्न वै तं विन्दा-
 मि येन सम्भवेयम्^६ । त्वयैव सम्भवानीति । सा वै पुनीष्वेत्यब्रवीत् ।
 अपूता वा असीति^७ ॥७॥ साऽपुनीत यदिदं विप्रां वदन्ति तेन ।
 साऽब्रवीत्क्वेदम्भविष्यतीति । प्रत्यूहेत्यब्रवीत् । धीर्वा एषा । प्रजानां
 जीवनं वा एतद्भविष्यतीति । तथेति । तत्प्रत्यूहत् । तस्मादेषाधीरेव
 प्रजानां जीवनमेव ॥८॥ पुनीष्वेत्यब्रवीत् । साऽपुनीत गायया
 साऽपुनीत कुम्ब्या^९ साऽपुनीत नाराशंस्यसाऽपुनीत पुराणेति-

१ मयक-अस्म्यदद्य भवितेऽति, (अस्त्य) भवितेति । २-ना ।

३ उपवशेते । ४-म । ५ सम्भवेत् । यम् । ६ 'वा' अधिक है । ७ प्रा,
 रिषा । ८ त्वे । ९ त्यम् । १०-म्भ-, 'वा' अधिक है ।

हासेन साऽपुनीत यदिदमादाय नाऽऽगायन्ति तेन ॥१॥ साऽब्र-
वीत्केदम्भविष्यतीति । प्रत्यूहेत्यब्रवीत् । धीर्वा एषा । प्रजानां
जीवनं वा एतद्भविष्यतीति । तथेति । तत्प्रत्यौहत् । तस्मादेषा
धीर्वैव प्रजानां जीवनम्भवेव ॥१०॥ पुनीष्वैवेत्यब्रवीत् ॥११॥ १॥१२॥

सप्तदशोऽनुवाके प्रथमः खण्डः ।

सा मधुनाऽपुनीत । तस्मादुत ब्रह्मचारी मधु नाऽश्रीयद्वेदस्य
पलाव इति । कामं ह त्वाचार्यदत्तमश्रीयत् ॥१॥ अथर्क् सामा-
ब्रवीद्ब्रह्म वै किं च किं च पुमाँश्चरति । त्वमनुपुनीष्वेति । स
भरण्डकेष्णोनाऽपुनीत । पूतानि ह वा अस्य सामानि पूता ऋचः
पूतानि यजूँषि पूतमनूक्तम्पूतं सर्वम्भवति य एवं वेद ॥२॥ ताभ्यां
सदो मिथुनाय पर्यश्रयन् । तस्मादुपवसथीयां रात्रिं सदसि न
शयीत् । अत्र ह्येतावत्कसामे उपवसथीयां रात्रिं सदसि सम्भवतः ।
स यथा श्रेय स उपद्रष्टैवं हि शश्वदीश्वरोऽनुलब्धः पराभवितोः
॥३॥ अथो आहुरुद्रातुर्मुखे सम्भवतः । उद्रातुरेव मुखं नैक्षे-

११ इमम् । १२ मादायना, आदायना ॥

१. सारे पद का पुनर्लेख है । २ स 'कामम्' के स्थान में ।
मा सर्वत्र है । ३ हरण्डकेष्णोना, भरण्ड, भरण्डकोक्षोना । ४-वन् ।
५-धीयाद्, -शीयाम् । ६-ई । ७ यीत, येत । ८-ध्व- । ९ अद् ।
१० अनुलव, अनुलुव-

तेति ॥४॥ तदु वा आहुः काममेवोद्गतुर्मुखमीक्षेत । उपवसथीयामे-
 वैतां रात्रिं सदसि न शयीत । अत्र ह्येवैतावृक्सामे उपवसथीयां^{१२}
 रात्रिं सदसि सम्भवत इति ॥५॥ तां सम्भविष्यन्नाहाऽमोऽहम-^{१३}
 स्मि सा त्वं सा त्वमस्यमोऽहम् । सा मामनुव्रता भूत्वा प्रजाः प्रज-^{१४}
 नयावहे । एहि सम्भवावहा इति ॥६॥ तां सम्भवन्नत्यरिच्यत^{१५}
 सोऽब्रवीन्न वै त्वाऽनुभवामि । विराड् भूत्वा प्रजनयावेति ।^{१६}
 तथेति ॥७॥ तौ विराड्भूत्वा प्राजनयताम् । हिङ्कारश्चाऽऽहावश्च^{१७}
 प्रस्तावश्च प्रथमा चोद्गीथश्च मध्यमा च प्रतिहारश्चोत्तमा च निधनं
 च वषट्कारश्चैव^{१८} विराड् भूत्वा प्राजनयताम् । ते अमुमजनयतां^{१९}
 योऽसौ तपति । ते व्यद्ववताम्^{२०} ॥८॥ १।५४॥

सप्तदशोऽनुवाके द्वितीयः खण्डः ।

मदध्यभून्मदव्यभूरेदिति । तस्मादाहुर्मधुपुत्र इति ॥१॥
 तस्मादुतस्त्रियो मधु नाऽश्नन्ति पुत्राणामिदं व्रतं चराम इति वदन्तीः
 ॥२॥ तदयं तृचोऽनूदश्रयत । इयमेव गायत्र्यन्तरिक्षं^२ त्रिष्टुवसौ^३
 जगती । तस्यैतत्तृचः ॥३॥ स उपरिष्ठात्सामाऽध्याहितं तपति ।

११ न । १२-थी- । १३ 'रण' अधिक है । १४-प्र- । १५ संभवत ।
 १६ आत्यरिच्यते । १७-हं- । १८ च । एवम् । १९ प्रज- ।
 २० व्यद्वप्ताम्, भ्यद्ववताम्, व्यद्वपताम् (?) ॥

१-आ । २ इदम् । ३-ईक्ष- ।

सोऽध्रुव इवासीदलेलायदिव । स नोर्ध्वोऽतपत् ॥४॥ स देवा-
 नब्रवीदुन्मा गायतेति । किं ततस्स्यादिति । श्रियं वः प्रयच्छेयम् ।
 मामिह हँहेतेति ॥५॥ तथेति । तमुदगायन् । तमेतदत्राऽहँहन् ।
 तेभ्यश्श्रियम्प्रायच्छत् । सैषा देवानां श्रीः ॥६॥ तत एतदूर्ध्वस्तपति ।
 स नार्वाङ्गतपत् ॥७॥ स ऋषीनब्रवीदनु मा गायतेति । किं
 ततस्स्यादिति । श्रियं वः प्रयच्छेयम् । मामिह हँहेतेति ॥८॥ तथेति ।
 तमन्वगायन् । तमेतदत्राहँहन् । तेभ्यश्श्रियम्प्रायच्छत् । सैषा ऋषीणां
 श्रीः ॥९॥ तत एतदर्वाङ् तपति । स न तिर्यङ् अतपत् ॥१०॥
 स गन्धर्वाप्सरसोऽब्रवीदामा गायतेति । किं ततस्स्यादिति ।
 श्रियं वः प्रयच्छेयम् । मामिह हँहेतेति ॥११॥ तथेति । तमागायन् ।
 तमेतदत्राऽहँहन् । तेभ्यश्श्रियम्प्रायच्छत् । सैषा गन्धर्वाप्सरसां
 श्रीः ॥१२॥ तत एतत् तिर्यङ् तपति ॥१३॥ तानि वा एतानि
 त्रीणि साम्न उद्गीतमनुगीतमागीतम् । तद्यथेदं वयमागायोद्गायाम
 एतदुद्गीतम् । अथ यद्यथागीतं तदनुगीतम् । अथ यत्किंचेति सा-
 म्नस्तदागीतम् । एतानि ह्येव त्रीणि साम्नः ॥१४॥ १।५५॥

सप्तदशोऽनुवाके तृतीयः खण्डः । सप्तदशोऽनुवाकस्समाप्तः ।

—:—

४ अ-ध- ५ हुँहेते । ६ उदगात् । ७-हत् । ८ तप्- ९ तिर्यङ् ।
 १० त । ११ तिर्यङ् । १२ आगयो, आगेयो- १३-यम् ॥

आपो वा इदमग्रे महत्सलिलमासीत् । स ऊर्मिरूर्मिमस्कन्दत्^१ ।
 ततो हिरण्ययौ कुक्ष्या^२ सम्भवतां ते एवर्कसामे^३ ॥१॥ सेयमृगिदं
 सामाऽभ्यप्लवत्^४ । तामपृच्छत् का त्वमसीति । साहमस्मीत्यब्रवीत् ।
 अथ वा अहममोऽस्मीति । तद्यत्सा चाऽमश्च तत्साम्नस्सामत्वम् ॥२॥
 तौ वै सम्भवावेति । नेत्यब्रवीत्स्वसा वै मम त्वमसि । अन्यत्र
 मिथुनमिच्छस्वेति ॥३॥ सा पराप्लवत्^५ मिथुनमिच्छमाना । सा
 समास्सहस्रं सप्ततीः पर्यप्लवत् ॥४॥ तदेष श्लोकः—

स्त्री स्मैवाऽग्रे संचरतीच्छन्ती, सलिले पतिम् ।

समास्सहस्रं सप्तती स्ततोऽजायत पश्यत, इति ॥५॥

असौ वा आदित्यः पश्यतः^६ । एष एव तदजायत । एतेन
 हि पश्यति ॥६॥ साऽविच्छा^७ न्यप्लवत् । साऽब्रवीन्न^८ वै तं विन्दासि
 येन सम्भवेयम् । त्वयैव सम्भवानीति ॥७॥ सा वै द्वितीया^९ मिच्छ-
 स्वेत्यब्रवीन्न^{१०} वै मैकोऽयं स्यसीति । सा द्वितीयां^{११} विच्छा^{१२} न्यप्लवत्
 ॥८॥ (तृतीयाम्) इच्छस्वैव^{१३} स्यब्रवीन्नो^{१४} वाव मा द्वे^{१५} उयंस्यथ^{१६}
 इति । सा तृतीयां^{१७} विच्छा^{१८} न्यप्लवत् । सोऽब्रवीदत्र वै मोऽयं स्यथैति^{१९}

१-द । २ कुक्ष्यौ । ३ येष । ४ कसाम् । ५ ह्यप्ल- । ६ पपरा- ।
 ७ सप्ती । ८-ति । ९ पश्यतः । १० तम् । ११ पित्वा । १२ नास्ति
 सा न्यप्लवत् । १३-यम् । १४ वै । १५ वा । १६ स्थान कोडा
 इत्या है, ध्वे । १७ अब्र- । १८-स्यसी ।

॥६॥ स यदेकपा^{१९}ग्रे समवदत तस्मादेक^{२०}र्चे साम । अथ यद्दे अ^{२१}पा-
सेधत्तस्माद्वयोर्न कुर्वन्ति । अथ यत् तिस्र^{२०}भिस्समपादयत् तस्मादु
तृचेसाम ॥१०॥ ता अब्रवीत्पुनीध्वंन पूता वै स्थेति ॥११॥ १।५६॥

अष्टादशोऽनुवाके प्रथमः खण्डः ।

सा गायत्री गाययाऽपुनीत नाराशंस्यात्रिष्टुब्रैभ्या जगती ।
भीमम्बत^२ मलमपावधिषतेति । तस्माद्रीमलाधियो वा एताः । धियो
वा इमा मलमपावधिषतेति । तस्मादु भीमलाः । तस्मादु गायतां
नाऽश्रीयात्^५ । मलेन हेते जीवन्ति ॥१॥ अथर्क^६ सामाऽब्रवीद्बहु वै
किं च किं च पुमाँश्चरति । त्वमनुपुनीष्वेति । स ऊर्ध्वगणेना-
ऽपुनीत ॥२॥ पूतानि ह वा अस्य सामानि पूता^७ ऋचः पूतानि
यजूषि^८ पूतमनूक्तम्पूतं सर्वम्भवति य एवं वेद ॥३॥ ताभ्यां
दिशो मिथुनाय पर्यौहन् । तां सम्भविष्यन्नह्यताऽमोऽहमस्मि सा
त्वं सा^{१२} त्वमस्यमोऽहमिति ॥४॥ तामेतदुभयतो वाचाऽत्यरिच्यत^{१३}
हिङ्गारेण पुरस्तावस्तोभेन मध्यतो निधनेनोपरिष्ठात् । अतितिस्रो
ब्राह्मणायनीस्सदृशी रिच्यते य एवं वेद ॥५॥ तयोर्यस्सम्भवतो-

१६-पद्-। २० तिस्र-। २१ सम्पू-॥

१-स्योत् । २ ब । ३-थे । ४-ता । ५ ऽश्री-। ६ क्त । ७-तानी ।

८-ता । ९ नूक्त-। १०-ध्यन्त् । ११ अवचयत, अह्वयन्त । १२ साम

१३-व । १४ त्यरुच्यते ।

रुध्वंशूषोऽद्रवत् (प्राणास्) ते । ते प्राणा एवोर्ध्वा अद्रवन् ॥६॥
 सोऽसावादिसस्स एष एव उदग्निरेव गी चन्द्रमा एव थम् ।
 सामान्येव उदच एव गी यजूष्येव थमित्यधिदेवतम् ॥७॥ अथा-
 १७
 ऽध्यात्मम् । प्राण एव उद्रागेव गी मन एव थम् । स एषोऽधिदेवतं
 चाऽध्यात्मं चोद्गीथः ॥८॥ स य एवमेतदधिदेवतं चाऽध्यात्मं
 चोद्गीथं वेदैतेन हास्य सर्वेणोद्गीतम्भवत्येतस्माद् एव सर्वस्मादा-
 १९ २०
 वृश्च्यते य एवं विद्रांसमुपवदति ॥९॥ १।५७॥

अष्टादशोऽनुवाके द्वितीयः खण्डः ।

तद्यदिदमाहुः क उदगासीरिति क एतमादिसमगासीरिति
 ह वा एतत्पृच्छन्ति ॥१॥ एतं ह वा एतं त्रय्यां विद्यया गायन्ति ।
 यथा वीणागायिनो गापयेयुरेवम् ॥२॥ स एष हृद्ः कामानाम्पूणो
 यन्मनः । तस्यैषा कुल्या यद्राक् ॥३॥ तद्यथा वा अपो हृदात्कु-
 ११ १२
 ल्ययोऽपरामुपनयन्त्येवमेवैतन्मनसोऽधि वाचोद्गाता यजमानम्
 यस्य कामान् प्रयच्छति ॥४॥ स य उद्गातारं दक्षिणाभिराराधयति

१५ चुं-। १६ द्र-। १७ ऽद्धा-। १८ गीथ्-। १९-गीथ्-।
 २० भवत्येति, भवन्ति ॥

१-सी । २ प्रच्छन्त्य् । ३ नृय्या । ४-गायिनो, गायय्-। ५ हृद्-।
 ६ कूब्-। ७ यत् । ८ वात् । ९-त्र । १० अदो । ११-यन्त्य्, -यन्ते,
 -यन्त्य् । १२-ना । १३ दक्षिणोभि । १४ राध्-।

तं सा कुल्योऽपधावति । य उ एनं नाऽऽराधयति स उ तामपि-
 हन्ति ॥५॥ अथ वा अतः^{१५} प्रति^{१६}श्चैव प्रतिग्रहश्च । तद्रूपमिति वै^{१७}
 प्रदीयते । तद्वाचा यजमानाय प्रदेयम्मनसाऽऽत्मने^{१८} । तथा ह सर्वं
 न प्रयच्छति ॥६॥ तद्यदिदं सम्भवतो रेतोऽसिच्यत^{१९} तदशयत् ।
 यथा हिरण्यमविकृतं^{२०} लेलायदेवम् ॥७॥ तस्य सर्वे देवा ममत्विन
 आसन्मम ममेति । तेऽब्रुवन्वीदं करवामहा इति । तेऽब्रुवञ्छ्रेयो वा^{२१}
 इदमस्मत् । आत्मभिरेवैनद्विकरवामहा इति ॥८॥ तदात्मभिरेव
 न्यकुर्वत । तेषां वायुरेव हिङ्गार आसाऽग्निः प्रस्ताव इन्द्र आदि-
 स्सोमबृहस्पती^{२२} उदगीथोऽश्विनौ प्रतिहारो विश्वे देवा उपद्रवः
 प्रजापतिरेव निधनम् ॥९॥ एता वै सर्वा देवता एता हिरण्यम्^{२३} ।
 अस्य सर्वोभिर्देवताभिस्तुतम्भवाति य एवं वेद । एताभ्य उ एव स
 सर्वोभ्यो देवताभ्य आवृच्यते य एवं विद्रांसमुपवदति ॥१०॥ १।५८॥

अष्टादशोऽनुवाके तृतीयः खण्डः ।

अथ ह ब्रह्मदत्तश्चैकितानेयः कुरु^१ जगामाऽभिप्रतारिणं^२ काक्ष-
 सेनिम् । स हाऽस्मै मधुपर्कं ययाच ॥१॥ अथ हास्य वैप्रपद्य^३ पुरो-

१५ अघः । १६ प्रतिशु । १७ भुं- । १८ आत्- । १९ सिध्य- ।
 २० दश- । २१ अपि-अपितुतं । २२ या । २३ सोमाबृ-ह । २४ हिरण्यम् ॥

१ कू-, आरैन् । २ एक में यहाँ हि समाप्ति है । ३-य ।

हितोऽन्ते निषसाद शौनकः । तं हाऽनामन्त्र्य मधुपर्कम्पौ ॥२॥
 तं होवाच किं विद्वाभो दाहभ्याऽनामन्त्र्य मधुपर्कम्पिबसीति ।
 सामवैर्यम्प्रपद्येति होवाच ॥३॥ तं ह तत्रैव पप्रच्छ यद्वा यौ
 तद्वेत्या३इति । हिङ्गारो वा अस्य स इति ॥४॥ यदग्नौ तद्वेत्या३-
 इति । प्रस्तावो वा अस्य स इति ॥५॥ यदिन्द्रे तद्वेत्या३इति ।
 आदिर्वा अस्य स इति ॥६॥ यत्सोमवृहस्पसोस्तद्वेत्या३इति । उद्-
 गीथो वा अस्य स इति ॥७॥ यदश्विनोस्तद्वेत्या३इति । प्रतिहारो
 वा अस्य स इति ॥८॥ यद्विश्वेषु देवेषु तद्वेत्या३इति । उपद्रवो
 वा अस्य स इति ॥९॥ यत्प्रजापतौ तद्वेत्या३इति । निधनं वा
 अस्य तदिति होवाच । आर्षेयं वा अस्य तद्वन्धुता वा अस्य
 सेति ॥१०॥ स होवाच नमस्तेऽस्तु भगवो विद्वानपा मधुपर्कमिति
 ॥११॥ अथ हेतरः पप्रच्छ किं देवस्य^{११} सामवैर्यम्प्रपद्येति । यदेवसा-
 सु स्तुवत इति होवाच तदेवस्यमिति ॥१२॥ तदेतत् साध्वेव
 प्रत्युक्तम् । व्याप्तिर्वा अस्यैषेति होवाच ब्रूहेवेति । मेदं ते नमो-
 ऽकर्मेति होवाच । मैव नोऽतिप्राक्षीरिति ॥१३॥ स होवाचाऽप्रक्ष्यं

४-मन्त्रः । ५ सामवैर्या, 'र' रहित । ६ तत् । ७ सोमाब्-
 द 'द-' का पुनर्लेख । ९ नास्ति । १० अव्य । ११-वत्या ।
 १२ सामवैर्या । १३-उत्तम् ।

वाव त्वा देवतामप्रक्ष्यं वाव त्वा देवतायै देवताः । वाग्देवसं साम
वाचो मनो देवता मनसः पशवः पशूनामोषधय ओषधीनामापः ।
तदेतदद्भ्यो^{१४} जातं सामाप्सु प्रतिष्ठितमिति ॥१४॥ १।५६॥

अष्टादशोऽनुवाके चतुर्थः खण्डः ।

देवासुरा अस्पर्धन्त । ते देवा मनसोदगायन् । तदेषामसुरा
अभिदु^२स पाप्मना समसृजन् । तस्माद्बहु किं च किं च मनसा
ध्यायति । पुण्यं चैनेन ध्यायति पापं च ॥१॥ ते वाचोदगायन् ।
तां तथैवा^४ऽकुर्वन् । तस्माद्बहु किं च किं च वाचा वदति । सत्यं^६
चैनया वदसन्तं च ॥२॥ ते चक्षुषोदगायन् । तत्तथैवा^८ऽकुर्वन्
तस्माद्बहु किं च किं च चक्षुषा पश्यति । दर्शनीयं चैनेन पश्यत्य
दर्शनीयं च ॥३॥ ते श्रोत्रेणोदगायन् । तत्तथैवा^{१०}ऽकुर्वन् । तस्माद्बहु
किं च किं च श्रोत्रेण शृणोति । श्रवणीयं चैनेन शृणोत्यश्रवणीयं
च ॥४॥ तेऽपानेनोदगायन् । तं तथैवा^{१२}ऽकुर्वन् । तस्माद्बहु किं च
किं चापानेन जिघ्रति । सुरभि चैनेन जिघ्रति दुर्गन्धि च ॥५॥
ते प्राणेनोदगायन् । अथासुरा आद्रव^{१४}स्तथा करिष्याम इति
मन्यमानाः ॥६॥ स यथाऽश्मानमृत्वा लोष्टो विध्वंसेतैवमेवा^{१६}सुरा

१४ भ्यो ।

१ ज्ञाय- २-द्रक्ष्य अथवा-द्रत्य । ३-सृज- ४ व । ५ कूर- ।
६-त्य । ७ वै । ८ नास्ति । ९-गात् ।

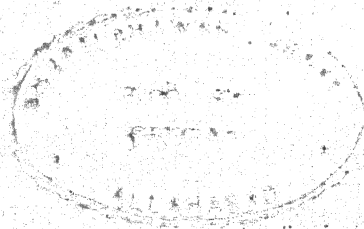
व्यध्वँ^{१०}सन्त । स एषोऽश्माऽऽखणं^{११} यत्प्राणः ॥७॥ स यथाऽश्मान-
 राखणमृत्वा^{१२} लोष्टो विध्वँसत एवमेव स विध्वँसते य एवं विद्वाँ-
 समुपवदति ॥८॥ १।६०॥

अष्टादशोऽनुवाके पञ्चमः खण्डः । अष्टादशोऽनुवाकस्तमातः ।

[इति प्रथमोऽध्यायः ।]

—:०:—

१० सते, पन्ता । ११-णों । १२ आणोम ।



[अथ द्वितीयोऽध्यायः ।]

देवानां वै षडुद्गातार आसन् वाक् च मनश्च चक्षुश्च
 श्रोत्रं चाऽपानश्च प्राणश्च ॥१॥ तेऽभियन्त तेनोद्गात्रा दीक्षामहै
 येनाऽपहस्य मृत्युमपहस्य पाप्मानं स्वर्गलोकमियामेति ॥२॥ तेऽब्रुवन्
 वाचोद्गात्रा दीक्षामहा इति । ते वाचोद्गात्राऽदीक्षन्त । स यदेव
 वाचा वदति तदात्मन आगायदथ य इतरे कामास्तान्देवेभ्यः ॥३॥
 ताम्पाप्माऽन्वसृज्यत । स यदेव वाचा पापं वदति स एव स
 पाप्मा ॥४॥ तेऽब्रुवन् न वै नोऽयम् मृत्युं न पाप्मानमसवाक्षीत् ।
 मनसोद्गात्रा दीक्षामहा इति ॥५॥ ते मनसोद्गात्राऽदीक्षन्त । स
 यदेव मनसा ध्यायति तदात्मन आगायदथ य इतरे कामास्तान्देवे-
 भ्यः ॥६॥ तत्पाप्माऽन्वसृज्यत । स यदेव मनसा पापं ध्यायति
 स एव स पाप्मा ॥७॥ तेऽब्रुवन् नो न्वाव नोऽयम् मृत्युं न
 पाप्मानमसवाक्षीत् । चक्षुषोद्गात्रा दीक्षामहा इति ॥८॥ ते चक्षुषो-
 द्गात्राऽदीक्षन्त । स यदेव चक्षुषा पश्यति तदात्मन आगायदथ य
 इतरे कामास्तान्देवेभ्यः ॥९॥ तत्पाप्माऽन्वसृज्यत । स यदेव
 चक्षुषा पापम्पश्यति (स एव स पाप्मा) ॥१०॥ तेऽब्रुवन् नो न्वाव

नोऽयमृत्युं न पाप्मानमसवाक्षीव । श्रोत्रेणोद्गात्रा दीक्षामहा इति
 ॥११॥ ते श्रोत्रेणोद्गात्राऽदीक्षन्त । स यदेव श्रोत्रेण शृणोति
 तदात्मन आगायदथ य इतरे कामास्तान्देवेभ्यः ॥१२॥ तत्पाप्मा-
 ऽन्वसृज्यत । स यदेव श्रोत्रेण पापं शृणोति स एव स पाप्मा
 ॥१३॥ तेऽब्रुवन्नो न्वाव नोऽयम मृत्युं न पाप्मानमसवाक्षीव ।
 अपानेनोद्गात्रा दीक्षामहा इति ॥१४॥ तेऽपानेनोद्गात्राऽदीक्षन्त ।
 स यदेवाऽपानेनाऽपानिति तदात्मन आगायदथ य इतरे कामा-
 स्तान्देवेभ्यः ॥१५॥ तम्पाप्माऽन्वसृज्यत । स यदेवाऽपानेन पापं
 गन्धमपानिति स एव स पाप्मा ॥१६॥ तेऽब्रुवन्नो न्वाव नोऽय-
 ममृत्युं न पाप्मानमसवाक्षीव । प्राणेनोद्गात्रा दीक्षामहा इति ॥१७॥
 ते प्राणेनोद्गात्राऽदीक्षन्त । स यदेव प्राणेन प्राणिति तदात्मन
 आगायदथ य इतरे कामास्तान्देवेभ्यः ॥१८॥ तम्पाप्मानाऽन्वसृज्यत ।
 न ह्येतेन प्राणेन पापं वदति न पापं ध्यायति न पापमपश्यति न
 पापं शृणोति न पापं गन्धमपानिति ॥१९॥ तेनाऽपहस्य मृत्युमपहस्य
 पाप्मानं स्वर्गं लोकमायन् । अपहस्य ह्येव मृत्युमपहस्य पाप्मानं स्वर्गं
 लोकमेति य एवं वेद ॥२०॥ २।१॥

प्रथमेऽनुवाके प्रथमः खण्डः ।

८ अपारिति ।

सा या सा यागासीत्सोऽग्निरभवत् ॥१॥ अथ यत्तन्मन
 आसीत् स चन्द्रमा अभवत् ॥२॥ अथ यत्तच्चक्षुरासीत् स
 आदित्योऽभवत् ॥३॥ अथ यत्तच्छ्रोत्रमासीत्ता इमा दिशोऽभवन् ।
 ता उ एव विश्वे देवाः ॥४॥ अथ यस्सोऽपान आसीत्स बृहस्पतिरभवत् ।
 यदस्यै वाचो बृहस्यै पतिस्तस्माद्बृहस्पतिः ॥५॥ अथ यस्स प्राण
 आसीत्स प्रजापतिरभवत् । स एष पुत्री प्रजावानुद्गीयो यः प्राणः ।
 तस्य स्वर एव प्रजाः । प्रजावान्भवति य एवं वेद ॥६॥ तंहैतमेके
 प्रसक्तमेव गायन्ति प्राणा ३ प्राणा ३ प्राणा ३ हुम्भा ओवा इति ॥७॥
 तदु होवाच शाक्यायनिस्तुत एतमर्हति प्रसक्तं गातुम् । यद्वाच
 वाचा करोति तदेतदेवाऽस्य कृतम्भवतीति ॥८॥ अथ वा अत
 ऋक्साध्नोरेव प्रजातिः । स यद्विद्धुरोसभ्येव तेन क्रन्दति^१ । अथ
 यत्प्रस्तौस्यैव तेन प्लवते । अथ यदादिमादत्ते रेत एव तेन सिञ्चति ।
 अथ यदुद्रायाति रेत एव तेन सिक्तं सम्भावयति^२ । अथ यत्प्रति-
 हरति रेत एव तेन सम्भूतम्भवर्धयति । अथ यदुपद्रवाति रेत एव
 तेन प्रवृद्धं विकरोति । अथ यन्निधनमुपैति रेत एव तेन विकृतम्प्रज-

१ अत । २ अतम्, अथ । ३ कुर्वते । ४ ए । ५-भेद-, नास्ति
 यति । अथ यत्प्रतिहरति ।

नयति । सैर्षसात्रोः प्रजातिः ॥६॥ स य एवमेतामृक्सात्रोः
प्रजातिं वेद प्र हैनमृक्सामनी जनयतः ॥१०॥ २।२॥

प्रथमेऽनुवाके द्वितीयः खण्डः । प्रथमोऽनुवाकस्समाप्तः ॥

—:०:—

एष एवेदमग्र आसीद्य^१ एष तपति । स एष सर्वेषां^२भूतानां
तेजो हर इन्द्रियं वीर्यमादायोर्ध्व उदक्रामत् ॥१॥ सोऽकामयते-
कमेवाऽक्षरं स्वादु मृदु^३ देवानां वनामेते^४ ॥२॥ स तपोऽतप्यतं ।
स तपतः^५कमेवाऽक्षरमभवत् ॥३॥ तं देवाश्चर्षयश्चोपसमैप्सन् ।
अथैषोऽसुरान्भूतहनोऽसृजतैतस्य पाप्मनोऽतन्वागमाय ॥४॥ तं
वाचोपसमैप्सन् । ते वाचं समारोहन् । तेषां वाचन्पर्यादत्त ।
तस्मात्पर्यादिता वाक् । सत्यं च ह्येनया वदस्व नृतं च ॥५॥ तम्म-
नसोपसमैप्सन् । ते मनस्समारोहन् । तेषाम्मनः पर्यादत्त ।
तस्मात्पर्यादितम्मन्[ः]प् । पुरयं च ह्येनेन ध्यायति पापं च ॥६॥
तं चक्षुगोसनेनत् ॥ ते चक्षुस्समारोहन् । तेषां चक्षुः पर्यादत्त ।
तस्मात्पर्यादितं चक्षुः । दर्शनीयं च ह्येनेन पश्यत्यदर्शनीयं च ॥७॥

६ ल. झं.ः, कसात्रोः ।

१ स । २-षा । ३ मृदु । ४ नास्ति । ५ पति । ६ ऐवा ।

७ ' उदेवानाम् ' पूर्व से पुनः है । ८ पर्य्यत्तं ।

तं श्रोत्रेणोपसमैप्सन् । ते श्रोत्रं समारोहन् । तेषां श्रोत्रम्पर्यादत्त ।
 तस्मात्पर्यात्तं श्रोत्रम् । श्रवणीयं चेनेन शृणोत्यश्रवणीयं च ॥८॥
 तन्मपानेनोपसमैप्सन् । तेऽपानं समारोहन् । तेषामपानम्पर्यादत्त ।
 तस्मात्पर्यात्तोऽपानः । सुरभि च ह्येनेन जिघ्रति दुर्गन्धि च ॥९॥
 तन्प्राणेनोपसमैप्सन् । तन्प्राणेनोपसमाप्नुवन् ॥१०॥ अथाऽसुरा
 भूतहन आद्रवन्मोहयिष्याम इति मन्यमानाः ॥११॥ स यथा-
 ऽऽमान्मृत्वा लोष्टो विध्वंसतेवमेवाऽसुरा व्यध्वंसन्त । स एषोऽऽमा-
 ऽऽखण्डो यत्प्राणः ॥१२॥ स यथाऽऽमानमारुह्यमृत्वा लोष्टो
 विध्वंसत एवमेव स विध्वंसते य एवं विद्वांसमुपवदति ॥१३॥ २।३॥

इति तीयेऽनुवाके प्रथमः खण्डः ।

स एष वशी दीप्ताग्र उद्गीथो यत्प्राणः । एष हीदं सर्वं वशेकुरुते
 ॥१॥ वशी भवति वशे^२ स्वान्कुरुते य एवं वेद । अस्य ह्यसावग्रे
 दीप्यते^३ अमुष्य^४ वासः ॥२॥ तं हैतमुद्गीथं शाश्वत्यायनिराचष्टे वशी
 दीप्ताग्र इति । दीप्ताग्रा ह वा अस्य कीर्तिर्भवति य एवं वेद ॥३॥
 आभूतिरिति कारीरादयः प्राणं वा अनुप्रजाः पशव आभवन्ति ।
 स य एवमेतमाभूतिरित्युपास्त एव प्राणेन प्रजया पशुभिर्भवति ॥४॥

६ पर्याप्त, पर्याप्त ।

१ एषां त हीदं सर्वं वशेकुरुते ऐसा पाठ देते हैं । २-वो ।
 ३ अमुष्य- ४ अतः ।

सम्भूतिरिति सात्ययज्ञयः । प्राणं वा अनुमजाः पशवस्सम्भवन्ति ।
 स य एवमेतं सम्भूतिरित्युपास्ते समे [व] प्राणेन प्रजया पशुभि-
 र्भजति ॥५॥ प्रभूतिरिति शैब्यः^६ । प्राणं वा अनुमजाः पशवः
 प्रभवन्ति । स य एवमेतस्सम्भूतिरित्युपास्ते प्रैव प्राणेन^७ प्रजया
 पशुभिर्भजति ॥६॥ भूतिरिति भास्त्राविनः । प्राणं वा अनुमजाः
 पशवो भवन्ति । स य एवमेतस्सम्भूतिरित्युपास्ते भवत्येव प्राणेन
 प्रजया पशुभिः ॥७॥ अपरोधोऽनपरुद्ध इति पार्श्वशैलनः ।
 एष ह्यन्यमपरुणादि^{१०} नैतमन्यः । एष ह वाऽस्य द्विषन्तस्म्रातृव्यम-
 परुणादि य एवं वेद ॥८॥१॥३॥

द्विर्त्येऽनुवाके द्वितीयः खण्डः ।

एकवीर^१ इत्यारुणोयः^२ । एको ह्येवैष वीरो यत्प्राणः । आ हा
 ऽस्यैको वीरो वीर्यवाञ्जायतेय एवं वेद ॥१॥ एकपुत्र इति चैकितानेयः ।
 एको^४ ह्येवैष पुत्रो यत्प्राणः ॥२॥ स उ एव द्विपुत्र इति । द्वौ हि
 प्राणापानौ ॥३॥ स उ एव त्रिपुत्र इति । त्रयो हि प्राणोऽपानो
 व्यानः ॥४॥ स उ एव चतुष्पुत्र इति । चत्वारो हि प्राणोऽपानो

५-भूर । ६ शैलि- । ७ 'प्रजया' अधिक है । ८ भूर । ९ अवरोद्धा ।
 १०-णद्धि । ११ से । १२-त । १३-बीन्- ।

१-ह । २ त् । ३-णय, 'एको' के स्थान में सर्वत्र 'एका' । ४-ए ।
 ५ द्विप्- ।

व्यानस्समानः ॥५॥ स उ एव पञ्चपुत्र इति । पञ्च हि प्राणाः^१ऽपानो
 व्यानस्समानोऽवानः ॥६॥ स उ एव षट्पुत्र इति । षड्दि^२ प्राणो-
 ऽपानो व्यानस्समानोऽवान उदानः ॥७॥ स उ एव सप्तपुत्र इति
 सप्त हीमे शीर्षण्याः प्राणाः ॥८॥ स उ एव नवपुत्र इति सप्त हि
 शीर्षण्याः प्राणा द्वाववाञ्चौ ॥९॥ स उ एव दशपुत्र इति । सप्त-
 शीर्षण्याः प्राणा द्वाववाञ्चौ नाभ्यां दशमः ॥१०॥ स उ एव
 बहुपुत्र इति । एतस्य^३ हीयं सर्वाः प्रजाः ॥११॥ एतं ह स्म वैतदुद्गीथं
 विद्वंसः पूर्वब्राह्मणाः कामागायिन^४ आहुः कति ते पुत्रानागास्याम
 इति ॥१२॥ २५॥

द्विर्त्येऽनुवाके तृतीयः खण्डः ।

स यदि ब्रूयादेक^१ आगायेति प्राण उद्गीथ इति विद्वानेकमनसा
 ध्यायेत् । एको हि प्राणः । एकोहा^२ऽस्यऽऽजायते ॥१॥ स यदि
 ब्रूयाद्वो^३ म आगायेति प्राण उद्गीथ इत्येव विद्वान्द्वौ मनसा ध्यायेत् ।
 द्वौ हि प्राणा^४ानौ द्वौ हेत^५ऽस्याऽऽजायेत ॥२॥ स यदि ब्रूयाद्वीन्म आ-
 गायेति प्राण उद्गीथ इत्येव विद्वान्स्त्रीन्मनसा ध्यायेत् । त्रयो हि प्राणाः

६-ना । ७-अभि । ८-अ । ९-वसुपुत्र । १०-यम, दयम ।
 ११-गोन ॥

१ ऐक्य- । २ त्रयो । ३ 'व्यानः' अधिक है । ४ 'स हैवाऽस्याऽऽजा-
 यन्ते' अधिक है । ५ मन ।

ऽपानोऽपानः । त्रयो हैवाऽऽयाऽऽजायन्ते ॥३॥ स यदि ब्रूयाच्चतुरो म
 आगायेति प्राणा उद्गीथ इत्येव विद्वोश्चतुरो मनसा ध्यायेत् । चत्वारो
 हि ऽणोऽपानो व्यानस्समानः । चत्वारो हैवाऽऽयाऽऽजायन्ते ॥४॥
 स यदि ब्रूयात्पञ्च म आगायेति प्राणा उद्गीथ इत्येव विद्वान्पञ्च मनसा
 ध्यायेत् । पञ्च हि प्राणोऽपानो व्यानस्समानोऽपानः । पञ्च हैवाऽऽया
 ऽऽजायन्ते ॥५॥ स यदि ब्रूयात् षण्म आगायेति प्राणा उद्गीथ इत्येव
 विद्वान् षण्म मनसा ध्यायेत् । षण्म प्राणोऽपानो व्यानस्समानोऽपान
 उदानः । षड्द्वेऽऽयाऽऽजायन्ते ॥६॥ स यदि ब्रूयात्सप्तम आगा-
 येति प्राणा उद्गीथ इत्येव विद्वान् सप्तम मनसा ध्यायेत् । सप्त हीमे
 शीर्षयाः प्राणाः । सप्त हैवाऽऽयाऽऽजायन्ते ॥७॥ स यदि ब्रूयाच्चव
 म आगायेति प्राणा उद्गीथ इत्येव विद्वान्चव मनसा ध्यायेत् । सप्त
 शीर्षयाः प्राणा द्वाववाञ्चौ । नव हैवाऽऽयाऽऽजायन्ते ॥८॥ स
 यदि ब्रूयाद्दश म आगायेति प्राणा उद्गीथ इत्येव विद्वान्दश मनसा
 ध्यायेत् । सप्त शीर्षयाः प्राणा द्वाववाञ्चौ नाभ्यां दक्षमः । दश हैवा
 ऽऽयाऽऽजायन्ते ॥९॥ स यदि ब्रूयात्सहस्रम् आगायेति प्राणा उद्गीथ
 इत्येव विद्वान् सहस्रम् मनसा ध्यायेत् । सहस्रं हेत आदित्यरश्मयः ।
 तेऽस्य पुत्रः । सहस्रं हैवाऽऽयाऽऽजायन्ते ॥१०॥ एवं हैवैतमुद्गीथ
 ६ नास्ति । स यदि व्यानश्च । ७ भि । ८ हे । ९ द्वा । १० त । ११ ह ।

म्पर आदणारः कक्षीवाँस्त्रसदस्युरिति पूर्वमहाराजाश्रौत्रियास्सह-
स्रपुत्रमुपनिषेदुः । ते ह सर्व एव सहस्रपुत्रा आसुः ॥११॥ स य एवैवं
वेद सहस्रं हैवाऽस्य पुत्रा भवन्ति ॥१२॥ २।६॥

द्वितीयेऽनुवाके चतुर्थः खण्डः । द्वितीयोऽनुवाकरसमाप्तः ।

शर्यातो^१ वै मानवः प्राच्यां स्थलया^२मयजत^३ । तस्मिन् ह भूता-
न्युद्गीथेऽपित्वमोषिरे^४ ॥१॥ तं देवा बृहस्पतिनोद्गात्रा दीक्षामहा
इति पुरस्तादागच्छन्नयं त उद्गायत्विति । बम्बेना^५ऽऽजद्विषेण
पितरो दक्षिणतो^६ऽयं त उद्गायत्वित्युशनसा काव्येना^७ऽसुराः
पश्चादयं त उद्गायत्विसयास्येना^८ऽङ्गिरेसेन मनुष्या उत्तरतो-
ऽयं त उद्गायत्विति ॥२॥ स हेत्वाचक्रे हन्तेना^९ पृच्छानि
कियतो^{१०} वा एक ईशे कियत एकः कियत एक इति ॥३॥ स होवाच
बृहस्पतिं^{११} यन्मेत्वमुद्गायेः किं ततस्स्यादिति ॥४॥ स होवाच देवे-
ष्वेव श्रीस्स्याद्देवेष्वीशा स्वर्गमुत्वांलोकं गमयेयमिति ॥५॥ अथ
होवाच बम्बमाजद्विषन्यन्मेत्वमुद्गायेः किं ततस्स्यादिति ॥६॥ स

१२ जंश । १३ यद् ।

१ शर्यात- २ स्थलया । ३ अजयत । ४ ऽपि स अम् ।
५ ऐश्वरे । ६ बिम्ब- ७ दक्षिणतो । ८ कांस्थेना । ९-रां १० इवातः ।
११ अयांहास्येना, अयं हि स्येना । १२ कियं । १३-तिः । १४ 'अयम्' अधिक
है । १५ नास्ति, स होवाच..... ततस्स्यादिति ।

होवाच पितृष्वेव श्रीस्स्यात्पितृष्वीशा स्वर्गमु त्वां लोकं गमयेयमिति
 ॥७॥ अथ होवाचोशनसं काव्यं यन्मे त्वमुद्गायेः किं ततस्स्यादिति
 ॥८॥ स होवाचाऽसुरेष्वेव श्रीस्स्यादसुरेष्वीशा स्वर्गमु त्वां लोकं
 गमयेयमिति ॥९॥ अथ होवाचाऽयास्यमाङ्गिरसं यन्मे त्वमुद्गायेः किं
 ततस्स्यादिति ॥१०॥ स होवाच देवानेव देवलोकं दध्यान्मनुष्या-
 २१ न्मनुष्यलोके पितॄन् पितृलोके नुदेयाऽस्माल्लोकादसुरान् स्वर्गमु त्वां
 २२ लोकं गमयेयमिति ॥११॥ २।७।

तृतीयेऽनुवाके प्रथमः खण्डः ।

स होवाच त्वं मे भगव उद्गाय य एतस्य सर्वस्य यशो[ऽसी]ति
 ॥१॥ तस्य हाऽयास्य एवोज्जगौ । तस्मादुद्गाता वृत उत्तरतो
 निवेशनं लिप्सेत । एतद्ध नाऽऽरुद्ध निवेशनं यदुत्तरतः ॥२॥
 उत्तरत आगतो यास्य आङ्गिरसश्चर्यातस्य ४ मानवस्योज्जगौ । स
 प्राणेन देवान्देवलोकं ५ दधादपानेन मनुष्यान्मनुष्यलोके व्यानेन
 पितॄन् पितृलोके हिङ्गरेण ६ वज्रेणाऽस्माल्लोकादसुराननुदत् ॥३॥
 तान् होवाच दूरं गच्छतेति । स दूरो ह नाम लोकः । तं ह जग्मुः ।
 त एतेऽसुरा असम्भाव्यम्पराभूताः ३ ॥४॥ छन्दोभिरेव वाचा

१६ य । १७ जे । १८-शाः । १९ न्वं । २०-ध्यात् । २१-लुत् ।
 २२ 'उ' अधिक है । २३ है ॥

१-शस । २-तृत् । ३ असंख्येयम्-।

शर्यात्^४त्मानं स्वर्गं लोकं गमयांचकार ॥५॥ ते होचुरसुरा एत तं
 वेदाम यो नोऽयमित्थमधत्तेति । तत आगच्छन् । तमेखाऽपश्यन् ॥६॥
 तेऽब्रुवन्नयं वा आस्य इति । यदब्रुवन्नयं वा आस्य इति तस्मादय-
 मास्यः । अयमास्यो ह वै नामैषः । तमयास्य इति परोक्षमाच-
 क्षते ॥७॥ स प्राणो वा अयास्यः । प्राणो ह वा एनान् स
 नुनुदे ॥८॥ स य एवं विद्वानुद्गायति प्राणेनैव देवान्देवलोके
 दधात्यपानेन मनुष्यान्मनुष्यलोके व्यानेन पितॄन् पितृलोके
 हिङ्गारेणेव वज्रेणाऽस्मात्ल्लोकाद्विषन्तम्भ्रातृव्यं नुदते ॥९॥१०॥८॥

तृतीयेऽनुवाके द्वितीयः खण्डः ।

तं ह ब्रूयाद्दूरं गच्छेति । स यमेव लोकमसुरा अगच्छंस्तं ह वै
 गच्छति ॥१॥ छन्दोभिरेव वाचा यजमानं स्वर्गं लोकं गमयति ॥२॥
 ता एता व्याहृतयः । प्रेत्येति वाग्[इति] भूर्भुवस्स्वरित्यु[उदिति] ॥३॥
 तद्यत्प्रेति तत्प्राणस्तदयं लोकस्तदिमं लोकमस्मिँल्लोक आभजति ॥४॥
 एत्यपानस्तदसौ लोकस्तदमुं लोकममुष्मँल्लोक आभजति ॥५॥
 वागिति तद्ब्रह्म तदिदमन्तरिक्षम् ॥६॥ भूर्भुवस्स्वरिति सा त्रयी-
 विद्या ॥७॥ उदिति सोऽसावादितयः । तद्यदुदित्युदिव श्लेष-

४ शय्या-। ५ त । ६-छस् । ७-असौ । ८ पात्र-। ९ पर्विक्-।
 १०-षान् ॥

१-आ । २ स्या-। ३ सत् ।

यति ॥८॥ तद्यदेकमेवाऽभिसम्पद्यते तस्मादेकवीरः । एको ह तु
 सन्वीरो वीर्यवान् भवति । आहाऽस्यैको^५ वीरो वीर्यवान्^६ जायते
 य एवं वेद ॥९॥ तद्गु होवाच आख्यायनिर्बहुपुत्र एष उद्गीथ^७ इत्ये-
 वोपासितव्यम् । बहवो हेत आदित्य^८ रश्मयस्त^९ऽस्य पुत्राः । तस्मा-
 द्बहुपुत्र एष उद्गीथ इत्येवोपासितव्यमिति ॥१०॥११॥१२॥

तृतीयेऽनुवाके तृतीयः खण्डः । तृतीयोऽनुवाकस्समाप्तः ।

देवासुरास्समयतन्तेत्याहुः । न ह वै तदेवासुरास्सम्येतिरे ।
 प्रजापतिश्च ह वै तन्मृत्युश्च सम्येताते ॥१॥ तस्य ह प्रजापतेर्देवाः
 मियाः^१ पुत्रा अन्त आसुः । तेऽधियन्त तेनोद्गात्रा दीक्षामहै येना-
 ऽपहस्य मृत्युमपहस्य प्राप्मानं स्वर्गं लोकमियामेति ॥२॥ तेऽब्रुवन्वा-
 चोद्गात्रा दीक्षामहा इति ॥३॥ ते वाचोद्गात्राऽदीक्षन्त । तेभ्य^२
 इदं वागागायद्यदिदं वाचा वदति यदिदं वाचा भुञ्जते ॥४॥
 ताम्पाप्माऽन्वसृज्यत । स यदेव वाचा प्रापं वदति स एव स पाप्मा ॥५॥
 तेऽब्रुवन् न वै नोऽयममृत्युं न पाप्मानमस्यवाचीत्^३ । मनसोद्गात्रा
 दीक्षामहा इति ॥६॥ ते मनसोद्गात्रा दीक्षन्त । तेभ्य इदम्मन

४-इयेष-॥५-ए। ६-यावान् । ७-ए(इत्य) । ८-आदित्यस्य । ९-त ॥

१-याय । २-‘नोद्गात्रा दीक्षामहा इति’ अधिक है पर ‘ते’

और ‘भ्य’ के बीच लाल रङ्ग से काटा गया है । ३-अवत्य-

आगायद्यदिदम्नसा ध्यायति यदिदम्नसा भुञ्जते ॥७॥ तत्पा-
 प्माऽन्वसृज्यत । स यदेव मनसा पापं ध्यायति स एव स
 पाप्मा ॥८॥ तेऽब्रुवन्नोन्वाव नोऽयं मृत्युं न पाप्मानमसवाक्षीव ।
 चक्षुषोद्वात्रा दीक्षामहा इति ॥९॥ ते चक्षुषोद्वात्राऽदीक्षन्त ।
 तेभ्य इदं चक्षुरागायद्यदिदं चक्षुषा पश्यति यदिदं चक्षुषा
 भुञ्जते ॥१०॥ तत्पाप्माऽन्वसृज्यत । स यदेव चक्षुषा पापमपश्यति
 स एव स पाप्मा ॥११॥ तेऽब्रुवन्नोन्वाव नोऽयममृत्युं न पाप्मा-
 नमसवाक्षीव । श्रोत्रेणोद्वात्रा दीक्षामहा इति ॥१२॥ ते श्रोत्रेणो-
 द्वात्राऽदीक्षन्त । तेभ्य इदं श्रोत्रमागायद्यदिदं श्रोत्रेण शृणोति
 यदिदं श्रोत्रेण भुञ्जते ॥१३॥ तत्पाप्माऽन्वसृज्यत । स यदेव
 श्रोत्रेण पापं शृणोति स एव स पाप्मा ॥१४॥ तेऽब्रुवन्नोन्वाव
 नोऽयं मृत्युं न पाप्मानमसवाक्षीव । प्राणेनोद्वात्रा दीक्षामहा
 इति ॥१५॥ ते प्राणेनोद्वात्राऽदीक्षन्त । तेभ्य इदं प्राण आगाय-
 द्यदिदं प्राणेन प्राणिति यदिदं प्राणेन भुञ्जते ॥१६॥ तत्पाप्मा-
 ऽन्वसृज्यत । स यदेव प्राणेन [पापं] प्राणिति स एव स
 पाप्मा ॥१७॥ तेऽब्रुवन्नोन्वाव नोऽयं मृत्युं न पाप्मानमसवाक्षीव ।
 अनेन मुख्येन प्राणेनोद्वात्रा दीक्षामहा इति ॥१८॥ तेऽनेन
 ४-त्यु । ५ 'स' अधिक है । ६ ने ।

मुख्येन प्राणेनोद्गात्राऽदीक्षन्त ॥१६॥ सोऽब्रवीन्मृत्युरेष एषां स
 उद्गाता येन मृत्युमस्येष्ट्यन्तीति ॥२०॥ न ह्येतेन प्राणेन पापं
 वदति न पापं ध्यायति न पापम्पश्यति न पापं शृणोति न पापं
 गन्धमपानिति ॥२१॥ तेनाऽपहस्य मृत्युमपहस्य पाप्मानं स्वर्गं
 लोकमायन्^५ । अपहस्य हैव मृत्युमपहस्य पाप्मानं स्वर्गं लोकमेति य
 एवं वेद ॥२२॥२१०॥

चतुर्थेऽनुवाके प्रथमः खण्डः ।

स यथा हत्वा प्रमृष्टाऽतीयादेवमेवैतन्मृत्युमत्यायन् ॥१॥
 स वाचम्प्रथमामत्यवहत् । ताम्परेण मृत्युं^२ न्यदधात् । सोऽग्निर-
 भवत् ॥२॥ अथ मनोऽत्यवहत् । तत्परेण मृत्युं^३ न्यदधात् । स
 चन्द्रमा अभवत् ॥३॥ अथ चक्षुरत्यवहत् । तत्परेण मृत्युं^३ न्यदधात् ।
 स आदित्योऽभवत् ॥४॥ अथ श्रोत्रमत्यवहत् । तत्परेण
 मृत्युं^३ न्यदधात् । ता इमा दिशोऽभवन् । ता उ एव विश्वे देवाः
 ॥५॥ अथ प्राणमत्यवहत् । तम्परेण मृत्युं^३ न्यदधात् । स वायुर-
 भवत् ॥६॥ अथाऽऽत्मने^४ केवलमेवाऽन्नाद्यमागायत् ॥७॥ स एष

७-यम् । ८ गमयन् ।

१ स अधिक है, 'अत्यायन्' के स्थान में-यत् । २-यु । ३-न ।
 ४ दथा ।

एवाऽयास्यः । आस्ये^५ धीयते^६ । तस्मदयास्यः । यद्वेवा^७ [ऽयम्]
 आस्य^८ रमते तस्माद्वेवाऽयास्यः^९ ॥८॥ स एष एवाऽऽङ्गिरसः ।
 अतो^{१०} हीमान्यङ्गानि रसं लभन्ते । तस्मादाङ्गिरसः^{१०} । यद्वेवैषा-
 मङ्गानां रसस्तस्मा द्वेवाऽऽङ्गिरसः ॥९॥ तं देवा अब्रुवन् केवलं
 वा आत्मनेऽन्नाद्यमागासीः । अनु न एतास्मिन्ननाद्य^{११} आभज ।
 एतदस्याऽनामयत्वमस्तीति^{१२ १३} ॥१०॥ तं वै प्रविशतेति । स वा
 आकाशान्^{१४} कुरुष्वेति । स इमान् प्राणानाकाशान्कुरुत^{१५ १६} ॥११॥
 तं वागेव भूत्वाऽग्निः प्रविशन्मनो^{१८} भूत्वा चन्द्रमाश्चक्षुर्भूत्वा
 ऽऽदित्यश्चोत्रम्भूत्वा दिशः प्राणो भूत्वा वायुः ॥१२॥ एषा वै
 दैवी परिषदैवी सभा दैवी संसत् ॥१३॥ गच्छति ह वा एतां^{१७}
 दैवीम्परिषदं दैवीं सभां दैवीं संसदं य एवं वेद ॥१४॥ ११॥

चतुर्थेऽनुवाके द्वितीयः खण्डः ।

यत्रो ह वैक^१ चैता^१ देवता निस्पृशन्ति न ह्येव तत्र कश्चन
 पाप्मान्यङ्गः परिशिष्यते ॥१॥ स विद्यान्नेह कश्चन पाप्मान्यङ्गः
 परिशोध्यते सर्वमैवैता^२ देवताः पाप्मानं निधत्त्यन्तीति । तथा ह्येव

१ आसे । ६ ध्यति । ७ एष । ८ स्ये । ९-ंयास्यः । १० अङ्ग-
 ११ अः । १२ आमयत्वम् । १३ असी । १४ आकाशात् ।
 १५ आशासनम् । १६ कुरुत । १७ 'न' नास्ति । १८ प्रवी-॥

१ चे । २ क्षते । ३ एवम् । ४ एता ।

भवति ॥२॥ य उ ह वा ए०विदमृच्छति^५ यथैता देवता ऋत्वा
 नीयादेवं न्येति^७ । एतासु ह्येवेन देवतासु प्रपन्नमेतासु वसन्तमुप-
 वदति ॥३॥ तस्य हैतस्य नैव काचनाऽऽर्तिरस्ति य एवं वेद । य
 एवेनमुपवदति स आर्तिमार्च्छति^८ ॥४॥ स य ए०मृच्छादेव तादेवता
 उपसृत्य ब्रूयादयम्माऽऽरत्^{११} स इमामार्तिं न्येत्विति^{१२} । तां ह्येवाऽऽर्तिं
 न्येति ॥५॥ यावदावासा उ हाऽस्येमे प्राणा अस्मिँल्लोक एतावदा-
 वासा उ हाऽस्यैता देवता अमुष्मिँलोके भवन्ति ॥६॥ तस्मादु
 ह्येवं विद्वान्नैवाऽगृह्णतायै विभीयान्नाऽलोकतायै^{१४} । एता मे देवता
 अस्मिँलोके गृहान् करिष्यन्ति । एता अमुष्मिँलोके भवन्ति ।
 तस्मादु लोकम्प्रदास्यन्तीति ॥७॥ तस्मादु ह्येवं विद्वान्नैवाऽगृह्णतायै^{१५}
 विभीयान्नाऽलोकतायै । एता मे देवता अस्मिँलोके गृहेभ्यो
 गृहान् करिष्यन्ति स्वेभ्य आयतनेभ्य इति ह्येव विद्याद् [एता]
 देवता अमुष्मिँलोके लोकम्प्रदास्यन्तीति ॥८॥ तस्मादु ह्येवं^{१६}

५-विदू वा विद । ६-दुच्छति । ७-नेति । ८-तीर् । ९-आच्छति ।

१०-एम् । ११-रात् । १२-अस्ति । १३-दावशा । १४-ग्रह- । १५-अस्मिन् ।
 १६-प्रवदा- । १७-‘आयतनेभ्य’ अधिक है । १८-एव ता ॥

विद्वान्नैवाऽगृहतायै विभीयान्नाऽलोकतायै एता म एतदुभयं
संनस्यन्तीति हैव विद्यात् । तथा हैव भवति ॥६॥२॥१२॥

चतुर्थेऽनुवाके तृतीयः खण्डः । चतुर्थोऽनुवाकस्समाप्तः ।

देवा वै ब्रह्मणो वत्सेन^१ वाचमदुहन् । अग्निर्ह वै ब्रह्मणो
वत्सः ॥१॥ सा या सावाग्रब्रह्मैव तत् । अथ योऽग्निर्मृत्युस्सः ॥२॥
तामेतां वाचं यथा धेनुं वत्सेनोपसृज्य प्रत्तां दुहीतैवमेव देवा वाचं
सर्वान्कामानदुहन् ॥३॥ दुहे ह वै वाचं सर्वान्कामान्य एवं वेद ।
स हैषोऽनानृतो वाचं देवीमुदिन्धे^४ वद वद वदेति ॥४॥ तद्यदिह^६
पुरुषस्य पापं कृतम्भवति तदाविष्करोति । यदिहैनदपि रहसीव
कुर्वन्मन्यतेऽथ^७ हैनदाविरेव करोति । तस्माद्वा पापं न
कुर्यात् ॥५॥२॥१३॥

पञ्चमेऽनुवाके प्रथमः खण्डः ।

एष उ ह वाव देवानां नेदिष्टमुपचर्यो यदग्निः ॥१॥ तं
साधूपचरेत् । य एनमस्मिलोके साधूपचरति^१ तमेधोऽमुष्मिलोके

१ पस्तेन, पत्सेन । २ वक्ष- । ३-२ । ४ जहे । ५ उदिग्धे ।
६ अग्निह । ७-त । ८ अथ- । ९ 'एष उ ह वा' दूसरे अनुवाक का
यहां अधिक है ॥

१ चरति ।

साधूपचरति । अथ य एनमस्मिँलोके नाऽऽद्रियते तमेषोऽसुखि-
लोके नाऽऽद्रियते । तस्माद्वा अग्निं साधूपचरेत् ॥२॥ तं नैव
हस्ताभ्यां स्पृशेन्न पादाभ्यां न दण्डेन^२ ॥३॥ हस्ताभ्यां स्पृशति
यदस्याऽन्तिकमवनेनिके । अथ यदिभिन्नसारयति तत्पादा-
भ्याम् ॥५॥ स एनमास्पृष्ट ईश्वरो दुर्घायां धातोः । तस्माद्वा
अग्निं साधूपचरति । सुधायां हैवैनं दधाति ॥६॥२१४॥

पञ्चमेऽनुवाके द्वितीयः खण्डः ।

एष उ ह वाव देवानाम्महाशनतमो यदाग्निः ॥१॥ तन्न
व्रत्यमददानोऽश्नीयात् । यो वै महाशनेऽनश्नत्यश्नातीश्वारो हैनम-
भिषङ्क्तोः । पूतेमिव हाऽश्नीयात्^६ ॥२॥ अथो ह प्रोक्तेऽशने ब्रूयात्
समिन्त्स्वाग्निमिति । स यथा प्रोक्तेऽशने श्रेयाँसम्परिवेष्टवै
ब्रूयात्तादृक् तव^७ ॥३॥ एतद्ब्रू ह वाव साम यद्राक् । यो वै चक्षु-
स्साम श्रोत्रं सामेत्युपास्ते न ह तेन करोति ॥४॥ अथ य
आदित्यस्साम चन्द्रमास्सामेत्युपास्ते न हैव तेन करोति ॥५॥
अथ यो वाक् सामेत्युपास्ते स एवाऽनुष्ठया साम वेदं । वाचा हि

२ तण्डेनम्, तण्डैनम् ।

१ प्र- २ ददासीनो । ३ अभिष(अ)ङ्क्ताः ।
४-६ । ५ इवमिव । ६ ऽग्नी- ७ तम् । ८ ना । ९ यद् ।

साम्नाऽऽत्विज्यं क्रियते ॥६॥ स यो वाचस्सवरो जायते सोऽ
 त्रिर्वाग्वेव वाक् । तदत्रैकधा साम भवति ॥७॥ स य एवमेतदे-
 कधा साम भवद्वेदैवं हैतदेकधा साम भवतीत्येकधेव श्रेष्ठस्स्वा-
 नास्भवति ॥८॥ तस्मादु हैवंविदमेव साम्नाऽऽत्विज्यं कारयेत् ।
 स ह वाव साम वेद य एवं वेद ॥६॥२॥१५॥

पञ्चमेऽनुवाके तृतीयः खण्डः । पञ्चमोऽनुवाकस्समाप्तः ॥

[तृतीयोऽध्यायः ।]

एका ह वाव कृत्स्ना देवताऽर्धदेवता एवाऽन्याः । अयमेव
योऽयम्पवते ॥१॥ एष एव सर्वेषां देवानां ग्रहाः ॥२॥ स हैषो-
ऽस्तं नाम । अस्तमिति हेह पश्चाद्ग्रहानाचक्षते ॥३॥ स यदादिसो-
ऽस्तमगादिति ग्रहानगादिति हैतत् । तेन सोऽसर्वः । स एतमेवा-
ऽप्येति ॥४॥ अस्तं चन्द्रमा एति । तेन सोऽसर्वः । स एतमेवाऽप्ये-
ति ॥५॥ अस्तं नक्षत्राणि यन्ति । तेन तान्यसर्वाणि ।
तान्येतमेवाऽपियन्ति ॥६॥ अन्वग्निर्गच्छति । तेन सोऽसर्वः । स
एतमेवाऽप्येति ॥७॥ एषहः । एति रात्रिः । तेन ते असर्वे । ते
एतमेवाऽपीतः ॥८॥ मुह्यन्ति दिशो न वै तां रात्रिम्प्रज्ञायन्ते ।
तेन ता असर्वाः । ता एतमेवाऽपियन्ति ॥९॥ वर्षति च पर्जन्य
उच्च गृह्णाति । तेन सोऽसर्वः । स एतमेवाऽप्येति ॥१०॥ क्षीयन्त
आप एवमोषधय एवं वनस्पतयः । तेन तान्यसर्वाणि ।
तान्येतमेवाऽपियन्ति ॥११॥ तद्यदेतत्सर्वं वायुमेवाऽप्येति तस्माद्वा-

१ पँचा । २-रः । ३-ताः । ४ तां । ५ 'स साम वेद' अधिक है ।

६ एष- , ओषा-

दुरेव साम ॥१२॥ स ह वै सामवित्स [कृत्स्नं] साम वेद य एवं
 वेद ॥१३॥ अथाऽध्यात्मम् । न वै स्वपन् वाचा वदति । सेयमेव
 प्राणमप्येति ॥१४॥ न मनसा ध्यायति । तदिदमेव प्राणमप्ये-
 ति ॥१५॥ न चक्षुषा पश्यति । तदिदमेव प्राणमप्येति ॥१६॥
 न श्रोत्रेण शृणोति । तदिदमेव प्राणमप्येति ॥१७॥ तद्यदेतत्सर्व-
 म्प्राणमेवाऽभिसमेति तस्मात्प्राण एव साम ॥१८॥ स ह वै
 सामवित्स कृत्स्नं साम वेद य एवं वेद ॥१९॥ तद्यदिदमाहुर्न
 बताऽद्य वातीति[स] हैतत्पुरुषेऽन्तर्निरमते स पूर्णस्त्वेदमान
 आस्ते ॥२०॥ तद् शौनकं च कोपेयमभिप्रतारिणं च[काक्षसेनिम्]
 ब्राह्मणः परिवेविष्यमाणा उपावव्राज ॥२१॥२१॥

प्रथमेऽनुवाके प्रथमः खण्डः ।

तौ ह बिभिच्चे । तं ह नाऽऽदद्राते को वा कोवेति मन्यमानौ
 ॥१॥ तौ होपजगौ ।

महात्मनश्चतुरो देव एकः कस्तं जगार भुवनस्य गोपाः ।

ते कोपेय न विजानन्त्यकेऽभिप्रतारिन् बहुधा निविष्टम् ॥

७ अमम् । ८-यति । ९-मिते । १०-गा । ११-काश् १२ विष्या- ।

१३-प्राजा ॥

१ छिम्-१ द्राते । २ सो । ३ कालपेय । ४ निचिन्दम् ।

इति ॥२॥ स होवाचाऽभिप्रतारिमं वाव प्रपद्य प्रतिब्रूहीति ।

त्वया वा अयम्प्रत्युच्य इति ॥३॥ तं ह प्रत्युवाच—

आत्मा देवानामुत मर्त्यानां हि स्थयदन्तो रपसो न स्रुः ।

महान्तमस्य महिमानमाहुरनद्यमानो यददन्तमिति ॥

इति ॥४॥ महात्मनश्चतुरो [देव] एक इति । वाग्वा अभिः ।

स महात्मा देवः । स यत्र स्वपिति तद्वाचम्प्राणो गिरति ॥५॥

मनश्चन्द्रमास्स महात्मा देवः । स यत्र स्वपिति तन्मनः प्राणो

गिरति ॥६॥ चक्षुरादित्यस्स महात्मा देवः । स यत्र स्वपिति

तच्चक्षुः प्राणो गिरति ॥७॥ श्रोत्रं दिशस्ता महात्मानो देवाः ।

स यत्र स्वपिति तच्छ्रोत्रं प्राणो गिरति ॥८॥ तद्यन्महात्मनश्चतुरो

देव एक इत्येतद् तव ॥९॥ कस्स जगारेति । प्रजापतिर्वै कः । स

हैतज्जगत् ॥१०॥ भुवनस्य गोपा इति । स उवाच भुवनस्य गोपाः

॥११॥ तं कापेय न विजानन्त्येक इति । न हेतमेके विजानन्ति ॥१२॥

अभिप्रतारिन् बहुधा निविष्टमिति । बहुधा ह्येवैष निविष्टो यत्प्राणः

॥१३॥ आत्मा देवानामुत मर्त्यानामेति । आत्मा ह्येष देवाना-

६ म(अ)म, मा । ७ वय्या, यय्या । ८ अया । ९ वाव । १०-युष्मे ।

११ इति । १२-याव । १३ मत्य्- । १४ परसो । १५ नु । १६ मभि-

१७ यदि । १८ दतम्, दैतम् । १९ अति । २० पाशु, वा । २१ या ।

२२ स्वतिपिति । २३-न, इस के पञ्चात् प्रा । २४-अर् । २५ महात्मा

अधिक है । २६ क । २७ सो । २८ जगत्- । २९-एव । ३०-यो ।

मुत मर्त्यानाम् ॥१४॥ हिरण्यदन्तो रपसो न सूनुरिति । न ह्येष
 सूनुः । सूनुरूपो^{३१} ह्येष सन्न^{३२} सूनुः ॥१५॥ महान्तमस्य महिमानमा-
 दुरिति । महान्तं^{३३} ह्येतस्य महिमानमाहुः^{३४} ॥१६॥ अनद्यमानो
 यददन्तमतीति । अनद्यमानो ह्येषोऽदन्तमत्ति ॥१७॥३१२॥

प्रथमेऽनुवाके द्वितीयः खण्डः ॥

तस्यैष श्रीरात्मा समुद्रूहो यदसावादिसः । तस्माद्वायत्रस्य स्तोत्रे
 णाऽवान्यान्नेच्छिया अवच्छिद्या^२ इति ॥१॥ स एष एवोक्तम् ।
 यत्पुरस्तादवानिति तदेतदुक्तस्य शिरो यदक्षिणतस्स दक्षिणः पक्षो
 यदुत्तरतस्स उत्तरः पक्षो यत्पश्चात्[तव]पुच्छम् ॥२॥ अथमेव
 प्राण उक्तस्याऽऽत्मा । स य एवमेतमुक्तस्याऽऽत्मानमात्मन्प्रतिष्ठितं
 वेद स हाऽमुष्मिं लोके साङ्गस्सतनुस्[सर्वस्]सम्भवति ॥३॥
 शब्द वा अमुष्मिंलोके यदिदम्पुरुषस्याऽऽण्डौ शिश्रं कर्णौ नासिके
 यत्किं चाऽनस्थिकं न सम्भवति ॥४॥ अथ य एवमेतमुक्तस्या-
 ऽऽत्मानमात्मन्प्रतिष्ठितं वेद स हैवाऽमुष्मिंलोके साङ्गस्सतनुस्सर्व-
 स्सम्भवति ॥५॥ तदेतद्वैश्वामित्रमुक्तम् । तदन्नं वै विश्वम्प्राणो मित्रम्

३१-से । ३२ नम् । ३३ स् । ३४ आहुर् । और 'इति महान्त
 ह्येतस्य महिमाहुः' अधिक है । ३५ अन्तम् । ३६ सूनुर-॥

१ समाद्र- । २ वक्ष्य- । ३ वा इति । ४-इणः । ५ सद् । ६ तद् ।
 ७ सांगतस् । ८ तद् । ९ अक्ष- ।

॥६॥ तद्ध विश्वामित्रश्रमेण तपसा व्रतचर्येणोन्द्रस्य प्रियं धामो-
 पजगाम ॥७॥ तस्मा उ हैतत्प्रोवाच यदिदम्मनुष्यानागतम् ॥८॥
 तद्ध स उपनिषसाद ज्योतिरेतदुक्थमिति ॥९॥ ज्योतिरिति द्वे
 अक्षरे प्राण इति द्वे अन्नमिति द्वे । तदेतदन्न एव प्रतिष्ठितम् ॥१०॥
 अथ हैनं जमदग्निरुपनिषसादाऽऽयुरेतदुक्थमिति ॥११॥ आयुरिति
 द्वे अक्षरे प्राण इति द्वे अन्नमिति द्वे । तदेतदन्न एव प्रतिष्ठितं ॥१२॥
 अथ हैनं वासिष्ठ उपनिषसाद गौरेतदुक्थमिति । तदेतदन्नमेव ।
 अन्नं हि गौः ॥१३॥ तदाहुर्यदस्य प्राणस्य पुरुषश्शरीरमथ केना-
 ऽन्ये प्राणाश्शरीरवन्तो भवन्तीति ॥१४॥ स ब्रूयाद्यद्वाचा वदति
 तद्वाचश्शरीरं यन्मनसा ध्यायति तन्मनसश्शरीरं यच्चक्षुषा पश्यति
 तच्चक्षुषश्शरीरं यच्छ्रोत्रेण शृणोति तच्छ्रोत्रस्य शरीरम् । एवमु-
 हाऽन्ये प्राणाश्शरीरवन्तो भवन्तीति ॥१५॥ ३॥३॥

प्रथमेऽनुवाके तृतीयः खण्डः ।

तदेतदुक्थं सप्तविधम् । शस्यते स्तोत्रियोऽनुरूपो धार्या
 प्रगाथस्मृक्तं निवित्परिधानीया ॥ १ ॥ इयमेव स्तोत्रियो

१० प्र-। ११ तद्ध । १२ उत्थ-। १३ (-साद) गौर्, आयुर्गौर् ।
 १४-द्ध । १५ उ.तेद्ध । १६ ऽन्येन ।

१ ऽग्निर् अधिक है । २-नीयम् । ३ नास्ति ।

प्रभिरनुरूपो वायुर्धा^५र्यान्तरित्प्रगाथो^५ द्यौस्सूक्तमादित्यो निविद ।
 तस्माद्ब्रह्मचा उदिते निविदमधीयन्ते । आदित्यो हि निविद ।
 दिशः परिधानीयेत्यधिदेवतम् ॥ २ ॥ अथाध्यात्मम् । आत्मैव
 स्तोत्रियः प्रजा^६नुरूपः प्राणो^६ धार्या^६ मनः प्रगाथदिशरस्सूक्तं^७
 चक्षुर्निविच्छ्रोत्रम्परिधानीया^७ ॥ ३ ॥ तद्वैतदेके त्रिष्टुभा परिदधत्य-
 नुष्टमैके । त्रिष्टुभात्वेव परिदध्यात् ॥ ४ ॥ तद्वैतदेक एता व्याहृती-
 रभिव्याहृत्य शंसन्ति^८ महान्मह्या^९ समधत्त देवो देव्या समधत्त
 ब्रह्म^{१०} ब्राह्मण्या^{१०} समधत्त । तद्यत्समधत्त समधत्तेति ॥ ५ ॥ तस्मा-
 दिदानी^{११}म्पुरुषस्य शरीराणि प्रतिसंहितानि । पुरुषो ह्येतदुक्तम्
 ॥ ६ ॥ महान्मह्या समधत्तेति । अग्निर्वै महानियमेव मही ॥ ७ ॥
 देवो देव्या समधत्तेति । वायुर्वै देवोऽन्तरित्तं^{१२} देवी ॥ ८ ॥ ब्रह्मा
 ब्राह्मण्या^{१३} समधत्तेति । आदित्यो वै ब्रह्म द्यौर्ब्राह्मणी^{१३} ॥ ९ ॥ तासां
 वा एतासां देवतानां द्वयोर्द्वयोर्देवतयोर्नव-नवा^{१४}स्ताराणि सम्पद्यन्ते ।
 एतादि^{१५}र्मे लोकास्त्रिणवा^{१६} भवन्ति ॥ १० ॥ तद्ब्रह्म वै त्रिवृत् ।
 तद्ब्रह्माभिव्याहृत्य शंसन्ति । एष उ एव स्तोमस्सो^{१८}ऽनुचरः ॥ ११ ॥

४ आस्या, आर्या । ५ प्राग्- । ६ धार्या । ७-धात्मी- ।
 ८ तदुक्तम् अधिक है (हासिये में) ? । ९-य । १०-मह्या । ११ इदानी ।
 १२-वा । १३-भ्यो । १४-यो । १५-भ्यो । १६-कौ । १७ वा । १८ सा ।

यदिममाहुरेकलोम इत्ययमेव योऽयम्पवते । एषोऽधिदेवत्वम् ।
प्राणोऽध्यात्मम् । तस्य शरीरमनुचरः ११ ॥ तद्यथा ह वै मणौ
मणिसूत्रं सम्प्रोतं स्याद्-॥१३॥१४॥

प्रथमेऽनुवाके चतुर्थः खण्डः ।

१-एवं हैतस्मिन्सर्वमिदं सम्प्रोतं गन्धर्वाप्सरसः पशवो
मनुष्याः ॥१॥ तद्ध मुञ्जस्सामश्रवसः ३ प्रययौ । तस्मै ह ४ श्वाजनिर्वै-
श्यः प्रेयाय ५ ॥२॥ तस्य हाऽन्तरिक्षात्पतित्वा नवनीतपिण्ड उरासि
निपपात । तं हाऽऽदायाऽनुदधौ ॥३॥ ततो ह वै स्तोमं ददर्शाऽन्तरिक्षे
विततम्बहुशोभमानम् । तस्यो ह युक्तिं ददर्श ॥४॥ बहिष्पवमान-
मासश्च टीत्र विधि प्राणय इति कुर्यात् टीत्र गृहित्र १० अपान्य इति
वाचा । दिदक्षेतैवाऽक्षिभ्यं शुश्रूषेतैव कर्णाभ्याम् । स्वयामेदम्प-
नोयुक्तम् ॥५॥ तद्यत्र वा इषुरत्यग्रो भवति न वै स ततो
हिनस्ति ११ तद् वा एतं नोपाप्नुयात् १२ । प इत्येवाऽपान्यात् । तद्यथा
बिम्बेन मृगमानयेदेवमेवैनमेतया देवतयाऽऽनयति । स युक्तः
करोति । १३ एष एवापि युक्तः १४ ॥६॥१५॥

प्रथमेऽनुवाके पञ्चमः खण्डः । प्रथमोऽनुवाकस्समाप्तः ॥

१६-रन्तम् ॥

१ एवम् (एवा) के पहले पञ्चम कं० का द्वि० वाक्य । २ मौञ्ज-१ ३
साहश्-१ ४ तमस्मै । ५ प्रोयाय । ६ तेतो ७-अ । ८-इ । ९ टीत्त्र, पहला
अक्षर ल भी हो । १० गृहित् । ११ अस्ति । हनस्ति । १२ यद् । १३-यो । १४-ति ॥

योऽसौ साम्नः प्र॑त्तिं वेद॑ प्र हास्मै दीयते ॥१॥ ददा॑ इति ह वा
 अयमाग्नेर्दीप्यते तथेति वायुः पवते हन्तेति चन्द्रमा ओमित्या-
 दित्यः ॥२॥ एषा ह वै साम्नः प्र॑त्तिः । एतां ह वै साम्नः प्र॑त्तिं
 सु॒दक्षिणः॑ क्षैमिर्विदां चकार ॥३॥ तां हैतां होतुर्वाऽऽज्ये गायन्मै-
 त्रावरुणस्य वा तां ददा॑ तथा॑ हन्ता॑ हिम्भा ओवा इति ।
 प्र ह वा अस्मै दीयते ॥४॥ [सो] ऽप्यन्यान् ब॒हूनु॑पर्युपरि॑ य
 ए॒वमे॒तां साम्नः प्र॑त्तिं वेद ॥५॥ य उ ह वा अब॑न्धुर्बन्धुमत्साम
 वेद यत्र हाऽप्येनं न विदुर्यत्र रोषन्ति यत्र परीवच॑क्षते तद्वाऽपि
 श्रैष्ठ्यमाधिपत्यमन्नाद्यम्पुरोधा॑म्पर्येति ॥६॥ अग्निर्ह वा
 अब॑न्धुर्बन्धुमत्साम । कस्माद्वा ह्येनं दा॒र्वोः कस्माद्वा पर्या॑वृत्य
 मन्थ॑न्ति स श्रैष्ठ्यायाऽऽधिपत्यायाऽन्नाद्याय पुरोधा॑यै जायते
 ॥७॥ स यत्र ह वा अप्ये॒वंविदं॑ न विदुर्यत्र रोषन्ति यत्र परीव-
 च॑क्षते तद्वाऽपि श्रैष्ठ्यमाधिपत्यमन्नाद्यम्पुरोधा॑म्पर्येति ॥८॥ ३॥ ६॥

द्वितीयेऽनुवाके प्रथमः खण्डः ।

स्वयमु तत्र यत्रैनं विदुः ॥१॥ सु॒दक्षिणो॑ ह वै क्षैमिः प्राचीनशा-
 लिर्जाबालौ ते ह स॒ब्रह्म॑चारिण आसुः ॥२॥ ते हैमे॑ बहु जप्यस्य

१ प्र॑त्ति । २ तदान्, ददान् । ३ प्र॑त्तिः, प्रवृ॑त्तिः । ५ तौ ।
 ह 'हन्ता॑' अधिक है । ७ नास्ति । ८ अप्य् । ९-ह्यन्य । १०-उप ।
 ११-पु । १२-धा । १३ श्रेष्ठ- । १४-आये । १५ परि॑ ॥

१-शाःखिर । २ है ।

चाऽन्यस्य चाऽनूचिरे^३ प्राचीनशालिश्च^४ जाबालौ च ॥३॥ अथ^५ ह
 स्म सुदक्षिणः^५ क्षैमिर्यदेव यज्ञस्याज्जो यत्सुविदितं तद् स्मैव
 पृच्छति ॥४॥ त उ ह वा अपोदिता व्याक्रोशमानाश्चैरुशद्रो^{६ ७}
 बुरनूचान इति ह स्म सुदक्षिणं क्षैमिमाक्रोशन्ति प्राचीनशालिश्च^८
 जाबालौ च ॥५॥ स ह स्माऽऽह सुदक्षिणः क्षैमिर्यत्र भूयिष्ठाः
 कुरुपञ्चालास्मागता भवितारस्तन्न एष संवादो नाऽनुपदष्टे शूद्रा
 इव संवदिष्यामह इति ॥६॥ ता उ ह वै जाबालौ दिदीक्षाते शुक्रश्च^{९ १}
 गोश्रुश्च^{१३} । तयोर्ह प्राचीनशालिर्द्यत उद्गाता ॥७॥ स तद् सुदक्षिणो
 ऽनुबुबुधे जाबालौ हाऽदीक्षिषातामिति । स ह संग्रहीतारमुवाचा-^{१५}
 ऽऽनयस्वाऽरे जाबालौ हाऽदीक्षिषातां तद्गमिष्याव इति ॥८॥३॥७॥

द्वितीयेऽनुवाके द्वितीयः खण्डः ।

तस्य ह ज्ञातिका अश्रुमुखा इवाऽऽसुरन्यतरां वा
 अयमुपागादिति ॥१॥ अथ ह स्म वै यः पुराव्रह्मवाद्यं वदत्यन्य-
 तरामुपागादिति ह स्मेनम्मन्यन्ते । अथो ह स्मैनम्मृत्मिवैवोपासते
 ॥२॥ तं ह संग्रहीतोवाचाऽथ यद्गवस्ते ताभ्यां न कुशलं

२ हे । ३ ऋच्-१४-शाखाश् । ५-या । ६ प्य-१-आ । ७ चोरुश् ।
 ८-अथ । ९ अक्रोश-१० खीश् । ११-पतिष्य-१२ वदी-१३-रुश् ।
 १४ प्र-१५ संसं-१६ दिदीक्ष-१७-यास्वा ॥

^२कथेत्^३मात्थेति ॥३॥ ओमिति होवाच गन्तव्यम्^४ आचार्यस्मुय-
^४मानमन्यतेति ॥४॥ स ह रथमास्थाय प्रधावयांचकार । तं ह स्म
 प्रसीचन्ते ॥५॥ कं जानीतेति । सुदाक्षिण इति । न वै नूनं स
 इदमभ्यवेवादिति । स एवेति ॥६॥ स ह सोपानादेवाऽन्तर्वेद्यव-
 स्थायोवाचाऽङ्गनित्थं गृहपत्वा^३ इति । तं ह नाऽनूदतिष्ठा-
 सत् । स होवाचाऽनूत्थाता^{६ ७} म एवे । कृष्णाजिनोऽसी[ति] ।
 तदिमे कुरूपञ्चाला अविदुरनूत्थातैव त इति होचुः ॥७॥ तं ह
 कनीयान्भ्रातोवाचाऽनुत्तिष्ठ^{९ १० ११} । भगव उद्गातारमिति । तं हा
 ऽनूत्तस्यौ ॥८॥ स होवाच त्रिवै^{१२ १३ १४ १५} गृहपते पुरुषो जायते ।
 पितुरेवाग्नेऽग्नि जायतेऽथ मातुरथ यज्ञात् ॥९॥ त्रिवै^{१२ १३ १४ १५} त्रियत
 इति । स यद्ध वा एनमेतत्पिता योन्यां रेतो भूतं सिञ्चति-॥१०॥११॥

द्वितीयेऽनुवाके तृतीयः खण्डः ।

—तत्प्रथमम्व्रियते ॥१॥ अन्धमिव वै तमो योनिः । लोहि-
 तस्तोको वा वै स तदाभवत्यपां वा स्तोकः । किं हि स^३ तदा-
 भवति ॥२॥ स यस्तां देवतां वेद यां च^३ स ततोऽनुसम्भवति या

२ त- । ३ आचर- । ४ स्मृ- । ५-छेत्- । ६-ऊहा- ।
 ७ म । ८ 'इति' अधिक है । ९ आतो । १० वा । ११ अनुत्तिष्ठ ।
 १२ त्रिव । १३ अ, ऊ । १४ नास्ति । १५ त्रियत ॥
 १ अन्ध- । २ वो । ३ स ।

चैनं तम्मृत्युमतिवहति स उद्गाता मृत्युमतिवहतीति ॥३॥ अथ
य एनमेतदीक्षयन्ति^५ ताद्वितीयमिन्द्रयते । वपन्ति केशश्मश्रूणि ।
निकृन्तन्ति नखान् । प्रत्यञ्जन्त्यङ्गानि । प्रत्यचत्यङ्गुलीः ।
अपवृत्तोऽपवेष्टित आस्ते । न जुहोति । न यजते । न योषितं^१
चरति । अमानुषीं वाचं वदति । मृतस्य वावैष^{१०} तदा रूपम्भवति
॥४॥ स यस्तां देवतां वेद यां च स ततोऽनुसम्भवति या चैनं
तम्मृत्युमतिवहति स उद्गाता मृत्युमतिवहतीति ॥५॥ अथ य
एनमेतदस्माल्लोकात्प्रेतंचित्यामादधति तद् तृतीयमिन्द्रयते ॥६॥ स
यस्तां^{१२} देवतां वेद यां च स ततोऽनुसम्भवति या चैनं तम्मृत्यु-
मतिवहति^{१३} स उद्गाता मृत्युमतिवहतीति ॥७॥ एतावद्वैवोक्त्वा^{१४}
रथमास्थाय प्रधावयांचकार ॥८॥ तं ह जाबालम्प्रत्येतं कनीयान्
भ्रातोवाच^{१५} काम्भवाञ्छूद्रको वाचमवादीति । हस्तिना गाधमैषी-
रिति ॥९॥ प्र हैवैनं तच्छशंसयः कथमवोचद्गव इति । यस्त्रयाणा-
म्मृत्यूनां साम्नाऽतिवाहं वेद स उद्गाता मृत्युमतिवहतीति ॥१०॥ ११॥ १२॥

द्वितीयेऽनुवाके चतुर्थः खण्डः ।

४ चे । ५ दि-१६-अजत्य् । ७ यज्-१ ८ अव-१ ९ यौष-१० स ।
११ 'का' अधिक है । १२ यन्तस् । १३-तीति । १४ वा । १५ वहतीति'
अधिक है । १६-वच् ॥

तं वाव भगवस्ते पितोद्गातारममन्यतेति होवाच । तदु ह
 प्राचीनशाला विदुर्य एषामयं वृत उद्गाताऽऽस^३ । तस्मिन् ह ना-
 ऽनुविदुः ॥१॥ ते होचुरनुधावत काण्डवियमिति । तं हाऽनु-
 सस्रुः^५ । ते ह काण्डवियमुद्गातारं चकिरे ब्रह्माणं^६ प्राचीन-
 शालिम् ॥२॥ तं हाऽभ्यवेक्ष्योवाचैवमेष ब्राह्मणो मोघाय
 वादाय नाऽप्लायत् । स नाऽणु साम्नोऽन्विच्छतीति । अति हैवैनं
 तच्चक्रे ॥३॥ स यद्वा एनमेतत्पिता योन्यां रेतो भूतं सिञ्च-
 त्यादित्यो हैनं तद्योन्यां रेतो भूतं^९ सिञ्चति । स हाऽस्य तत्र
 मृत्योरीशे^{१२} ॥४॥ अथो यदेवैनमेतत्पिता योन्यां रेतो भूतं सिञ्चति^{१३}
 तद्वा वाव स ततोऽनुसम्भवति प्राणं च । यदा ह्येव रेतस्सिक्तं
 प्राणं आविशत्यथ तत्सम्भवति^{१४} ॥५॥ अथो यदेवैनमेतद्दीक्षयन्त्य-
 भिहैवैनं तद्योन्यां रेतो भूतं सिञ्चति । स हैवाऽस्य तत्र
 मृत्योरीशे^{१५} ॥६॥ अथो यामेवैतां वैसर्जनीयामाहुतिमध्वर्युर्जुहोति
 तमिव स ततोऽनुसम्भवति^{१६} कृन्दांसि चैव ॥७॥ अथ य एनमे-

१-प । २ विदुर् । ३ सः । ४ कान्त्यावयम् । ५-स्रः ।
 ६ ब्राह्मणम् । ७-वेक्ष्या । ८ न्वीच्- । ९ रणम् । १० नास्ति । ११ रत्- ।
 १२-ओ । १३ 'अथोवाच' अधिक है । १४ 'अथो य एनमेतद्दी-
 क्षयन्त्य'.....'तत्रमृत्योरीशे' अधिक है । १५ 'अथो यदेवैनमे-
 तद्दीक्षयन्ति' अधिक है । १६ आसि ।

तदस्माह्लोकात्प्रेतं चित्यामादधाति चन्द्रमा हैवैनं तद्योन्यां रेत्ने
भूतं सिञ्चति । स उ हैवाऽस्य तत्र मृत्योरीशे ॥८॥ अथो यदेवैन-
मेतदस्माह्लोकात् प्रेतं चित्यामादधत्यथो या एवैता अवोक्षणी-
या आपस्ता एव स ततोऽनुसम्भवति प्राणमेव । प्राणो ह्यापः ॥९॥
तं ह वा एवंविदुद्गाता यजमानमोमित्येतेनाक्षरेणाऽऽदित्यमृत्यु-
मतिवहति वागित्यग्निं हुमिति वायुम्भा इति चन्द्रमसम् ॥१०॥
तान् वा एतान्मृत्यून् साम्नोद्गाताऽऽत्मानं च यजमानं चाऽति-
वहत्योमित्येतेनाक्षरेण प्राणेनाऽमुनाऽऽदित्येन ॥११॥

तस्यैष श्लोकः—

उतैषां ज्येष्ठ उत वा किनष्ठ उतैषाम्पुत्र उत वा पितैषाम् ।

एको ह देवो मनसि प्रविष्टः पूर्वो ह जज्ञे स उ गर्भेऽन्तः—

इति ॥१२॥ तद्यदेशोऽभ्युक्तं^{२१} इममेव पुरुषं योऽयमाह्वो^{२२}
ऽन्तरोमित्येतेनैवाक्षरेण प्राणेनैवाऽमुनैवाऽऽदित्येन[...]^{२३} ॥१३॥३१०

द्वितीयेऽनुवाके पञ्चमः खण्डः । द्वितीयोऽनुवाकस्समाप्तः ॥

त्रिहं^१ वै पुरुषो अ्रियते त्रिर्जायते^२ ॥१॥ स हैतदेव प्रथमम्रियते
यदेतस्सिक्तं सम्भूतम्भवति । स प्राणमेवाऽभिसम्भवति । आंशाम्-

१७-आन् । १८-वन्तीति । १९-ता । २०-जैष्ठ । २१-तृण-
२२-अह्वान् ॥

१ हे । २ 'स हैतदेव प्रथमम्रियते त्रिर्जायते' अधिक है । ३सम्-

भिजायते ॥२॥ अथैतद्वितीयमिन्द्रियते यदीक्षते । स छन्दांस्येवा-
 ऽभिसम्भवति । दक्षिणामभिजायते ॥३॥ अथैतत् तृतीयमिन्द्रियते
 यन्मिन्द्रियते । स श्रद्धामेवाऽभिसम्भवति । लोकमभिजायते ॥४॥
 तदेतत् व्यावृत्तायत्रं गायति^१ । तस्य प्रथमयाऽऽवृत्तेर्ममेव लोकं जयति
 यदु चाऽस्मिँलोके । तदेतेन चैनम्प्राणेन समर्थयति^२ यमभिसम्भवसेतां
 चाऽस्मा आशाम् प्रयच्छति यामभिजायते ॥५॥ अथ द्वितीययाऽऽवृत्ते-
 र्दमेवाऽन्तरिक्षं जयति यदु चान्तरिक्षे । तदेतैश्चैनं छन्दोभिस्स-
 मर्थयति^३ यान्यभिसम्भवति । एतां चास्मै दक्षिणाम्प्रयच्छति याम-
 भिजायते ॥६॥ अथ तृतीययाऽऽवृत्ताऽमुमेव लोकम् जयति यदु
 चाऽमुष्मिँलोके । तदेतया चैनं श्रद्धया समर्थयति^४ ययैवैनमेतच्छ्रद्ध-
 याऽऽवृत्त्यादधति^५ समयमितो भविष्यतीति । एतं चास्मै लो-
 कम्प्रयच्छति यमभिजायते ॥७॥३॥१॥१॥

तृतीयेऽनुवाके प्रथमः खण्डः ।

एतद्वै तिसृभिराष्टाद्विरिमाँश्च लोकाञ्जयसेतैश्चैनम्भूतैस्समर्थय-
 ति^१ यान्यभिसम्भवति ॥१॥ अथ वा अतो हिङ्गारस्यैव । तं ह स्वर्गे
 लोके सन्तम्भृत्युरन्वेयशनया ॥२॥ श्रीर्वा एषा प्रजापतिस्साध्नो

४ ओव । ५-म । ६ त्रिय- । ७-अन्ति । ८ इम्-(!) । ९-सृध्- ।
 १० 'न्यभिसम्भवति' अधिक है लाल रंग से कटा हुआ । ११ च ।
 १२ ऽभाह् । १३-आ ।

१ धोक्- । २-सृध्- । ३ नास्ति । ४ सितम् । ५ अनेति । ६ श्री ।

यद्विष्णुः । तमिदुद्राता श्रिया प्रजापतिना हिङ्गुरेण मृत्युमपसेव-
ति ॥३॥ हुम्भोमेसाह माऽत्र नु गा यत्रैतद्यजमान इति हैतव ॥४॥
स यथा श्रेयसा सिद्धः पापीयान् प्रतिविजते एव हैवाऽस्मान्मृत्युः
पाप्मा प्रतिविजते ॥५॥ यन्मेत्याह चन्द्रमा वै मा मासः । एष
ह वै मा मासः । तस्मान्मेसाह । भा इति हैतत्परोक्षेणैव । यस्माद्वेक
मेसाह यद्वेव मेसाहेतानि त्रीणि । तस्मान्मेति ब्रूयात् ॥६॥ ११-१२॥

तृतीयेऽनुवाके द्वितीयः खण्डः ।

हुम्भा इति ब्रह्मवर्चसकामस्य । भातीव हि ब्रह्मवर्चसम् ॥१॥
हुम्भो इति पशुकामस्य । बो इति ह पशवो वाच्यन्ते ॥२॥ हुम्
वगिति श्रीकामस्य । वगिति ह श्रियम्पणायन्ति ॥३॥ हुम्
भा ओवा इत्येतदेवोपगीतम् ॥४॥ महादिवाऽभिपरिवर्त्यन् गाय-
दिति ह स्माऽऽह नाको महाग्रामो महानिवेशो भवतीति । स यथा
स्थाणुर्मर्पयिवेत्तरेण वेतरेण वा परियायात् तादृक्तव ॥५॥ तद्
होवाच शात्र्यायिनः कस्मै कामाय स्थाणुर्मर्पयेत् । अथोपगीतमे-
वैतत् । नैवैतदाद्रियेतेति ॥६॥ [इति] नु हिङ्गुराणाम् । अथ वा

७ पद । ८ 'इति' अधिक है । ९-विच- । १०-५ पदम् ।
११-भाग । १२-येव ॥

१-बो । २-श्रिङ्ग- , -सु । ३-वा, अयित्वा । ४-येव । ५-पर्या- ।
६-एतत् । ७-अत्र- । ८-हिङ्गुराणाम्- ।

अतो निधनमेव । ओवा इति द्वे अक्षरे । अन्तो वै साम्नो निधन-
 मन्तस्स्वर्गो लोकानामन्तो ब्रध्नस्य विष्टपम् ॥७॥ तमेतदुद्गाता
 यजमानमोमिषेतेनाक्षरेणान्ते स्वर्गे लोके दधाति ॥८॥ य उ
 ह वा अपक्षो वृक्षार्घं गच्छत्यव वै स ततः पद्यते । अथ यद्वै पक्षी
 वृक्षेऽग्रे यदसिधारायां यत्क्षुरधारायामास्ते न वै स ततोऽवपद्यते ।
 पक्षाभ्यां हि संयत^१ आस्ते ॥९॥ तमेतदुद्गाता यजमा-
 नमोमिषेतेनाक्षरेण स्वरपक्षं कृत्वाऽन्ते स्वर्गे लोके दधाति । स
 यथा पक्ष्यविभ्यदासीतैवमेव स्वर्गे लोकेऽविभ्यदास्तेऽथाऽऽचरति^{१०}
 ॥१०॥ ते ह वा एते अक्षरे देवलोकश्चैव मनुष्यलोकश्च । आदि-
 खश्च ह वा एते अक्षरे चन्द्रमाश्च ॥११॥ आदिस एव देवलोक-
 श्चन्द्रमा मनुष्यलोकः । ओमियादिसो वागिति चन्द्रमाः ॥१२॥
 तमेतदुद्गाता यजमानमोमिषेतेनाक्षरेणाऽऽदिसं देवलोकं गमय-
 ति ॥१३॥३॥१३॥

तृतीयोऽनुवाके तृतीयः खण्डः ।

तं हाऽऽगतमृच्छति कस्त्वमसीति । स यो ह नाम्ना वा गो-
 त्रेण वा प्रब्रूते तं हाऽऽह यस्तेऽयम्मयात्माऽभूदेष ते स इति ॥१॥

६ हिंस्रयत । १०-अं । ११-य ॥

१-य्य ।

तस्मिन् हाऽऽत्पन् प्रतिपत् । तमृतवस्सम्पदार्थं पदं दृष्टीतमपकर्षन्ति ।
 तस्य हाऽहोरात्रे लोकमाप्नुतः ॥२॥ तस्मा उ हैतेन^३ प्रब्रुवीत^४ को-
 ऽहमस्मि सुवस्त्वम् । स त्वां स्वर्ग्यं^५ स्वरगामिति ॥३॥ को ह वै
 प्रजापतिरथ हैवं विदेव सुवर्गः^६ । स हि सुवर्गच्छति ॥४॥ तं हा-
 ऽऽह यस्त्वमसि सोऽहमस्मि योऽहमस्मि स त्वमस्येहीति ॥५॥
 स एतमेव सुकृतरसम्प्रविशति । यदु ह वा अस्मिँल्लोके मनुष्या
 यजन्ते^७ यत्साधु^८ कुर्वन्ति तदेषामूर्ध्वमन्नाद्यमुत्सीदति । तदमुं
 चन्द्रमसमनुष्यलोकम्प्रविशति ॥६॥ तस्यैदम्मानुषनिकाशन-
 मण्डमुदरेऽन्तस्सम्भवति । तस्योर्ध्वमन्नाद्यमुत्सीदति स्तनावभि^९ ।
 स यदा जायतेऽथाऽस्मै माता स्तनमन्नाद्यम्प्रयच्छति ॥७॥ अजातो
 ह वै तावत्पुरुषो यावन्न यजते^{१०} स यज्ञेनैव जायते । स यथाऽण्ड
 म्प्रथमनिर्भिरणमेवमेव ॥८॥ तदा ते ह वा एवंविदुद्गाता यज-
 मानमोमित्येतेनाऽक्षरेणाऽऽदित्यं देवलोकं गमयति । वाणि-
 त्यस्मा उत्तरेणाऽक्षरेण चन्द्रमसमन्नाद्यमन्तितिम्प्रयच्छति ॥९॥
 अथ यस्यैतद्विद्वानुद्गायति^{११} न हैवैनं देवलोकं गमयति नो

२ त । ३ तेन । ४-ब्रू-,-वीत् । ५-गम । ६ सुस्वर्-,-म् ।
 ७ जायन्ते । ८-सा- । ९-है । १०-य-निक-इसके पश्चात् 'इदम्' । ११ अदेरे ।
 १२ ब्रू- । १३-नाच् । १४ जायते । १५-स । १६-यच्छति । १७ ना ।

एतन्मन्त्रेण समर्पयति ॥१०॥ स यथाऽऽहं विदिग्धं कुर्यात्त-
 ऽन्नाद्यमलभमानमेवमेव विदिग्धश्चेत्तेऽन्नाद्यमलभमानः ॥११॥
 तस्मादु हैतंविद्मेवोद्गापयेत् । एवंविदिहैवोद्गातरिति हृतः
 प्रतिनृणुपात् ॥१२॥१३॥१४॥

तृतीयेऽनुवाके चतुर्थः अष्टः । तृतीयोऽनुवाकस्तस्मात्तः ।

—:—

वागिति हेन्द्रो विश्वामित्रायोक्थमुवाच । तदेतद्विश्वामित्रा
 उपासते वाचमेव ॥१॥ मनुर्हं वासिष्ठाय ब्रह्मत्वमुवाच । तस्मादा-
 हर्वासिष्ठमेव ब्रह्मोति ॥२॥ तदु वा आहुरेवंविदेव ब्रह्मा । क उ
 एवंविदं वासिष्ठमर्हतीति ॥३॥ प्रजापतिः प्राजिजनिषत् । स
 तपोऽतप्यत् । स ऐक्षत इन्त नु प्रतिष्ठां जनयै ततो याः प्रजास्त्रक्ष्ये
 ता एतदेव प्रतिष्ठास्यन्ति नाऽप्रतिष्ठाश्चरन्तीः प्रदार्षिष्यन्त इति ॥४॥
 स इमं लोकमजनयदन्तरिक्षलोकमर्मुं लोकमिति । तानिमाँस्त्री-
 ल्लोकाजनयित्वाऽभ्यश्राम्यत् ॥५॥ तान् समतपत् । तेभ्यस्संतप्ते-
 भ्यस्त्रीणि शुक्राण्युदायन्नाग्निः पृथिव्या वायुरन्तरिक्षादादिस्रो-
 दिवः ॥६॥ स एतानि शुक्राणि पुनरभ्येवाऽतपत् । तेभ्यस्संतप्तेभ्य-

१८-सुव- । १९-आ । २०-आः । २१-शृणु-॥

१ है । २ उव्य- । ३ जनये, जनये । ४ अक्- । ५ ताम् । ६-सु ।

७ समभ्यवत् । ८ अक् । ९-व ।

क्षीरयेव शुक्रायुदायन्नुवेद एवाऽग्नेर्यजुर्वेदो ज्ञायोऽसामवेद
 आदिषात् ॥७॥ स एतानि शुक्राणि पुनरभ्येवाऽतपत् । तेभ्य-
 स्संतप्तेभ्यस्त्रीरमेव शुक्रायुदायन्भूरिखेवर्गवेदाद्बुव इति यजुर्वेदा-
 त्स्वरिति सामवेदात्तदेव ॥८॥ तद्ध वै त्रयै विद्यायै शुक्रम् ।
 एतावदिदं सर्वम् । स यो वै त्रयीं विद्यां विदुषो लोकस्सोऽस्य
 लोको भवति य एवं वेद ॥९॥३।१५॥

चतुर्थेऽनुवाके प्रथमः खण्डः ।

अयं वाव यज्ञो योऽयम्पवते । तस्य वाक् च मनश्च वर्तन्यौ ।
 वाचा च ह्येष एतन्मनसा च वर्तते ॥१॥ तस्य होताऽध्वर्युरुद्गाते-
 सन्यतरां वाचा वर्तन्ति संस्कुर्वन्ति । तस्मात्ते वाचा कुर्वन्ति ।
 ब्रह्मैव मनसाऽन्यतराम् ॥२॥ स यद्ध सो-
 ऽपि स्तूयमाने वा शस्यमाने वा वावद्यमान आसीताऽन्यतरामेवा-
 ऽस्यापि तर्हि स वाचा वर्तन्ति संस्कुर्यात् ॥३॥ स यथा पुरुष
 एकपाद्यन् श्रेषन्नेति रथो वैकचक्रौ वर्तमान एवमेव तर्हि यज्ञो
 श्रेषन्नेति ॥४॥ एतद्ध तद्विद्वान् ब्राह्मण उवाच ब्रह्माण्म्यातरनु-

वाके उपाकृते^५ वा वद्यमानमासीनमर्थे^६ वा इमे तर्हि यज्ञस्याऽन्तर-
 गुरिति । अर्थे हि ते तर्हि यज्ञस्याऽन्तरीयुः^७ ॥५॥ तस्माद्ब्रह्मा
 प्रातरनुवाक उपाकृते वाचंयम आसीताऽऽपरिधानीयाया आ वषट्
 कारादितरेषां स्तुतशस्त्राणां^{१०}मेवाऽऽसंस्थायै पवमानानाम् ॥६॥
 स यथा पुरुष उभया^{११ १२} पाद्यन् श्रेष्ठं न न्येति रथो बोभयानक्रो-
 वर्तमान एवमेतर्हि यज्ञो श्रेष्ठं न न्येति ॥७॥३।१६॥

चतुर्थेऽनुवाके द्वितीयः खण्डः ।

स यदि यज्ञ ऋक्तो श्रेष्ठत्रियाद्ब्रह्मणे प्रब्रूतेत्याहुः । अथ यदि
 यजुष्टो ब्रह्मणे प्रब्रूतेत्याहुः । अथ यदि सामतो ब्रह्मणे प्रब्रूतेत्याहुः ।
 अथ यद्यनुपस्मृताव कुत इदमजनीति ब्रह्मणे प्रब्रूतेत्येवा^२ऽऽहुः ॥१॥
 स ब्रह्मा प्राङ् उदेत् सवेणाऽऽग्नीध्र आज्यं जुहुयाद्भुवस्स्वरिते-
 ताभिर्व्याहृतिभिः ॥२॥ एता वै व्याहृतयस्सर्वपायश्चित्तयः । तद्यथा
 सवणेन सुवर्णी संदध्यात् सुवर्णेन रजतं रजतेन त्रपु त्रपुणां
 लोहायसं लोहायसेन कार्ष्णायसं कार्ष्णायसेन दारु दारु च चर्म

५-ओ । ६ 'आस्' द्विवार पढ़ा गया है । ७-न । ८-गु-
 र् । ९-अन्तर्युः । १०-अ । ११-पाद् । १२-यद् । १३-न ॥

१६- । २-यो । ३-रथ । ४-अन्तः, प्रा । ५-विदध- । ६-यु-
 ७-अ- ।

च श्लेष्मणैर्वमेवैवं विद्वाँस्तत्सर्वं भिषज्यति ॥३॥ तदाहुयदहौषीन्मे
 ग्रहान्मेऽग्रहीदिसध्वर्यवे दक्षिणानयन्तांसीन्मे वषट् अकर्म इति
 होत्र उदगासीन्मे इत्युद्गात्रेऽथ किं चक्रुषे ब्रह्मणे तूष्णीमासीनां
 समावतीरेवेतरे^{१२} ऋत्विग्भिर्दक्षिणा नयन्तीति ॥४॥ स ब्रूयादर्ध-
^{१३ १४ १५ १६}भाग्य वै स यज्ञस्याऽर्धं होष यज्ञस्य वहतीति । अर्धा इ स्म वै
 पुरा ब्रह्मणे दक्षिणा नयन्तीति । अर्धा इतरेभ्य ऋत्विग्भ्यः ॥५॥
 तस्यैष श्लोको—

मयीदम्मन्ये भुवनादि सर्वम्, मयि लोका मयि दिशश्चतस्रः ।

^{१७}मयीदम्मन्ये निमिषद्यदेजति, मय्याप ओषधयश्च सर्वा, इति ॥६॥

मयीदम्मन्ये भुवनादि सर्वमिषेयंविदं ह वावेदं सर्वम्भुवनमन्वा-
 यत्तम् ॥७॥ मयि लोका मयि दिशश्चतस्र इषेयंविदि ह वावल्लोका
 एवंविदि दिशश्चतस्रः ॥८॥ मयीदम्मन्ये निमिषद्यदेजति मय्याप
 ओषधयश्च सर्वा इषेयंविदि^{१८} ह वावेदं सर्वम्भुवनमप्रतिष्ठितम् ॥९॥
 तस्मादु हैवंविदमेव ब्रह्माणं कुर्वीत । स ह वाव^{१९} ब्रह्मा य एवं
 वेद ॥१०॥३॥१७॥

चतुर्थेऽनुवाके तृतीयः खण्डः ।

८ इयेष्म (सदध्यात्) ण कोष्ठ लाल रंग में कटा हुआ । ९-षष्ट ।
 १० अकृण् । ११ मय् । २० 'एव' नास्ति । २१ आशांसीन् । १२-देह ।
 १३-आह । १४ नास्ति । १५ वै । १६ य । १७ मतिही । १८-दं । १९ एव ।

अथ वा अतस्तोमभागानामेवाऽनुमन्त्राः ॥१॥ तदैतदेके
 स्तोममाग्निरेवाऽनुमन्त्रयन्ते । तत्तथा न^२ कुर्यात् ॥२॥ देवेन सवित्रा
 प्रसूतः प्रस्तोतर्देवेभ्यो वाचमिष्येत्यु हैकेऽनुमन्त्रयन्ते सवित्रा वै
 देवानामप्रसाविता सवित्रा प्रसूता इदमनु मन्त्रयामह इति वदन्तः ।
 बहु तथा न^४ कुर्यात् ॥३॥ भूर्भुवस्स्वरित्यु हैकेऽनुमन्त्रयन्त एषा
 वै ऋषीविद्या ऋग्यै वेदं विद्ययाऽनुमन्त्रयामह इति वदन्तः । तद्
 तथा नो एव कुर्यात् ॥४॥ ओमिसेवानुमन्त्रयेत् ॥५॥ अथैष
 वसिष्ठस्यैकस्तोमभागानुमन्त्रः । तेन हैतेन वसिष्ठः प्रजातिकामो-
 ऽनुमन्त्र्यां चक्रे देवेन सवित्रा प्रसूतः प्रस्तोतर्देवेभ्यो वाचमिष्य
 भूर्भुवस्स्वरोमिति । ततो वै स बहुः प्रजया पशुभिः प्राजायत ॥६॥
 स एव तेन वसिष्ठस्यैकस्तोम भागानुमन्त्रेणाऽनुमन्त्रयेत् बहुरेव
 प्रजया पशुभिः प्राजायते । इयं त्वेवस्थितिरोमिसेवाऽनुमन्त्रयेत्
 ॥७॥ १॥ २॥ ३॥

चतुर्थेऽनुवाके चतुर्थः खण्डः ।

१ स्तोमा- २ नु । ३ कुर्यात् । ४ रं । ५ ने ' ए ' लाल में कटा,
 ६ । ७ ई । ८ ऋग्यै । ९ प्र । १०-याया । ११-हु । १२-जाया ।
 १३-प्राज- १४ तस्तोम- १५-येते । १६ इय । १७ पञ्चमः ।
 १८-स्य ।

अथैष वाचा वज्रमुदगृह्णाति । यदाह सोमः पवत इति वोपावर्त-
 ध्वमिति वा वाचैव तदाचो वज्रं विगृह्यते वाचस्सत्येनातिमुच्यते ।
 तस्मादोमित्येवाऽनुमन्त्रयेत् ॥१॥ देवा वा अनया^२ त्रय्या
 [विद्यया] सरसयोर्ध्वास्स्वर्गं लोकमुदक्रामन् । ते मनुष्या-
 णामन्वागमाद्विभ्यतस्त्रयं^३ वेदमपीलयन् ॥२॥ तस्य पीलयन्त
 एकमेवात्तरं नाऽशक्नुवन्पीलयितुमोमिति यदेतत् ॥३॥ एष उ
 ह वाव सरसः । सरसा ह वा एवंविदस्त्रयी विद्या भवति ॥४॥
 स यां ह वै त्रय्या विद्यया सरसया जितिं जयति यामृद्धिमृध्नोति
 जयति तां जितिमृध्नोति तामृद्धिं य एवं वेद ॥५॥ एतद् वा
 अत्तरं त्रय्यै विद्यायै प्रतिष्ठा^४ । ओमिति वै होता प्रतिष्ठित ओमित्य-
 ध्वयुरोमित्युद्राता ॥६॥ एतद् वा अत्तरं वेदानां त्रिविष्टपम् ।
 एतस्मिन्वा अत्तरं^५ ऋत्विजो यजमानमाधाय स्वर्गलोके समुदहन्ति
 तस्मादोमित्येवानुमन्त्रयेत् ॥७॥१॥२॥८॥

चतुर्थेऽनुवाके पञ्चमः खण्डः । चतुर्थोऽनुवाकस्समाप्तः ।

—०—

गुहासि देवोऽस्युपवा^१स्युप^२ तं वायस्व योऽस्मान्द्वेष्टि यं च वयं
 द्विष्मः ॥१॥ माहिनासि बहुलासि बृहत्यसि रोहिण्यस्यपन्नाऽसि ॥२॥

१ य । २-अं । ३ विभ- ४ त्रैष्ट- ५ प्रतिष्ठं । ६-ए ।

१ देवास्मि । २ पृ । ३ वैयस्वि । ४ महिका ।

सम्भूर्देवोऽसि समहम्भूयासम् । आभूतिरस्याभूयासम् । भूतिरसि
 भूयासम् ॥३॥ यास्ते प्रजा उपदिष्टा नाहं तव ताः पर्येमि । उप ते
 ता दिशामि ॥४॥ नाम मे शरीरस्मे प्रतिष्ठा मे । तन्मे त्वयि
 तन्मे मोऽपहृथा इतीमाम्पृथिवीमवोचत् ॥५॥ तमियमागतम्पृथिवी
 प्रतिनन्दत्ययं ते भगवो लोकः । स ह नावयं लोक इति ॥६॥
 यद्वाव मे त्वयीत्याह तद्वाव मे पुनर्देहीति ॥७॥ किं नु ते मयीति ।
 नाम मे शरीरस्मे प्रतिष्ठा मे । तन्मे त्वयि तन्मे पुनर्देहीति ।
 तदस्मा^{१४} इयम्पृथिवी पुनर्ददाति ॥८॥ तामाह प्र मा बहेति ।
 किमभीति । अग्निमिति तमग्निमभिप्रवहति^९ ॥९॥ सोऽग्निमाहा-
 अभिजिदस्याभिजय्यासम्^{१०} । लोकजिदसि लोकं जय्यासम् ।
 अत्तिरस्यन्नमद्यासम् । अन्नादो भवति यस्त्वैवं वेद ॥१०॥
 सम्भूर्देवोऽसि समहम्भूयासम् । आभूतिरस्याभूयासम् । भूतिरसि
 भूयासम् ॥११॥ यास्ते प्रजा उपदिष्टा नाहं तव ताः पर्येमि ।
 उप ते ता दिशामि ॥१२॥ तपो मे तेजो मेऽन्नस्मे वाङ् मे । तन्मे
 त्वयि । तन्मे मोऽपहृथा^{१२} इत्यग्निमवोचत् ॥१३॥ तं तथैवाऽऽगत-

१ आभूतिरिति । ६ स । ७ मधी । ८ म । ९-हन्ति ।
 १० अभिजिदस्य दो वार आया है । ११ जय्य- । १२-थाय ।
 १३ तस्मा । १४ आस्माय ॥

मग्निः प्रतिनन्दत्ययं ते भगवो लोकस्सह नावयं लोक इति ॥१४॥

यद्वाव मे त्वयीत्याहु तद्वाव मे पुनर्देहीति ॥१५॥ किं तु ते
मयीति । तपो मे तेजो मेऽन्नम्मे वाङ् मे । तन्मे त्वयि । तन्मे
पुनर्देहीति । [तद्] अस्मा^{१२} अग्निर्पुनर्ददाति ॥१६॥ तमाह प्र मा
वहेति ॥१७॥३२०॥

पञ्चमऽनुवाके प्रथमः खण्डः ।

किमभीति । वायुमिति । तं वायुमभिप्रवहति ॥१॥ स वायु-
माह यत्पुरस्ताद्वासीन्द्रो राजा भूतो वासि । यदक्षिणतो वासीशानो
भूतो वासि । यत्पश्चाद्वासि वरुणो राजा भूतो वासि । यदुत्तरतो
वासि सोमो राजा भूतो वासि । यदुपरिष्ठादववासि प्रजापतिर्भूतो-
ऽववासि^१ ॥२॥ त्रासो^२ऽस्येकत्रासोऽनवष्टष्टो देवानां भिलमप्यर्था^३ ॥३॥
तव प्रजास्तबौषधयस्तवाऽऽपो विचलितमनुविचलन्ति ॥४॥ सम्भू-
र्देवो^५ऽसि समहम्भूयासम् । आभूतिरस्याभूयासम् । भूतिरसि
भूयासम् ॥५॥ यास्ते प्रजा उपदिष्टानाऽहं तव ताः पर्येमि । उप
ते ता दिशामि ॥६॥ प्राणापाणौ^६ मे श्रुतम्मे । तन्मे त्वयि । तन्मे
मोऽपहृथा इति वायुमवोचत् ॥७॥ तं तथैवागतं वायुः प्रतिनन्दत्ययं
ते भगवो लोकः । स ह नावयं लोक इति ॥८॥ यद्वाव मे त्वयी-

साह तद्वाव मे पुनर्देहीति ॥८॥ किं नु ते मयीति । प्राणापानौ
 मे श्रुतम्मे । तन्मे त्वयि । तन्मे पुनर्देहीति । तदस्मै वायुः पुन-
 र्ददाति ॥९॥ तमाह प्र मा बहेति । किमभीति । अन्तरिक्षलोक-
 मिति । तस्मै अन्तरिक्षलोकमभिप्रवहति ॥१०॥ तं तथैवाऽऽगतमन्तरिक्ष
 लोकः प्रति नन्दत्ययं ते भगवो लोकः । स ह नावयं लोक
 इति ॥११॥ यद्वाव मे त्वयि साह तद्वाव मे पुनर्देहीति ॥१२॥ किं
 नु ते मयीति । अयम् आकाशः स मे त्वयि । तन्मे पुनर्देहीति ।
 तस्मा आकाशमन्तरिक्ष लोकः पुनर्ददाति ॥१३॥ तमाह प्र मा
 बहेति ॥१४॥ १५॥ १६॥ १७॥

पञ्चमेऽनुवाके द्वितीयः खण्डः ।

किमभीति । दिश इति । तं दिशोऽभिप्रवहति ॥१॥ तं तथै-
 वागतं दिशः प्रतिनन्दत्ययं ते भगवो लोकः । स ह नोऽयं लोक
 इति ॥२॥ यद्वाव मे युष्मास्वि साह तद्वाव मे पुनर्दत्तेति ॥३॥ किं
 नु तेऽस्मास्विति । श्रोत्रमिति । तदस्मै श्रोत्रं दिशः पुनर्ददति ॥४॥
 ता आह प्र मा बहेति । किमभीति । अहोरात्रयोर्लोकमिति ।
 तमहोरात्रयोर्लोकमभिप्रवहन्ति ॥५॥ तं तथैवागतमहोरात्रे प्रति-
 नन्दतोऽयं ते भगवो लोकः । स ह नोऽयं लोक इति ॥६॥ यद्वाव

मे युवयोरिखाह तद्वाव मे पुनर्दत्तमिति ॥७॥ किं नु त आवयोरिति ।
अक्षितिरिति । तामस्मा अक्षितिमहोरात्रे पुनर्दत्तः ॥८॥ ते आह
प्र मा वहतमिति ॥६॥ ३।२२॥

पञ्चमेऽनुवाके तृतीयः खण्डः ।

किमभीति । अर्धमासानिति । तमर्धमासानभिप्रवहतः ॥१॥
तं तथैवागतमर्धमासाः प्रतिनन्दन्त्ययं^२ ते भगवो लोकः । स ह
नोऽयं लोक इति ॥२॥ यद्वाव मे युष्मास्त्रिखाह तद्वाव मे पुनर्दत्ते-
ति ॥३॥ किं नु तेऽस्मास्त्रिति । इमानि क्षुद्राणि पर्वाणि । तानि
मे युष्मासु । तानि मे प्रति संधत्तेति । तान्यस्यार्धमासाः पुनः
प्रति संदधति^३ ॥४॥ तानाह प्र मा वहतेति । किमभीति । मासा-
निति । तम्मासानभिप्रवहन्ति ॥५॥ तं तथैवागतम्मासाः
प्रतिनन्दन्त्ययं^२ ते भगवो लोकः । स ह नोऽयं लोक इति ॥६॥
यद्वाव मे युष्मास्त्रिखाह तद्वाव मे पुनर्दत्तेति ॥७॥ किं नु तेऽस्मा-
स्त्रिति । इमानि स्थूलानि पर्वाणि । तानि मे युष्मासु । तानि मे
प्रति संधत्तेति । तान्यस्य मासाः पुनः प्रति संदधति ॥८॥
तानाह प्र मा वहतेति ॥६॥ ३।२३॥

पञ्चमेऽनुवाके चतुर्थः खण्डः ।

किमभीति । ऋतुनिति । तमृतनभिप्रवहन्ति ॥१॥ तं
 तथैवाऽऽगतमृतवः प्रतिनन्दन्त्ययं ते भगवो लोकः । स ह मोऽयं
 लोक इति ॥२॥ यद्वाव मे युष्मास्वित्याह तद्वाव मे पुनर्दत्तेति
 ॥३॥ किं नु तेऽस्मास्विति । इमानि ज्यायांसि पर्वाणि । तानि मे
 युष्मासु तानि मे प्रतिसंधत्तेति । तान्यस्यर्तवः पुनः प्रतिसंदधति
 ॥४॥ तानाह प्र मा वहतेति । किमभीति । संवत्सरमिति । तं
 संवत्सरमभिप्रवहन्ति ॥५॥ तं तथैवाऽऽगतं संवत्सरः प्रतिनन्द-
 त्ययं ते भगवो लोकः । स ह नावयं लोक इति ॥६॥ यद्वाव मे
 त्वयीत्याह तद्वाव मे पुनर्देहीति ॥७॥ किं नु ते मयीति । अयम्
 आत्मा । स मे त्वयि तन्मे पुनर्देहीति । तमस्मा आत्मानं
 संवत्सरः पुनर्ददाति ॥८॥ तमाह प्र मा वहतेति ॥९॥ १२४॥

पञ्चमेऽनुवाके पञ्चमः खण्डः ।

किमभीति । दिव्यान् गन्धर्वानिति तं दिव्यान् गन्धर्वानभि-
 प्रवहति ॥१॥ तं तथैवाऽऽगतं दिव्या गन्धर्वाः प्रतिनन्दन्त्ययं ते
 भगवो लोकः । स ह नोऽयं लोक इति ॥२॥ यद्वाव मे युष्मा-
 स्वित्याह तद्वाव मे पुनर्दत्तेति ॥३॥ किं नु तेऽस्मास्विति ।

१ तै । २ त्वधी । ३ वहते ॥

४ त ।

गन्धो^२ मे मोदो मे प्रमोदो मे । तन्मे युष्मासु । तन्मे पुनर्दत्तेति
 तदस्मै दिव्या गन्धर्वाः पुनर्ददति ॥४॥ तानाह प्र मा बहतेति ।
 किमभीति । अप्सरस इति । तमपसरसोऽभिप्रवहन्ति ॥५॥ तं
 तथैवाऽऽगतमपसरसः प्रतिनन्दन्त्ययं ते भगवो लोकः । स ह नोऽयं
 लोक इति ॥६॥ यद्वा^३व मे युष्मास्वित्याह तद्वाव मे पुनर्दत्तेति
 ॥७॥ किं नु तेऽस्मास्विति । हसो मे क्रीळा मे मिथुनम्मे । तन्मे
 युष्मासु । तन्मे पुनर्दत्तेति । तदस्मा अपसरसः पुनर्ददति ॥८॥
 ता आह प्र मा बहतेति ॥९॥३॥२५॥

पञ्चमेऽनुवाके षष्ठः खण्ड ।

किमभीति । दिवमिति । तं दिवमभिप्रवहन्ति ॥१॥ तं
 तथैवाऽऽगतं द्यौः प्रतिनन्दत्ययं ते भगवो लोकः । स ह नावयं
 लोक इति ॥२॥ यद्वा^३व मे त्वयीत्याह तद्वाव मे पुनर्देहीति ॥३॥
 किं नु ते मयीति । तृप्तिरिति । सकृत्तृप्तेव हेषा । तामस्मै तृप्तिं
 द्यौः पुनर्ददाति ॥४॥ तमाह प्र मा बहेति । किमभीति । देवानिति ।
 तं देवानभिप्रवहति ॥५॥ तं तथैवाऽऽगतं देवाः प्रतिनन्दन्त्ययं ते
 भगवो लोकः । स ह नोऽयं लोक इति ॥६॥ यद्वाव मे युष्मास्वि-

२ गन्धर्वो । ३ युयद् ॥

१ द्यौः ।

साह तद्वाव मे पुनर्दत्तेति ॥७॥ किं नु तेऽस्मास्त्विति । अमृतमिति ।
तदस्मा अमृतं देवाः पुनर्ददति ॥८॥ तानाह प्र मा बहतेति ॥९॥ ३॥२६॥

पञ्चमेऽनुवाके सप्तमः खण्डः ।

किमभीति । आदित्यमिति । तमादित्यमभिप्रवहन्ति ॥१॥ स
आदित्यमाह विभूः पुरस्तात्सम्पत्^१ पश्चात् । सम्यङ्^२ त्वमसि ।
समीचो मनुष्यानरोषी^३ रुषतस्त ऋषिः पाप्मानं हन्ति । अपहत-
पाप्मा भवति यस्तैव^४ वेद ॥२॥ सम्भृद्देवोऽसि समहम्भूयासम् ।
आभूतिरस्याभूयासम् । भूतिरसि भूयासम् ॥३॥ यास्ते प्रजा
उपदिष्टा नाहं तव ताः पर्येमे । उप ते ता दिशामि ॥४॥ ओजो
मे बलम्मे चक्षुर्मे । तन्मे त्वयि तन्मे मोऽपहृथा इत्यादित्यमवोचत् ॥५॥
तं तथैवाऽऽगतमादित्यः प्रतिनन्दत्ययं ते भगवो लोकः । स ह
नावयं लोक इति ॥६॥ यद्वाव मे त्वयीसाह तद्वाव मे पुनर्देही-
ति ॥७॥ किं नु ते मयीति । ओजो मे बलम्मे चक्षुर्मे । तन्मे
त्वयि^१ । तन्मे पुनर्देहीति । तदस्मा आदित्यः पुनर्ददति ॥८॥
तमाह प्र मा बहतेति । किमभीति । चन्द्रमसमिति । तं चन्द्रमसमभि-

२-दाति ॥

१-वत् । २ सम्यङ् । ३ अरोतिषि 'ति' बाह्य से कटा हुआ है, ।
४ त्व् । ५ एवम् । ६-भूतिः । ७ भूतिः । ८ ऽऽगता । ९ नास्ति ।
१० त्वयीमी, त्वयी बीति । ११ चन्द्र-

प्रवहति ॥६॥ स चन्द्रमसमाह सत्यस्य पन्था न त्वा^{१२} जहाति^{१३} ।
 अमृतस्य^{१४} पन्था न त्वा जहाति ॥१०॥ नवो नवो भवसि जाय-
 मानो भरो नाम ब्राह्मण उपास्ते । तस्मात्ते सत्वा उभये देवमनुष्या
 अन्नाद्यम्भरन्ति । अन्नादो भवति यस्त्वेवं वेद ॥११॥ सम्भूदेवो-
 ऽसि समहम्भूयासम् । आभूतिरस्याभूयासम् । भूतिरसि
 भूयासम् ॥१२॥ यास्ते प्रजा उपदिष्टा नाहं तव ताः पर्येमि ।
 उप ते ता दिशामि ॥१३॥ मनो मे रेतो मे प्रजा मे पुनस्सम्भू-
 तिर्मे^{१४} तन्मे त्वयि तन्मे मोऽपद्वथा इति चन्द्रमसमवोचत् ॥१४॥ तं
 तथैवाऽऽगतं चन्द्रमाः प्रतिनन्दत्ययं ते भगवो लोकः । सह नावयं
 लोक इति ॥१५॥ यद्वाव मे त्वयीत्याह तद्वाव मे पुनर्देहीति ॥१६॥
 किं नु ते मयीति । मनो मे रेतो मे प्रजा मे पुनस्सम्भूतिर्मे^{१५} । तन्मे
 त्वयि । तन्मे पुनर्देहीति । तदस्मै चन्द्रमाः पुनर्ददति ॥१७॥
 तमाह प्र मा वहेति ॥१८॥ ३।२७॥

पञ्चमेऽनुवाके ऽष्टमः खण्डः ।

किमभीति । ब्रह्मणो^१ लोकमिति । तमादित्यमभिप्रवहति ॥१॥
 स आदित्यमाह प्र मा वहेति । किमभीति । ब्रह्मणो^२ लोकमिति ।

११ चैव-१ १२ वा । १३-आस । १४ नास्ति, अमृतस्य पश्चा
देवोऽसि समहम् । १५-ति । १६ मे, म । १७ किं नु ॥
 १ प्रथमो । २ ब्राह्म-।

तं चन्द्रमसमभिप्रवहति^३ । स एवमेते देवते अनुसंचरति^४ ॥२॥
 एषोऽन्तोऽतः परः प्रवाहो नास्ति । यानु काँश्चाऽतः प्राचो लोका-
 नभ्यवादिष्म^५ ते सर्व आप्ता भवन्ति ते जितास्तेष्वस्य सर्वेषु काम-
 चारो भवति य एवं वेद ॥३॥ स यदि कामयेत पुनरिहाऽऽजाये-
 येति यस्मिन् कुलेऽभिध्यायेद्यदि ब्राह्मणकुले यदि राजकुले
 तस्मिन्नाजायते । स एतमेव लोकम्पुनः प्रजानन्नभ्यारोहन्नेति ॥४॥
 तदु होवाच शाठ्यायनिर्वहुव्याहितो वा अयम्बहुशो लोकः । एतस्य
 वै कामाय नु^६ ब्रुवते [वा] श्राम्यन्ति वा क एतत्प्रास्य पुनरिहेया-
 दत्रैव स्यादिति ॥५॥१॥२८॥

पञ्चमेऽनुवाके नवमः खण्डः । पञ्चमोऽनुवाकस्समाप्तः ।

:०:—

उच्चैश्श्रवा^१ ह कौपयेयः^२ कौरव्यो राजाऽऽस । तस्य ह केशी^३
 दार्भ्यः पाञ्चालो राजा स्वस्रीय आस । तौ हाऽन्योन्यस्य प्रिया-
 वासतुः ॥१॥ स होच्चैश्श्रवाः^४ कौपयेयोऽस्माल्लोकाव प्रेयाय ।
 तस्मिन् ह प्रेते केशी दार्भ्योऽरण्ये मृगयां च चाराऽप्रियं विनिनी-

३-अन्ति, ४ 'एषोऽन्त्यमभिप्रवहति' । ५ 'मा वहेऽति' । किमभीऽति ।
 ब्रह्मणा लोकमिति.....देवते अनु संचरति' अधिक है । ५ 'ऽस्मि' ।

६-दिष्ट । ७ 'तेषु' । ८ 'वा' अधिक है । ९ श्रूवते । १० 'चा' अधिक है ।

१-प्रेय- । २ कौव- । ३ केशी, केश- । ४ स्वस्वी- । ५ 'गा' लाज रज्ज
 में कटा हुआ अधिक है ।

वमाणाः ॥२॥ स ह तथैव पल्ययमानो मृगान् प्रसरन्नन्तरेणै-
 वोच्चैश्श्रवसं कौपयेयमधिजगाम ॥३॥ तं होवाच दृष्ट्यामि स्त्री-
 ज्ञानामीति । न दृष्ट्यसीति होवाच जानासि । स एवास्मि यस्मा
 मन्यस इति ॥४॥ अथ यद्भगव आहुरिति होवाच य आविर्भव-
 त्यन्येऽस्य लोकमुपयन्तीत्यथ कथमशको म आविर्भवितुमिति ॥५॥
 ओमिति होवाच यदा वै तस्य लोकस्य गोप्तारमविदेऽतस्त आवि-
 रभूवमप्रियं चास्य विनेष्याम्यनु चैनं शासिष्यामीति ॥६॥ तथा
 भगव इति होवाच । तं वै नुत्वा परिष्वजा इति । तं ह स्म
 परिष्वजमानो यथा धूमं वापीयाद्वायुं वाकाशं वाग्न्यर्चि वाऽपोवैवं
 ह स्मैनं व्येति । न ह स्मैनम्परिष्वङ्गायोपलभते ॥७॥३॥२६॥

षष्ठेऽनुवाके प्रथमः खण्डः ।

स होवाच यद्वै ते पुरा रूपमासीत्तत्ते रूपम् । न तु त्वा परि-
 ष्वङ्गायोपलभ इति ॥१॥ ओमिति होवाच ब्राह्मणो वै मे साम
 विद्वान् साम्नोद्गायत् । स मेऽशरीरेण साम्ना शरीराण्यधूनोत् ।
 तद्यस्य वै किल साम विद्वान् साम्नोद्गायति देवतानामेव सलोकतां
 गमयतीति ॥२॥ पतङ्गः प्राजापत्य इति होवाच प्रजापतेः प्रियः

६ प्रस्तर- । ७ ऽन्वैश्च- ऽन्वैश्च- । ८ य । ९ अत । १० वा ।
 ११ हे । १२ वै ॥

१ ऽव । २ ने । ३-गोयो । ४ ऽप लभते । ५-रारयत् ।

पुत्र आस । स तस्मा एतत् सामाब्रवीत् । तेन स ऋषीणामुद-
 गायत् । त एत ऋषयो धूतशरीरा इति ॥३॥ एतेनो एव
 साम्नेति होवाच प्रजापतिर्देवानामुदगायत् । त एत उपरि देवा
 धूतशरीरा इति । ४॥ तस्मिन् हैमनुजशास । तं हानुशिष्यो-
 वाच यस्मैवैतत् साम विद्यात् स स्मैव त उद्गायत्विति ॥५॥ स
 हानुशिष्ट आजगाम । स ह स्म कुरुपञ्चालानाम्ब्राह्मणानुपपृ-
 च्छमानश्चरति ॥६॥३।३०॥

षष्ठेऽनुवाके द्वितीयः खण्डः ।

व्यूढच्छन्दसा वै द्वादशाहेन यक्ष्यमाणोऽस्मि । स यो
 वस्तत्साम वेद यदहं वेद स एव म उद्गास्यति । मीमांसध्वमिति
 ॥१॥ तस्मै ह मीमांसमानानामेकश्चन [न] सम्प्रत्यभिदधाति
 ॥२॥ स ह तथैव पल्ययमानश्मशाने वा वने वाऽऽवृत्तीश्वरा-
 नमुपाधावयांचकार । तं ह चायमानः प्रजहौ ॥३॥ तं हो-
 वाच कोऽसीति । ब्राह्मणोऽस्मि भानृदो भाल्ल इति ॥४॥ स किं
 वेत्थेति । सामेति ॥५॥ ओमिति होवाच । व्यूढच्छन्दसा वै
 द्वादशाहेन यक्ष्यमाणोऽस्मि । स यदि तत्साम वेत्थ यदहं वेद त्व-

६ आ । ७ तं । ८ वे । ९-द्या । १०-पात्रे-॥

१-क्षम- । २ यदि । ३ त्वम । ४ वेत्थ । ५ इमश्चूनाम । ६ वाचःसाध । ७ न ।
 ८ उच, उप । ९ च्छाया, न, जायाय । १०-क्षम- । ११ 'यदहं वेत्थ' अधिक है ।

मेव म उद्गास्यासि । मीमांसस्वेति ॥६॥ तस्मै ह मीमांसमानस्त-
 देव^{१३} सम्प्रत्यभिदधौ ॥७॥ तं होवाचाऽयम् उद्गास्यतीति ॥८॥
 तस्मै ह कुरुपञ्चालानाम्ब्राह्मणा^{१५} असूयन्त आहुरेषु ह वा अयं
 कुल्येषु^{१७} सत्सुद्गास्याति । कस्मा अयं लमिति ॥ ६ ॥ अलम् नै
 मह्यमिति हस्माऽह । सैवाऽलम्भस्याऽलम् मतायैद्वतस्य हाऽल-
 मेवोज्जगौ । तस्मादालम्ब्यैलाजोद्गातेत्याख्यापयन्ति ॥१०॥१॥३१॥

षष्ठेऽनुवाके तृतीयः खण्डः ।

तद्ध सात्यकीर्ता आहुर्या वयं देवतामुपास्महेकमेव वयं तस्यै
 देवतायै रूपं गव्यादिशाम एकं वाहन एकं हस्तिन्येकम्पुरुष एकं
 सर्वेषु भूतेषु । तस्या एवेदं देवतायै सर्वं रूपमिति ॥१॥ तदेतदेकमेव
 रूपम्प्राण एव । यावद्धचेव प्राणेन प्राणिति तावद्रूपम्भवति तद्रू-
 पम्भवति ॥२॥ तदथ यदा प्राण उत्क्रामाति दार्वेवे^३ भूतोऽनर्थः^४
 परिशिष्यते न किञ्चन रूपम् ॥३॥ तस्यान्तरात्मा तपः । तस्मा-
 त्तप्यमानस्योष्णतरः प्राणो भवति ॥४॥ तपसोऽन्तरात्माग्निः ।
 स निरुक्तः । तत्मात्स दहति ॥५॥ अथाग्निदेवतम् । इयमेवैषा

१२-ति से ठीक किया हुआ १३ 'त' अधिक है । १४ नास्ति 'इति' ।
 १५-पान्च- । १६ आसू- । १७ कुलेषु । १८ आस- । १९ अर्णय- । २० न्ये
 इसके आगे 'म' लाल रंग में कटा हुआ है । २१ 'म' अधिक है । २२ एवौ ॥
 १ यद् । २ एवो । ३-ए । ४-अ- । ५-इति । ६-देव- । ७-ए-

देवता योऽयम्भवते । तस्मिन्नेतास्मिन्नापोऽन्तः । तदन्नम् । सो-
ऽरून् उपासितव्यः । यदस्मिन्नापोऽन्तस्तेनाऽरून् ॥६॥ तस्या-
न्तरात्मा तपस् । तस्मादिष आतपत्युष्णतरः पवते ॥७॥ तपसो-
ऽन्तरात्मा विद्युत् । स निरुक्तः । तस्मात्सोऽपि दहति ॥८॥ तानि-
वा एतानि चत्वारि साम प्राणो वाङ्मनस्स्वरः । स एष प्राणो
वाचा करोति मनो नेत्रः । तस्य स्वर एव प्रजाः । प्रजावान्
भवति य एवं वेद ॥६॥१॥२॥

पष्ठेऽनुवाके चतुर्थः खण्डः ।

स यो वायुः प्राण एव सः । योऽग्निर्वागेव सा । यश्चन्द्रमा
मन एव तद् । य आदित्यस्स्वर एव सः । तस्मादेतमादित्यमाहु-
स्स्वर एतीति ॥१॥ स यो ह वा अमूर्देवता उपास्ते या अमूरग्नि-
देवतं हूपा वा एता दुरनुसम्प्राप्या इव । कस्तद्वेद्येता अनु
वा सम्प्राप्नुयान्न वा ॥२॥ अथ य एता अध्यात्ममुपास्ते स हा-
न्तिदेवो भवति । निर्जीर्यन्तीव वा इत एता । [त] अस्य वा
एताश्चरीरस्य सह प्राणेन निर्जीर्यन्ति । क उ एव तद्वेद यद्येता
अनु वा सम्प्राप्नुयान्न वा ॥३॥ अथ य एता उभयीरेकधा भव-

तानि वासितव्यो (!) यदस्मिन्नापोऽन्तस्-तस्मात्सोऽपि
दहति दोषाया है ॥

१ यदा । २-रून् । ३-आपा । ४ चा । ५ व । ६ उभेधीर ।

न्तीवेद स एवानुष्ठया साम वेद स आत्मानं वेद स ब्रह्मवेद ॥४॥
 तदाहुः प्रादेशमात्राद्वा इत एता एकम्भवन्ति । अतो ह्ययम्प्राण-
 स्स्वर्य उपर्युपरि वर्तन इति ॥५॥ अथ हैक आहुश्चतुरंगुलाद्वा इत
 एता एकम्भवन्तीति । अतो ह्येवायम्प्राणस्स्वर्य उपर्युपरि
 वर्तत इति ॥६॥ स एष ब्राह्मण आवर्तः । स य एवमेतम्ब्रह्मण
 आवर्त वेदाभ्येनम्पजाः पशव आवर्तन्ते सर्वमायुरेति ॥७॥ स
 यो हैवं विद्वान्प्राणेन प्राण्याऽपानेनाऽपान्य मनसैता उभयोर्दे-
 वता आत्मन्येत्य मुख आधत्ते तस्य सर्वमाप्तम्भवति सर्वं जितम् ।
 न हास्य कश्चन कामोऽनाप्तो भवति य एवं वेद ॥८॥११३३॥

षष्ठेऽनुवाके पञ्चमः खण्डः ।

तदेतन्मिथुनं यद्राक्च प्राणश्च । मिथुनमृक्सामे । आचतुरं
 वाव मिथुनम्पजननम् ॥१॥ तद्यत्राऽद् आह सौमः पवत इति
 वीपावर्तध्वमिति वा तत्सहैव वाचा मनसा प्राणेन स्वरेण हिङ्-
 कुर्वन्ति । तद् हिङ्गारेण मिथुनं क्रियते ॥२॥ सहैव वाचा मनसा
 प्राणेन स्वरेण निधनमुपयन्ति । तन्निधनेन मिथुनं क्रियते ॥३॥
 तत्सप्तविधं सान्नः । सप्तकृत्व उद्राताऽऽत्मानं च यजमानं च
 शरीरात्पजनयति ॥४॥ यादृशस्यो ह वै रेतो भवति तादृक्

सम्भवति यदि वै पुरुषस्य पुरुष एव यदि गौर्गौरेव यद्यश्वस्याश्व
 एव यदि मृगस्य मृगएव । यस्यैव रेतो भवति तदेव सम्भवति ॥५॥
 तद्यथा ह वै सुवर्णं हिरण्यमग्नौ प्रास्यमानं कल्याणतरं कल्याण-
 तरम्भवति एवमेव कल्याणतरेण कल्याणतरेणात्मना सम्भवति
 य एवं वेद ॥६॥ तदेतद्वचाभ्यनूच्यते ॥७॥३॥३४॥

षष्ठेऽनुवाके षष्ठः खण्डः ।

पतङ्गमक्तमसुरस्य मायया हृदा पश्यन्ति मनसा
 विपश्चितः । समुद्रे अन्तः कवयो विचक्षते मरीची-
 नाम्पदमिच्छन्ति वेधस इति ॥१॥ पतङ्गमक्तमिति । प्राणो
 वै पतङ्गः । पतन्निव ह्येष्वङ्गेष्वति रथमुदीक्षते । पतङ्ग इत्यचक्षते
 ॥२॥ असुरस्य माययेति । मनो वा असुरम । तद्वचसुषु रमते ।
 तस्यैष माययाक्तः ॥३॥ हृदा पश्यन्ति मनसा विपश्चित इति ।
 हृदैव ह्येते पश्यन्ति यन्मनसा विपश्चितः ॥४॥ समुद्रे अन्तः कवयो
 विचक्षते इति । पुरुषो वै समुद्र एवंविद् उ कवयः । त इमाम्पु-
 रुषेऽन्तर्वाचं विचक्षते ॥५॥ मरीचीनाम्पदमिच्छन्ति वेधस इति ।
 मरीच्य इव वा एता देवता यदाग्निर्वायुरादिसश्चन्द्रमाः ॥६॥ न ह

४ ऋच्या । ५-स्या-॥

१ अक्षयम् । २-ताः । ३-य । ४ त । ५ हृद् । ६ एवं । ७ सा ।

वा एतासां देवतानाम्पदमस्ति । पदेनो ह वै पुनर्मृत्युरन्वेति ॥७॥
तदेतदनन्वितं साम पुनर्मृत्युना । अति पुनर्मृत्युं तरति य एवं
वेद ॥८॥३॥३५॥

षष्ठेऽनुवाके सप्तमः खण्डः ।

पतङ्गो वाचम्मनसा विभर्ति तां गन्धर्वोऽवदद्गर्भे अन्तः ।
तां द्योतमानां स्वर्गम्मनीषामृतस्य पदे कवयो निपान्ति
इति ॥१॥ पतङ्गो वाचम्मनसा विभर्तीति । प्राणो वै पतङ्गः । स
इमां वाचम्मनसा विभर्ति ॥२॥ तां गन्धर्वोऽवदद्गर्भे अन्तरिति ।
प्राणौ वै गन्धर्वः पुरुष उ गर्भः । स इमाम्पुरुषेऽन्तर्वाचं वदति ॥३॥
तां द्योतमानां स्वर्गम्मनीषामिति । स्वर्गा ह्येषा मनीषा यद्वाक् ॥४॥
अमृतस्य पदे कवयो निपान्तीति । मनो वा ऋतमेवंविद उ कवयः ।
ओमिसेतदेवान्तरमृतम् ॥ तेन यद्वचस्मीमांसन्ते यद्यजुर्यत्साम
तदेनां निपान्ति ॥५॥३॥३६॥

षष्ठेऽनुवाकेऽष्टमः खण्डः ।

८ वे ।

१-ओ । २-आ । ३ वदति । ४ अन्तः- । ५-अ । ६ 'यत्साम'
के आगे 'ओमित्ये-ऋतम्' हे ॥

अपश्यं गोपामनिपद्यमानमा च परा च पथिभिश्चरन्तरम् ।

स सध्रीचीस्स विषूचीर्वसान आ वरीवर्त्ति भुवनेध्वन्तर् इति ॥१॥

अपश्यं गोपामनिपद्यमानमिति । प्राणो वै गोपाः । स हीदं सर्वम-
निपद्यमानो गोपायति ॥२॥ आ च परा च पथिभिश्चरन्तमिति ।
तद्ये च ह वा इमे प्राणा अमी च रश्मय एतैर्ह वा एष एतदा च
परा च पथिभिश्चरति ॥३॥ स सध्रीचीस्स विषूचीर्वसान इति ।
सध्रीचीश्च ह्येष एतद्विषूचीश्च प्रजा वस्ते ॥४॥ आ वरीवर्त्ति भुवने-
ध्वन्तरिति । एष ह्येवैषु भुवनेध्वन्तरावरीवर्त्ति ॥५॥ स एष इन्द्र
उद्गीथः । स यदैष इन्द्र उद्गीथ आगच्छति नैवोद्गातुश्चोपगातृणां
च विज्ञायते । इत एवोर्ध्वस्स्वरुदेति । स उपरि मूर्ध्नो लेलायति ॥६॥
स विद्यादागमदिन्द्रो नेह कश्चन पाप्मा न्यङ्गः परिशेच्यते इति ।
तस्मिन् ह न कश्चन पाप्मा न्यङ्गः परिशिष्यते ॥७॥ तदेतद्-
भ्रातृव्यं साम । न ह वा इन्द्रः कंचन भ्रातृव्यम्पश्यते । स
यथेन्द्रो न कंचन भ्रातृव्यम्पश्यत एवमेव [न] कंचन भ्रातृव्य-
म्पश्यते य एतदेवं वेदाथो यस्यैवं विद्वानुद्गायति ॥८॥ ३।३७॥

षष्ठेऽनुवाके नवमः खण्डः । षष्ठोऽनुवाकस्तस्मात्तः ॥

१-रीच्-इस पाद के प्रारम्भ में 'अति' ऐसा अधिक है । २ सस्ते ।
३-तृणा- । ४-ध्व । ५ आगाद् । ६ परिषे- । ७ एत । ८ अ-॥

प्रजापतिम्ब्रह्माऽऽजत । तमपश्यममुखमसृजत ॥१॥ तमप-
 पश्यममुखं शयानम्ब्रह्माऽऽविशत् । पुरुष्यं तत् । प्राणौ वै ब्रह्म ।
 प्राणो वाचैनं तदाविशत् ॥२॥ स उदतिष्ठत् प्रजानां जनयिता ।
 तं रक्षांस्यन्वसचन्त ॥३॥ तमेतदेव साम गायन्नत्रायत् । यद्वायन्न-
 त्रायत् तद्वायत्रस्य गायत्रत्वम् ॥४॥ त्रायत् एनं सर्वस्मात्पाप्मनो
 मुच्यते य एवं वेद ॥५॥ तमुपाऽस्मै गायता नर इत्यृचाऽऽश्रव-
 णीयेनोपागायन् ॥६॥ यदुपाऽस्मै गायता नर इति तेन गायत्रम-
 भवत् । तस्मादेवैव प्रतिपत्कार्या ॥७॥ पवमानायेन्दावा अभि
 देवमिया-हुम-भान्नाता इति षोडशाक्षराण्यभ्यगायन्त ॥८॥ षोडशकलं
 वै ब्रह्म । कलाश एवैनं तद्ब्रह्माऽऽविशत् ॥९॥ तदेतच्चतुर्विंशत्यक्षरं
 गायत्रम् । अष्टाक्षरः प्रस्तावः । षोडशाक्षरं गीतं तच्चतुर्विंशतिस्स-
 म्पद्यन्ते । चतुर्विंशत्यर्धमासस्संवत्सरः । संवत्सरस्साम ॥१०॥ ता
 ऋचश्शरीरेण मृत्युरन्वैतत् । तद्यच्छरीरवत्तन्मृखोराप्तम् । अथ यद-
 शरीरं तदमृतम् । तस्याऽशरीरेण साम्ना शरीराण्यधूनोव ॥१०॥
 ३।३८॥

सप्तमेऽनुवाके प्रथमः खण्डः ।

१ मुख- । २ अप्रव- । ३-वं । ४-आस्य । ५ अनुसृज- । ६ गा-
 यत्रैन । ७ श्रवसीय- । ८ ऽर्धमा- । ९-साम्ना । १०-साम्ना । ११ प्रास्त- । १२ तम् ।
 १३-यत् । १४-साम्ना ॥

ओवा३चोवा३चोवा३च् हुम्मा ओवा इति षोडशाक्षरा-
 ण्यभ्यगायत । षोडशकलो वै पुरुषः । कलाश्च एवास्य तच्छरी-
 राण्यधूनोव ॥१॥ स एषोऽपहतपाप्मा धृतशरीरः । तदेविक्रया-
 द्यतियुदासं गायस्यो इत्युदास । आ इति आवृद्धाव । वागिति
 तद्ब्रह्म । तदिदन्तरिक्षं सोऽयं वायुः पवते । हुमिति चन्द्रमाः ।
 भा इत्यादिसः ॥२॥ एतस्य ह वा इदमक्षरस्य क्रतोर्भातीत्याच-
 क्षते ॥३॥ एतस्य ह वा इदमक्षरस्य क्रतोर्भ्रमितीत्याचक्षते ॥४॥
 एतस्य ह वा इदमक्षरस्य क्रतोः कुभ्रमितीत्याचक्षते ॥५॥ एतस्य
 ह वा इदमक्षरस्य क्रतोश्शुभ्रमितीत्याचक्षते ॥६॥ एतस्य ह वा
 इदमक्षरस्य क्रतोर्वृषम इत्याचक्षते ॥७॥ एतस्य ह वा इदमक्षरस्य
 क्रतोर्देर्भ इत्याचक्षते ॥८॥ एतस्य ह वा इदमक्षरस्य क्रतोर्यो
 मातीत्याचक्षते ॥९॥ एतस्य ह वा इदमक्षरस्य क्रतोस्सम्भवती-
 त्याचक्षते ॥१०॥ तद्यत्किं च भा३ इति च भा३ इति च तदेत-
 मिथुमं गायत्रम् । प्र मिथुनेन जायते य एवं वेद ॥११॥
 ३।३२॥

सप्तमोऽनुवाके द्वितीयः खण्डः ।

१-आ । २-कृत- ३-सर्वत्र ऐसा पाठ । ४-स । ५-वृष-
 ह दम, सम्भवती । ७-य भती । ८-भ ॥

तदेतदमृतं गायत्रम् । एतेन वै प्रजापतिरमृतत्वमगच्छदेतेन
 देवा एतेनर्षयः ॥१॥ तदेतद्ब्रह्म प्रजापतयेऽब्रवीत् प्रजापतिः^१
 परमेष्ठिने प्राजापत्याय परमेष्ठी प्राजापत्यो देवाय सवित्रे देवस्सविता-
 ऽग्नयेऽग्निरिन्द्रायेन्द्रः काश्यपाय काश्यप ऋश्यगृङ्गाय काश्यपाय
 ऋश्यगृङ्गः काश्यपो देवतरसे श्यावसायनाय काश्यपाय देवतराश्या-
 वसायनः काश्यपश्शुषाय वाहेयाय काश्यपाय शुषो वाहेयः का-
 श्यप इन्द्रोताय^५ दैवापाय शौनकायेन्द्रोतो दैवापश्शौनको हतय
 ऐन्द्रोतये शौनकाय हतिरैन्द्रोतिश्शौनकः पुलुषाय प्राचीनयोग्याय
 पुलुषः प्राचीनयोग्यस्सस्यज्ञाय पौलुषये प्राचीनयौग्याय सस-
 यज्ञः पौलुषिः प्राचीनयोग्यस्सोमशुष्माय सास्यज्ञाय प्राचीन-
 योग्याय सोमशुष्मस्सास्ययज्ञिः प्राचीनयोग्यो हत्स्वाश्यायाऽल्ल-
 केयाय^६ माहावृषाय राज्ञे हत्स्वाशय आल्लकेयो माहावृषो राजा
 जनश्रुताय कारिड्वयाय जनश्रुतः कारिड्वयस्सायकाय जानश्रुते-
 थाय कारिड्वयाय सायको जानश्रुतेयः कारिड्वयो नगरिणे
 जानश्रुतेथाय कारिड्वयाय नगरी जानश्रुतेयः कारिड्वयश्शज्ञाय^{१०}

१ 'काश्यपो' अधिक है । २ श्यावसाय । ३ भूषो, शुषो ।
 ४, वाह्ने । ५ इन्द्रात्- । ६-पिश । ७ लोक्- । ८ स सात्यायज्ञिः
 प्राचीनयोग्यो हत्स्वा' अधिक है । ९ जानुश्च- जानश्च- ।
 १० शिग्- ।

शाध्यायनय आत्रेयाय शङ्खशाध्यायनिरात्रेयो रामाब कातुजाते-
याय वैयाघ्रपद्याय रामः कातुजातेयो वैयाघ्रपद्यः—॥२॥३॥४०॥

सप्तमेऽनुवाके तृतीयः खण्डः ।

—शङ्खाय बाभ्रव्याय शङ्खो बाभ्रव्यो दत्ताय कात्यायनय^१
आत्रेयाय दत्तः कात्यायनिरात्रेयः कँसाय वारकये कँसो वाराकिः
प्रोष्ठपादाय वारक्याय प्रोष्ठपादो वारक्यः^२ कँसाय वारक्याय^३
कँसो वारक्यो जयन्ताय वारक्याय जयन्तो वारक्यः कुबेराय
वारक्याय कुबेरो वारक्यो जयन्ताय वारक्याय जयन्तो वारक्यो
जनश्रुताय वारक्याय जनश्रुतो वारक्यस्सुदत्ताय^४ पाराशर्याय
सुदत्तः पाराशर्योऽषाढायोत्तराय पाराशर्यायाऽषाढ^५ उत्तरः पारा-
शर्यो विपश्चिते शकुनिमित्राय पाराशर्याय विपश्चित्शकुनिमित्रः
पाराशर्यो जयन्ताय पाराशर्याय जयन्तः पाराशर्यः—॥१॥३॥४१॥

सप्तमेऽनुवाके चतुर्थः खण्डः ।

—श्यामजयन्ताय लौहिषाय श्यामजयन्तो लौहिषः पल्लि-
गुप्ताय लौहिषाय पल्लिगुप्तो लौहिषस्सप्तश्रवसे लौहिषाय सप्त-

११—नाब ।

१—नाय, कात्याजय—। २ वर—। ३ प—। ४ सुदत्ता, सुदत्तताय ।

५ अष् (!), आष्—॥

१ बोह—।

श्रवा लौहिसः कृष्णधृतये सायकये कृष्णधृतस्सायकश्याम-
 मुजयन्ताय लौहिषाय श्याममुजयन्तो लौहिसः कृष्णदत्ताय
 लौहिषाय कृष्णदत्तो लौहिषो मित्रभूतये लौहिषाय मित्रभूति^२
 लौहिषश्यामजयन्ताय लौहिषाय श्यामजयन्तो लौहिषस्त्रि-
 वेदाय कृष्णराताय लौहिषाय त्रिवेदः कृष्णरातो लौहित्यो
 यशस्विने जयन्ताय लौहित्याय^३ यशस्वी जयन्तो लौहित्यो जयकाय
 लौहित्याय जयको लौहित्यः कृष्णराताय लौहित्याय कृष्णरातो
 लौहित्यो दत्तजयन्ताय लौहित्याय दत्तजयन्तो लौहित्यो
 विपश्चिते दृढजयन्ताय लौहित्याय विपश्चिद्दृढजयन्तो लौहित्यो
 वैपश्चिताय^४ दार्ढजयन्तये दृढजयन्ताय लौहित्याय वैपश्चितो दार्ढ-
 जयन्ति^५ दृढजयन्तो लौहित्यो वैपश्चिताय दार्ढजयन्तये गुप्ताय
 लौहित्याय ॥१॥ तदेतदमृतं गायत्रमथ यान्यन्यानि गीतानि
 काम्यान्येव तानि काम्यान्येव तानि ॥२॥३॥४॥२॥

सप्तमोऽनुवाके पञ्चमः खण्डः । सप्तमोऽनुवाकस्समाप्तः ॥

२-ति । ३ 'श्यामजयन्तो लौहित्याय' अधिक है । ४ वैविष्-
 ५-द ॥

[चतुर्थोऽध्यायः]

भेताश्वो दर्शतो हरिनीलोऽसि हरितस्पृशस्समानबुद्धो मा
हिंसीः । न मां त्वं वेत्स्य प्रद्रव ॥१॥ यदभ्यवचरणो^१ऽभ्यवैषि
स्वपन्तम्पुरुषमकोविदमश्ममयेन^२ वर्मणा वरुणोऽन्तर्दधातु मा ॥२॥
यदभ्यवचरणो^३ऽभ्यवैषि स्वपन्तम्पुरुषमको विदमयस्मयेन वर्मणा
वरुणोऽन्तर्दधातु मा ॥३॥ यदभ्यवचरणो^४ऽभ्यवैषि स्वपन्तम्पु-
रुषमकोविदं लोहमयेन वर्मणा वरुणोऽन्तर्दधातु मा ॥४॥
यदभ्यवचरणो^५ऽभ्यवैषि स्वपन्तम्पुरुषमकोविदं रजतमयेन वर्मणा
वरुणोऽन्तर्दधातु मा ॥५॥ यदभ्यवचरणो^६ऽभ्यवैषि स्वपन्तम्पुरु-
षमकोविदं सुवर्णमयेन वर्मणा वरुणोऽन्तर्दधातु मा ॥६॥

आयुर्माता^५ मतिः पिता नमस्त आविशोषण ।

ग्रहो नामाऽसि विश्वायुस्तस्मै ते विश्वाहा^६ नमो

नमस्ताम्राय नमो वरुणाय नमो जिघांसते ॥७॥ यक्ष्म राजन्मा^७ मां
हिंसीः । राजन् यक्ष्म मा हिंसीः । तयोस्संविदानयोस्सर्वमायुर-
यान्यहम्^८ ॥८॥४॥१॥

प्रथमोऽनुवाकस्समाप्तः ।

१-णा । २ इति मन्ममयेन । ३ अयाणय । ४ संक्षेप है ।
५ मातन । ६-वाहाय । ७ रुणाय । ८ अं ॥

पुरुषो वै यज्ञः ॥१॥ तस्य यानि चतुर्विंशतिर्वर्षाणि तत्प्रात-
 स्सवनम् । चतुर्विंशत्यक्षरा गायत्री । गायत्रम्प्रातस्सवनम् ॥२॥
 तद्वसूनाम् । प्राणा^२ वै वसवः । प्राणा हीदं सर्वं वस्वाददते ॥३॥
 स यद्येनमेतस्मिन् काल उपतपदुपद्रवेत्स ब्रूयात्प्राणा^३ वसव इदम्मे
 प्रातस्सवनं माध्यन्दिनेन सवनेनानुसंतनुतेति । अगदो हैव
 भवति ॥४॥ अथ यानि चतुश्चत्वारिंशतं वर्षाणि^४ तन्माध्यन्दिनं
 सवनम् । चतुश्चत्वारिंशदक्षरा त्रिष्टुप् । त्रैष्टुभं माध्यन्दिनं
 सवनम् ॥५॥ तदुद्राणाम् । प्राणा वै रुद्राः । प्राणा हीदं सर्वं
 रोदयन्ति ॥६॥ स यद्येनमेतस्मिन् काल उपतपदुपद्रवेत् स
 ब्रूयात्प्राणा रुद्रा इदम्मे माध्यन्दिनं सवनं तृतीयसवनेनानुसंत-
 नुतेति । अगदो हैव भवति ॥७॥ अथ यान्यष्टाचत्वारिंशतं
 वर्षाणि तत्तृतीयसवनम् । अष्टाचत्वारिंशदक्षरा जगती । जागतं
 तृतीयसवनम् ॥८॥ तदादित्यानाम् । प्राणा वा आदित्याः ।
 प्राणा हीदं सर्वमाददते ॥९॥ स यद्येनमेतस्मिन् काल उपतपदु-
 पद्रवेत्स ब्रूयात्प्राणा आदित्या इदम्मे तृतीयसवनमायुषानु-
 संतनुतेति । अगदो हैव भवति ॥१०॥ एतद्ध तद्विद्वान् ब्राह्मण

उवाच महिदास ऐतरेय उपतपति किमिदमुपतपसि योऽहमनेनो-
पतपता न प्रेष्यामीति । स ह षोडशशतं वर्षाणि जिजीव । प्र ह
षोडशशतं वर्षाणि जीवति नैनस्त्राणस्तास्यायुषो जहाति य एवं
वेद ॥११॥४१२॥

द्वितीयोऽनुवाकस्समाप्तः ।

त्र्यायुषं कश्यपस्य जमदग्नेस्त्र्यायुषम् ।

त्रीण्यमृतस्य पुष्पाणि त्रीण्यायुषि मेऽकृणोः ॥१॥

स नो मयोभूः पितवाविशस्व शान्तिको यस्तनुवे स्योनः ॥२॥

येऽग्नयः पुरीष्याः प्रिविष्टाः पृथिवीमनु ।

तेषां त्वमस्युत्तमः प्र णो जीवातवे सुव ॥३॥४१३॥

तृतीयोऽनुवाकस्समाप्तः ।

अरण्यस्य वत्सोऽसि विश्वनामा विश्वाभिरक्ष्णोऽपाम्पक्वो-
ऽसि वरुणस्य दूतोऽन्तर्धिनाम ॥१॥ यथा त्वममृतोर्मर्त्येभ्योऽन्तर्हितो-
ऽस्येवं त्वमस्मानघायुभ्योऽन्तर्धेहि । अन्तर्धिरसि स्तेनेभ्यः ॥२॥४१४॥

चतुर्थोऽनुवाकस्समाप्तः ।

५ सम्य ॥

१ त्रियायु- २ त्रीण । ३ आयुंक्षि । ४-तो । ५ चंतोका ।
६ य । ७-भ्यो । ८ प्रा ।

१ विश्वोन्-अ । २-क्षमा । ३ दूर्ध्वनाम । ४ त । ५ मर्त्येभ्यो ॥

व्युषि सविता भवस्युदेप्यन् विष्णुरुद्यन्पुरुष उदितो बृहस्पति-
 रभिप्रयन्मघवेन्द्रो वैकुण्ठो माध्यन्दिने भगोऽपराह्^२ उग्रो देवो लो-
 हितायन्नस्तमिते यमो भवसि ॥१॥ अश्वसु सोमो राजा निशाया-
 म्पितृराजस्त्वमे^३ मनुष्यान्प्रविशसि पयसा पशून् ॥२॥ विरात्रे
 भवो भवस्यपररात्रेऽङ्गिरा अग्निहोत्रवेलायाम्भृगुः ॥३॥ तस्य तदे-
 तदेव मण्डलमूधः । तस्यैतौ स्तनौ यद्वाक् च प्राणश्च । ताभ्या-
 म्मेधुत्वाऽध्यायन्ब्रह्मचर्यम्प्रजाम्पशून् स्वर्गं लोकं सजातवन-
 स्याम् ॥४॥ एता आशिष^६ आशासे । भूर्भुवस्स्वः । उदिते शुक्रमा-
 दिश^७ । तदात्मन्दधे ॥५॥४॥५॥

पञ्चमोऽनुवाकस्समाप्तः ।

भगेरथो हैहवाको राजा कामप्रेण यज्ञेन यक्ष्यमाण आस ॥१॥
 तदु ह कुरुपञ्चालानाम्ब्राह्मणा ऊचुर्भगेरथो ह वा अयमैहवाको
 राजा कामप्रेण यज्ञेन यक्ष्यमाणः^२ । एतेन कथां वदिष्याम इति ॥२॥
 तं हाऽभ्येयुः । तेभ्यो^३ हाऽभ्यागतेभ्योऽपचितीश्चकार ॥३॥ अथ
 हैषां स भाग आवव्राजोप्त्वा^५ केशश्मश्रूणि नखान्निकृत्याऽऽज्ये-

१-ओ । २ पराहेण । ३-ज । ४ त । ५-य । ६ आशिष ।
 ७ आदिष ॥

१-पाञ्च- । २ यक्ष्म- । ३ एततेन । ४ 'भा' अधिक है ।
 ५ उपत्वा

नाऽभ्यज्य दण्डोपानहम्बिभ्रव ॥४॥ तान् होवाच ब्राह्मणा
 भगवन्तः कतमो वस्तद्वेद यथाऽऽश्रावितप्रत्याश्राविते देवान् गच्छत
 इति ॥५॥ अथ होवाच कतमो वस्तद्वेद यद्विदुषस्सूद्राता सुहोता
 स्वध्वर्युस्सुमानुषविदाजायत इति ॥६॥ अथ होवाच कतमो
 वस्तद्वेद यच्छन्दाँसि प्रयुज्यन्ते यत्तानि सर्वाणि संस्तुतान्यभि-
 सम्पद्यन्त इति ॥७॥ अथ होवाच कतमो वस्तद्वेद यथा गायत्र्या
 उत्तमे अक्षरे पुनर्यज्ञमपिगच्छत इति ॥८॥ अथ होवाच कतमो
 वस्तद्वेद यथा दक्षिणाः प्रतिगृहीता न हिंसन्तीति ॥९॥४॥६॥

षष्ठेऽनुवाके प्रथमः खण्डः ।

एतान् हैनान् पञ्च प्रश्नान् पप्रच्छ ॥१॥ तेषां ह कुरूपञ्चा-
 लानाम्बक्त्रे दालभ्योऽनूचान आस ॥२॥ स होवाच यथाऽऽश्रा-
 वितप्रत्याश्राविते देवान् गच्छत इति प्राच्यां वै राजन् दिश्या-
 श्रावितप्रत्याश्राविते देवान् गच्छतः । तस्मात्प्राङ्तिष्ठन्नाश्रावयति
 प्राङ् तिष्ठन्प्रत्याश्रावयतीति ॥३॥ अथ होवाच यद्विदुषस्सूद्राता
 सुहोता स्वध्वर्युस्सुमानुषविदाजायत इति यो वै मनुष्यस्य
 सम्भूतिं वेदेति होवाच तस्य सूद्राता सुहोता स्वध्वर्युस्सुमानुषवि-

६ ज्या ॥

१-पाञ्च- २ अस्म- ३ सम- ६ प्रच- ।

दाजायत इति प्राणा उ ह वाव राजन् मनुष्यस्य सम्भूतिरेवेति
 ॥४॥ अथ होवाच यच्छ्रुन्दांसि प्रयुज्यन्ते यत्तानि सर्वाणि
 संस्तुतान्यभिसम्पद्यन्त इति गायत्रीमु ह वाव राजन् सर्वाणि
 छ्रुन्दांसि संस्तुतान्यभिसम्पद्यन्त इति ॥५॥ अथ होवाच यथा
 गायत्र्या उत्तमे अक्षरे पुनर्यज्ञमपिगच्छत इति वषट्कारेणो ह
 वाव राजन् गायत्र्या उत्तमे अक्षरे पुनर्यज्ञमपिगच्छत इति ॥६॥
 अथ होवाच यथा दक्षिणाः प्रतिगृहीता न हिंसन्तीति-॥७॥४॥७॥

षष्ठेऽनुवाके द्वितीयः खण्डः ।

—यो वै गायत्र्यै मुखं वेदेति होवाच तं दक्षिणा प्रतिगृहीता
 न हिंसन्तीति ॥१॥ अग्निर्ह वाव राजन् गायत्रीमुखम् ।
 तस्माद्यदग्नावभ्यादधाति भूयानेव स तेन भवति वर्धते । एव-
 मेवैवं विद्वान्ब्राह्मणः प्रतिगृह्णन्भूयानेव भवति वर्धत उ एवेति ॥२॥
 स होवाचाऽनुचानो वै किलाऽयम्ब्राह्मण आस । त्वामहमनेन
 यज्ञेनैमीति ॥३॥ तस्य वै ते तथोद्गास्यामीति होवाच यथै-
 कराडेव भूत्वा स्वर्गं लोकमेष्यसीति ॥४॥ तस्मा एतेन गाय-
 त्रेणोद्गीयैनोज्जगौ । स हैकराडेव भूत्वा स्वर्गं लोकमियाय ।

४ सम्भूतिद्भुर, सम्भूतिर्द्धर । ५ है ॥

१ अइन्-। २-यैन् । ३ गायत्र सो ।

तेन^४ हैतेनैकराडेव भूत्वा स्वर्गं लोकमेति [य एवं वेद] ॥५॥ ओं
 वा इति द्वे अक्षरे । ओं वा इति चतुर्थे । ओं वा इति षष्ठे ।
 हुम्भा ओं वागित्यष्टमे ॥६॥ तेन हैतेन प्रतीदशोऽस्य भयदस्या-
 ऽसमात्यस्योज्जगौ ॥७॥ तं होवाच किं त आगास्यामीति । स
 होवाच हरीमे देवाश्वा वागायेति । तथेति । तौ हास्मा आजगौ ।
 तौ हैनमाजग्मतुः ॥८॥ स वा एष उद्गीथः कामानां^६ सम्पदो
 वा३चो वा३चो वा३च् हुम्भा ओं वागिति । साङ्गो हैव स तनुर-
 मृतस्सम्भवति य एतदेवं वेदाथो यस्यैवं विद्वानुद्गायति ॥९॥४॥८॥

षष्ठोऽनुवाके तृतीयः खण्डः । षष्ठोऽनुवाकस्समाप्तः ॥

पुरुषो वै यज्ञः पुरुषो होद्गीथः । अथैत एव मृत्यवो यद-
 भिर्वायुरादित्यश्चन्द्रमाः ॥१॥ ते ह पुरुषं जायमानमेव मृत्युपाशैर-
 भिदधाति । तस्य वाचमेवाग्निरभिदधाति प्राणं वायुश्चक्षुरादित्यश्-
 श्रोत्रं चन्द्रमाः ॥२॥ तदाहुस्स वा उद्गाता यो यजमानस्य प्राणो-
 भ्योऽधि मृत्युपाशानुन्मुञ्चतीति ॥३॥ तद्यस्यैवं विद्वान् प्रस्तौति
 य एवास्य वाचि मृत्युपाशस्तमेवास्योन्मुञ्चति ॥४॥ अथ यस्यैवं

४ तोन । ५-शे । ६ सवद् ॥

१ अवा । २ यजा- । ३ उमुन्- ।

विद्वानुद्गायति य एवास्य प्राणो मृत्युपाशस्तमेवास्योन्मुञ्चति ॥५॥
 अथ यस्यैवं विद्वान् प्रतिहरति य एवास्य चक्षुषि^६ मृत्युपाशस्तमे-
 वास्योन्मुञ्चति ॥६॥ अथ यस्यैवं विद्वान्निधनमुपैति^७ य एवास्य
 श्रोत्रे मृत्युपाशस्तमेवास्योन्मुञ्चति ॥७॥ एवं वा एवंविदुद्गाता
 यजमानस्य प्राणोभ्योऽधिमृत्युपाशानुन्मुञ्चति^८ ॥८॥ तदाहुस्स
 वा उद्गाता यो यजमानस्य प्राणोभ्योऽधिमृत्युपाशानुन्मुच्यथैनं
 साङ्गं सतनुं सर्वमृत्योस्स्पृणातीति ॥९॥४।९॥

सप्तमेऽनुवाके प्रथमः खण्डः ।

तद्यस्यैवं विद्वान्हिङ्करोति य एवास्य लोमसु मृत्युपाशस्त-
 स्मादेवैनं स्पृणाति ॥१॥ अथ यस्यैवं विद्वान् प्रस्तौति य एवास्य
 त्वाचि^९ मृत्युपाशस्तस्मादेवैनं स्पृणाति ॥२॥ अथ यस्यैवं विद्वाना-
 दिमादत्ते य एवास्य माँसेषु मृत्युपाशस्तस्मादेवैनं स्पृणाति ॥३॥
 अथ यस्यैवं विद्वानुद्गायति य एवास्य स्नावसु मृत्युपाशस्तस्मा-
 देवैनं स्पृणाति ॥४॥ अथ यस्यैवं विद्वान्प्रतिहरति य एवास्याङ्गेषु
 मृत्युपाशस्तस्मादेवैनं स्पृणाति ॥५॥ अथ यस्यैवं विद्वानुपद्रवति य
 एवास्यास्थिषु मृत्युपाशस्तस्मादेवैनं स्पृणाति ॥६॥ अथ यस्यैवं

४-द्वा । ५ उद्गायति । ६ प्राणे । ७ नास्ति । ८ प्रतिहरति ॥

१ कच्-। २ या ।

विद्वान् निधनमुपैति य एवास्य मज्जसु मृत्युपाशस्स तस्मादेवैनं
 स्पृणाति ॥७॥ एवं वा एवंविदुद्गाता यजमानस्य प्राणोभ्योऽधि-
 मृत्युपाशानुन्मुच्याथैनं साङ्गं सतनुं सर्वमृत्योस्सपृणाति ॥८॥ तदा-
 हुस्स वा उद्गाता यो यजमानस्य प्राणोभ्योऽधिमृत्युपाशानुन्मुच्याथैनं
 साङ्गं सतनुं सर्वमृत्योस्सपृत्वा स्वर्गे लोके सप्तधा दधातीति ॥९॥
 स वा एष इन्द्र वैमृध उद्यन् भवति सवितोदितो मित्रस्संगवकाल^३
 इन्द्रो वैकुराठो मध्यन्दिने समावर्तमानश्शर्व उग्रो देवो लोहितायन्
 प्रजापतिरेव संवेशे^४स्तमितः ॥१०॥ तद्यस्यैवं विद्वान् हिङ्करोति य
 एवास्योद्यतस्वर्गो^५ लोकस्तस्मिन्नेवैनं दधाति ॥११॥ अथ यस्यैवं
 विद्वान् प्रस्तौति य एवास्योदिते स्वर्गो लोकस्तस्मिन्नेवैनं दधाति
 ॥१२॥ अथ यस्यैवं विद्वानादिमादत्ते य एवास्य संगवकाले^३
 स्वर्गो लोकस्तस्मिन्नेवैनं दधाति ॥१३॥ अथ यस्यैवं विद्वानुद्रायति
 य एवास्य मध्यन्दिने^६ स्वर्गो लोकस्तस्मिन्नेवैनं दधाति ॥१४॥ अथ
 यस्यैवं विद्वान् प्रतिहरति य एवास्यापराह्णे स्वर्गो लोकस्तस्मिन्ने-
 वैनं दधाति ॥१५॥ अथ यस्यैवं विद्वानुपद्रवति य एवास्यास्तं-
 वतस्वर्गो^५ लोकस्तस्मिन्नेवैनं दधाति ॥१६॥ अथ यस्यैवं विद्वान्नि-

धनमुपैति य एवास्यास्तमिते स्वर्गो लोकस्तस्मिन्नेवैनं दधाति ॥१७॥

एवं वा एवंविदुद्गाता यजमानस्य प्राणोभ्योऽधिभृत्युपाशानुभु-
च्याथैनं साङ्गं सतनुं सर्वभृत्योस्सृष्ट्वा स्वर्गे लोके सप्तधा^१
दधाति ॥१८॥४।१०॥

सप्तमेऽनुवाके द्वितीयः खण्डः । सप्तमोऽनुवाकस्समाप्तः ॥

षड्^१ ढ^२ वै देवतास्स्वयम्भुवोऽग्निर्वायुरसावादित्यः प्राणोऽन्नं^३
वाक् ॥१॥ ताऽ^३श्रैष्ठ्यै^४ व्यवदन्ताऽहं^५ श्रेष्ठाऽस्म्यहं^६ श्रेष्ठाऽस्म्य^६? [स्मि]
मां श्रियमुपाध्वमिति ॥२॥ ता अन्योन्यस्यै^७ श्रेष्ठतायै नाऽतिष्ठन्त ।
ता अब्रुवन्न वा अन्योन्यस्यै^८ श्रेष्ठतायै तिष्ठामह एता सम्प्रब्रवामहै^९
यथा श्रेष्ठास्सम इति ॥३॥ ता अग्निमब्रुवन्कथं त्वं^{१०} श्रेष्ठोऽसीति ॥४॥
सोऽब्रवीदहं देवानाम्मुखमस्म्यहमन्यासाम्प्रजानाम् । मयाऽऽहुतयो
हूयन्ते । अहं देवानामन्नं विक्रो^{११}म्यहम्मनुष्याणाम् ॥५॥ स यन्न^{१२}
स्याममुखा एव देवास्स्युरमुखा अन्याः प्रजाः । नाऽऽहुतयो हूयेरन्^{१३} ।
न देवानामन्नं विक्रियेत^{१४} न मनुष्याणाम् ॥६॥ तत इदं सर्वम्परा-

६ सप्त ॥

१ षड्ढ । २ ड । ३-आ । ४-ठे । ५ ष्ववद्- । ६ श्रैष्ठ- ।
७ आन्या- । ८-है । ९ एत । १० त्वा । ११-कार्- । १२ अ ।
१३ हूयन्ते (१) बिख कर हुयर्न (१) किया गया । १४-ए ।

भवेत्ततो न किञ्चन परिशिष्येतेति ^{१५} ॥७॥ एवमेवेति होचुर्नैवेह ^{१८}
 किञ्चन परिशिष्येत यत् त्वं न स्या इति ॥८॥ अथ वायुमब्रुव-
 न्कथमु त्वं श्रेष्ठोऽसीति ॥९॥ सोऽब्रवीदहं देवानाम्प्राणोऽस्म्यह- ^{१७}
 मन्यासाम्प्रजानाम् । यस्मादहमुत्क्रामामि ततस्स प्रप्लवते ॥१०॥
 स यदहं न स्यां तत इदं सर्वम्पराभवेत्ततो न किञ्चन परिशिष्येते-
 ति ॥११॥ एवमेवेति होचुर्नैवेह किञ्चन परिशिष्येत यत्त्वं न स्या ^{१६}
 इति ॥१२॥४॥११॥

अष्टमेऽनुवाके प्रथमः खण्डः ।

अथादित्यमब्रुवन् कथमु त्वं श्रेष्ठोऽसीति ॥१॥ सोऽब्रवीद-
 हमेवोद्यन्नहर्भवाभ्यहमस्तंयन्रात्रिः । मया चक्षुषा कर्माणि क्रियन्ते ।
 स यदहं न स्यां नैवाहस्स्यान्न रात्रिः । न कर्माणि क्रियेरन् ॥२॥
 तत इदं सर्वम्पराभवेत्ततो न किञ्चन परिशिष्येतेति ॥३॥
 एवमेवेति होचुर्नैवेह किञ्चन परिशिष्येत यत्त्वं न स्या इति ॥४॥
 अथ प्राणमब्रुवन् कथमु त्वं श्रेष्ठोऽसीति ॥५॥ सोऽब्रवीत्प्राणो
 भूत्वाऽग्निर्दीप्यते । प्राणो भूत्वा वायुराकाशमनुभवति । प्राणो
 भूत्वाऽऽदिस उदेति । प्राणादन्नम्प्राणाद्वाक् ॥६॥ स यदहं न स्यां तत ^५

१५-ष्ये । १६ य । १७ अहहम् । १८ उव ह ॥
 १ हंन । २ प । ३ उक् । ४ अंक- ५ तत्त (!) ।

इदं सर्वम्पराभवेत्ततो न किञ्चन परिशिष्येतेति ॥७॥ एवमेवेति
 होचुर्नैवेह किञ्चन परिशिष्येत यत्त्वं न स्या इति ॥८॥ अथान्न-
 मब्रुवन् कथमु^३ त्वं श्रेष्ठमसीति ॥९॥ तदब्रवीन्मयि प्रतिष्ठायाग्निर्दी-
 प्यते । मयि प्रतिष्ठाय वायुराकाशमनुविभवति । मयि प्रतिष्ठाया-
 दिस उदेति । मदेव प्राणो मद्राक् ॥१०॥ स यदहं न स्यां तत्^५
 इदं सर्वम्पराभवेत्ततो न किञ्चन परिशिष्येतेति ॥११॥ एवमेवेति
 होचुर्नैवेह किञ्चन परिशिष्येत यत्त्वं न स्या इति ॥१२॥ अथ
 वाचमब्रुवन् कथमु^३ त्वं श्रेष्ठासीति ॥१३॥ साब्रवीन्मयैवेदं विज्ञायते
 मयाऽदः । स यदहं न स्यां नैवेदं विज्ञायेत नाऽदः ॥१४॥ तत्^५
 इदं सर्वम्पराभवेन् नैवेह किञ्चन परिशिष्येतेति ॥१५॥ एवमेवे-
 ति होचुर्नैवेह किञ्चन परिशिष्येत यत्त्वं न स्या इति ॥१६॥ ४।१२॥

अष्टमेऽनुवाके द्वितीयः खण्डः ।

ता अब्रुवन्नेता वै किल सर्वा देवताः । एकैकामेवानुस्म^१ ।
 स यन्नु नस्सर्वासां देवतानामेकाचन न स्यात्तत् इदं सर्वम्परा-
 भवेत्ततो न किञ्चन परिशिष्येत । हन्त सार्धं समेखं^२ यच्छ्रेष्ठं

इ संक्षेप करते हैं । 'स (! न के स्थान में) स्या इति' यहाँ
 तक छोड़ दिया है । ७ इ-त्य् (!) संक्षिप्त दिया है । ८-शिष्य । ९ तुर ।

१-अ । २ साम-।

तदसामेति ॥१॥ ता एतस्मिन् प्राण ओकारे वाच्यकारे समायन् ।
 तद्यत्समायन् तत्सान्नस्सामत्वम् ॥२॥ ता अब्रुवन् यानि नो
 मर्त्यान्यनपहतपाप्मान्यक्षराणि तान्युद्धृत्वा^५ मृतेष्वपहतपाप्मसु शुद्धे-
 ष्वक्षरेषु गायत्रं गायामाऽग्नौ वायावादित्ये प्राणोऽग्ने वाचि ।
 तेनापहस्य मृत्युमपहस्य पाप्मानं^६ स्वर्गं लोकमियामेति ॥३॥ एत्यग्नेर-
 मृतमपहतपाप्म शुद्धमक्षरम् । अग्निरस्य मर्त्यमनपहतपाप्मा-
 ऽक्षरम् ॥४॥ वेति वायोरमृतमपहतपाप्म शुद्धमक्षरम् । युरित्यस्य
 मर्त्यमनपहतपाप्माक्षरम् ॥५॥ एत्यादित्यस्याऽमृतमपहतपाप्म
 शुद्धमक्षरम् । त्येत्यस्य^{१०} मर्त्यमनपहतपाप्माक्षरम् ॥६॥ प्रेति
 प्राणस्यामृतमपहतपाप्म शुद्धमक्षरम्^{११} । शेत्यस्य^{१२} मर्त्यमनपहत
 पाप्माक्षरम् ॥७॥ एत्यन्नस्यामृतमपहतपाप्म शुद्धमक्षरम् । नमित्यस्य
 मर्त्यमनपहतपाप्माक्षरम् ॥८॥ वेति वाचोऽमृतमपहतपाप्म शुद्ध-
 मक्षरम् । गित्यस्यै मर्त्यमनपहतपाप्माक्षरम् ॥९॥ ता एतानि
 मर्त्यान्यनपहतपाप्मान्यक्षराण्युद्धृत्याऽमृतेष्वपहतपाप्मसु^{१३} शुद्धेष्व-
 क्षरेषु गायत्रमागायन्नग्नौ वायावादित्ये प्राणोऽग्ने वाचि । तेनाप-

३-णो । ४ वाच्य । ५-त्यै । ६ अम-(!) । ७ येन । ८-त ।
 ९-न । १० त्य इत्य् । ११ ' वेदिवाचो मृत ' अधिक है पर लाल रङ्ग
 से काटा गया है । १२ य इत्य् । १३-मासु ॥

हृत्य मृत्युमपहत्य पाप्मानं स्वर्गं लोकमायन् ॥१०॥ अपहत्य मृत्यु-
मपहत्य पाप्मानं स्वर्गं लोकमेति य एवं वेद ॥११॥४॥१३॥

अष्टमेऽनुवाके तृतीयः खण्डः ।

ता ब्रह्माऽब्रुवन्त्वयि प्रतिष्ठायैतमुद्यच्छामेति । ता ब्रह्माऽब्रवी-
दास्येन^१ प्राणेन युष्मानास्येन^२ प्राणेन मामुपामवायेति ॥१॥
ता एतेन प्राणेनौकारेण वाच्यकारमभिनिमेष्यन्त्यो^३ द्विद्वाराद्रका-
रमोकारेण वाचमनुस्वरन्त्य उभाभ्याम्प्राणाभ्यां गायत्रमगायन्तो-
वा३चोवा३चोवा३च् हुम् भा वो वा इति ॥२॥ स यथोभया-
पदी प्रतितिष्ठत्येवमेव स्वर्गे लोके प्रत्यतिष्ठन् । प्रति स्वर्गे लोके
तिष्ठति य एवं वेद ॥३॥ य उ ह वा एवं विदस्माल्लोकात्प्रैति स
प्राण एव भूत्वा वायुमप्येति वायोरध्यभ्राण्यभ्रेभ्योऽधि^४ वृष्टिं^५
वृष्ट्यैवेमं लोकमनुविभवति ॥४॥ ऋषयो ह सत्रमासां चक्रिरे ।
ते पुनः पुनर्बह्वीभिर्बह्वीभिः प्रतिपाद्विस्वर्गस्य लोकस्य द्वारं
नानुचन बुबुधिरे ॥५॥ त उ श्रमेण तपसा व्रतचर्येणेन्द्रमवरु-
धिरे ॥६॥ तं होचुस्स्वर्गं वै लोकमैप्सिष्म^६ । ते पुनः पुनर्बह्वीभि-
र्बह्वीभिः^७ प्रतिपाद्विस्वर्गस्य लोकस्य द्वारं नानुचनाऽभुत्स्महि ।

१ आस्येनेन । २-आ,-आन् । ३-अत् । ४ ए- । ५-ञ्- । ६ ऐप्सिष्ठु ।

७ 'बह्वीमिर्' अधिक है । ८ अभूत्- । १० मेषन्त- ।

तथा नोऽनुशाधि यथा स्वर्गस्य लोकस्य द्वारमनुप्रज्ञायाऽनार्तास्स्वस्ति
संवत्सरस्योदचं गत्वा स्वर्गं लोकमियामेति ॥७॥ तान् होवाच
को वस्स्थविरतम इति ॥८॥४१४॥

अष्टमेऽनुवाके चतुर्थः खण्डः ।

अहमित्यगस्त्यः ॥१॥ स वा एहीति होवाच तस्मै वै^१ तेऽहं
तद्वक्ष्यामि^२ यद्विद्वांसस्स्वर्गस्य लोकस्य^३ द्वारमनुप्रज्ञायाऽनार्तास्स्वस्ति
संवत्सरस्योदचं गत्वा स्वर्गं लोकमेप्यथेति ॥२॥ तस्मा एतं
गायत्रस्योद्गीथमुपनिषदममृतमुवाचाऽग्नौ वाया^४वादित्ये प्राणोऽन्ने
वाचि ॥३॥ ततो वै ते स्वर्गस्य लोकस्य द्वारमनुप्रज्ञायाऽनार्ता-
स्स्वस्ति संवत्सरस्योदचं गत्वा स्वर्गं लोकमायन् ॥४॥ एवमेवैवं
विद्वान् स्वर्गस्य लोकस्य द्वारमनुप्रज्ञायाऽनार्तस्स्वस्ति संवत्सर-
स्योदचं गत्वा स्वर्गं लोकमेति ॥५॥४१५॥

अष्टमेऽनुवाके पञ्चमः खण्डः । अष्टमोऽनुवाकस्तस्मात् ॥

एवं वा एतं गायत्रस्योद्गीथमुपनिषदममृतमिन्द्रोऽगस्त्यायो-
वाचाऽगस्त्य इषाय श्यावाश्वय इषश्श्यावाश्विर्गौषूक्तये गौषूक्ति-

६ 'अहमित्य' (!) अधिक है ॥

१ नास्ति । २-क्ष्यामि । ३ 'द्वारमवैवं' अधिक है । ४ वाय् ॥

१-गीत्-। २-आवो ।

ज्वालायनाय^३ ज्वालायनश्शाठ्यायनये^४ शाठ्यायनी रामाय कातु-
जातेयाय^५ वैयाघ्रपद्याय रामः कातुजातेयोवैयाघ्रपद्यः—॥१॥४॥१६॥

नवमेऽनुवाके प्रथमः खण्डः ।

—शङ्खाय बाभ्रव्याय शङ्खो बाभ्रव्यो दत्ताय कात्यायनय^१
आत्रेयाय दत्तः कात्यायनिरात्रेयः कँसाय वारक्याय कँसो वार-
क्यस्सुयज्ञाय शारिङल्याय सुयज्ञश्शारिङल्योऽग्निदत्ताय शारिङ-
ल्यायाऽग्निदत्तश्शारिङल्यस्सुयज्ञाय शारिङल्याय सुयज्ञश्शारिङ-
ल्यो जयन्ताय वारक्याय जयन्तो वारक्यो जनश्रुताय वारक्याय
जनश्रुतो वारक्यस्सुदत्ताय पाराशर्याय ॥१॥ सैषा^४ शाठ्यायनी
गायत्रस्थोपनिषदेवमुपासितव्या ॥२॥४॥१७॥

नवमेऽनुवाके द्वितीयः खण्डः । नवमोऽनुवाकस्समाप्तः ॥

केनेषितम्पतति प्रेषितम्नः केन प्राणः प्रथमः प्रैति युक्तः ।
केनेषितां वाचमिमां वदन्ति चक्षुश्श्रोत्रं क उ देवो युनक्ति ॥१॥
श्रोत्रस्य श्रोत्रम्नसो मनो यद् वाचो ह वाचं स उ प्राणस्य प्राणः ।
चक्षुषश्चक्षुरतिमुच्य धीराः प्रेक्षाऽस्माल्लोकादमृता भवन्ति ॥२॥

३ व्वा—१ ४-आये । ५ वाय्या—॥

१-आय । २ प-१ ३-ओ, और 'जनश्रुताय वारक्याय
जनश्रुते (!) वारक्यस्' अधिक है । ४-ओ ।

न तत्र चतुर्गच्छति न वाग्गच्छति नो मनः ।
 न विद्म^१ न विजानीमो^२ यथैतदनुशिष्यात्^३ ॥३॥
 अन्यदेव तद् विदितादथो अविदितादधि ।
 इति शुश्रुम^४ पूर्वेषां ये नस्तद्व्याचक्षिरे ॥४॥
 यद् वाचाऽनभ्युदितं येन वागभ्युद्यते ।
 तदेव ब्रह्म त्वं विद्धि नेदं यदिदमुपासते ॥५॥
 यन्मनसा न मनुते येनाऽऽहुर्मनौ^६ मतम् ।
 तदेव ब्रह्म त्वं विद्धि नेदं यदिदमुपासते ॥६॥
 यच्चक्षुषा न पश्यति येन चक्षूंषि पश्यति ।
 तदेव ब्रह्म त्वं विद्धि नेदं यदिदमुपासते ॥७॥
 यच्छ्रोत्रेण न शृणोति^८ येन श्रोत्रमिदं श्रुतम् ।
 तदेव^९ ब्रह्म त्वं विद्धि नेदं यदिदमुपासते ॥८॥
 यत् प्राणेन न प्राणि^{१०}ति^{१०} येन प्राणः प्रणीयते ।
 तदेव ब्रह्म त्वं विद्धि नेदं यदिदमुपासते ॥९॥ ४१८॥

दशमेऽनुवाके प्रथमः खण्डः ।

यदि मन्यसे सुवेदेति दहमेवाऽपि नूनं त्वं वेत्स्य ब्रह्मणो रूपं यदस्य
 त्वं यदस्य देवेषु । अथ नु मीमांस्यमेव ते मन्येऽविदितम् ॥ १ ॥

१ विदुः । २-अ । ३ ऽवै अधिक है । ४-शिष्य- । ५-श्रू- ।
 ६ मन्यो । ७ मतेम् । ८ नश् । ९ उक्तानुक्त है । १०-णीति ॥

नाऽहम्मन्ये सुवेदेति नो न वेदेति वेद च ।

यो नस्तद् वेद तद्वेद नो न वेदेति वेद च ॥२॥

यस्याऽमतं तस्य मतम्मतं यस्य न वेद सः ।

अविज्ञातं विज्ञानतां विज्ञातमविज्ञानताम् ॥३॥

प्रतिबोधविदितम्मतममृतत्वं हि विन्दते ।

आत्मना विन्दते वीर्यं विद्यया विन्दतेऽमृतम् ॥४॥

इह चेदवेदीदथ सख्यमस्ति । न चेदिहाऽवेदीन्महतीविनष्टिः ।

भूतेषु-भूतेषु विविच्य धीराः प्रेक्षाऽस्माच्छ्लोकादमृता भवन्ति ॥५॥४॥१-६

दशमेऽनुवाके द्वितीयः खण्डः ।

ब्रह्म ह देवेभ्यो विजिग्ये । तस्य ह ब्रह्मणो विजये देवा अमहीयन्त ।

त ऐक्षन्ताऽस्माकमेवाऽयं विजयः । अस्माकमेवाऽयं महिमेति ॥१॥

तद्वैषां विजज्ञौ । तेभ्यो ह प्रादुर्बभूव । तच्च व्यजानन्त किमिदं

यक्षमिति ॥२॥ तेऽग्निमब्रुवज्जातवेद एतद् विजानीहि किमेतद्

यक्षमिति । तथेति ॥३॥ तदभ्यद्रवत् । तमभ्यवदत् कोऽसीति ।

अग्निर्वा अहमस्मीत्यब्रवीज्जातवेदा वा अहमस्मीति ॥४॥ तस्मिँ-

स्त्वयि किं वीर्यमिति । अपीदं सर्वं दहेयम् यदिदम्पृथिव्यामिति ॥५॥
 तस्मै तृणं निदधावेतद्दहेति । तदुपप्रेयाय सर्वजवेन । तन्न शशाक दग्धुम् ।
 स तत एव निवृत्ते नैनदशकं विज्ञातुं यदेतद्यत्नमिति ॥६॥ अथ
 वायुमब्रुवन् वायवेतद् विजानीहि किमेतद् यत्नमिति । तथेति ॥७॥
 तदभ्यद्रवत् । तमभ्यवदत् कोऽसीति । वायुर्वा अहमस्मीत्यब्रवी-
 न्मातरिश्वा वा अहमस्मीति ॥८॥ तस्मिँस्त्वयि किं वीर्यमिति ।
 अपीदं सर्वमाददीय यदिदम्पृथिव्यामिति ॥९॥ तस्मै तृणं
 निदधावेतदादत्स्वेति । तदुपप्रेयाय सर्वजवेन । तन्न शशाका-
 ऽऽदातुम् । स तत एव निवृत्ते नैनदशकं विज्ञातुं यदेतद्यत्नमिति ॥१०॥
 अथेन्द्रमब्रुवन् मघवन्नेतद् विजानीहि किमेतद् यत्नमिति । तथेति ।
 तदभ्यद्रवत् । तस्मात् तिरोऽदधे ॥११॥ स तस्मिन्नेवाऽऽकाशे
 स्त्रियमाजगाम बहु शोभमानामुमां हैमवतीम् । तां होवाच किमेतद्
 यत्नमिति ॥१२॥४।२०॥

दशमेऽनुवाके तृतीयः खण्डः ।

ब्रह्मेति होवाच ब्रह्मणो वा एतद् विजये महीयध्व इति । ततो
 हैव विदांचकार ब्रह्मेति ॥१॥ तस्माद्वा एते देवा अतितरामि-

बान्यान् देवान् यदधिर्वायुरिन्द्रः । ते ह्येनन्नेदिष्टम्पस्पृशुस्स ह्येनत्^३
 प्रथमो विदांचकार ब्रह्मेति ॥२॥ तस्माद् वा इन्द्रोऽतितरामिवा-
 ऽन्यान् देवान् । स ह्येनन्नेदिष्टम्पस्पर्श स ह्येनत् प्रथमो विदांचकार
 ब्रह्मेति ॥३॥ तस्यैष आदेशो यदेतद् विद्युतो व्यद्युतदा^४ इति^५ ।
 न्यमिषदा^६ । इत्यधिदेवतम् ॥४॥ अथाऽध्वात्मम् । यदेनद्
 गच्छतीव च मनोऽनेन चैनदुपस्मरत्यभीक्ष्णं संकल्पः^७ ॥५॥ तद्
 तद्वनं नाम । तद्वनमित्युपासितव्यम् । स य एतदेवं वेदाऽभिहैनं
 सर्वाणि भूतानि संवाञ्छन्ति ॥६॥ उपनिषदम्भो ब्रूहीति । उक्ता
 त उपनिषत् । ब्राह्मी वाच त उपनिषदमब्रूमेति ॥७॥ तस्यै तपो
 दमः कर्मेति प्रतिष्ठा^८ वेदास्सर्वाङ्गाणि सत्यमायतनम् ॥८॥
 यो^{१०} वा एतामेवं वेदाऽपहस्य पाप्मानमनन्ते स्वर्गे लोकेऽप्येये
 प्रतितिष्ठति ॥९॥१०११॥

दशमेऽनुवाके चतुर्थः खण्डः । दशमोऽनुवाकस्समाप्तः ॥

१ नेदिष्मा, नेदिषुम् । २ ते । ३ अन् । ४ विद्यु । ५ इती । ६ मीष् ।

७ सुक् । ८ सम्वाञ्छन्ति । ९ ओ । १०-प ॥

आशा वा इदमग्र आसीद्विष्यदेव । तदभवत् । ता आपो-
 ऽभवन् ॥१॥ तास्तपोऽतप्यन्त । तास्तपस्तेपाना हुस्सिखेव प्राचीः
 प्राश्वसन् । स वाव प्राणोऽभवत् ॥२॥ ताः प्राण्याऽपानन् । स
 वा अपानोऽभवत् ॥३॥ ता अपान्य व्यानम् । स वाव व्यानो-
 ऽभवत् ॥४॥ ता व्यान्य समानन् । स वाव समानोऽभवत् ॥५॥
 तास्समान्योदानन् । स वा उदानोऽभवत् ॥६॥ तदिदमेकमेव
 सधमाद्यमासीदविविक्तम् ॥७॥ स नामरूपमकुरुत् । तेनैन्द्रच-
 विनक् । वि ह पाप्मनो विच्यते य एवं वेद ॥८॥ तदसौ वा
 आदितः प्राणोऽग्निरपानं आपो व्यानो दिशस्समानश्चन्द्रमा
 उदानः ॥९॥ तद्वा एतदेकमभवत्प्राण एव । स य एवमेतदेकम्भ-
 वद्वेदैवं हैतदेकधा भवतीत्येकधैव श्रेष्ठस्त्वानाम्भवति ॥१०॥
 तदग्निर्वै प्राणो वागिति पृथिवी वायुर्वै प्राणो वागित्यन्तरिक्षमा-
 दित्यो वै प्राणो वागिति द्यौर्विश्वो वै प्राणो वागिति श्रोत्रं चन्द्रमा
 वै प्राणो वागिति मनः पुमान्वै प्राणो वागिति स्त्री ॥११॥ तस्येदं
 सृष्टं शिथिलम्भुवनमासीदपर्याप्तम् ॥१२॥ स मनोरूपमकुरुत् ।

१ 'आशा वा' का पुनः पाठ है । २ येद् । ३ अपान ।

४ प-१ ५-मादम् । ६-रैपम् । ७-विनोत् । ८-इम् । ९ उपा-१० स्त्र-॥

तेन तत्पर्याप्तोत् । दृढं ह वा अस्येदं सृष्टमशितिलम्भुवनम्पर्या-
प्तम्भवति य एवं वेद ॥१३॥४२२॥

एकादशेऽनुवाके प्रथमः खण्डः ।

सैषा चतुर्धा विहिता^१ श्रीरुद्रीथस्सामाकर्ण्य ज्येष्ठब्राह्मणम् ॥१॥
प्राणो वावोद्वाग्गी स उद्गीथः ॥२॥ प्राणो वावामो वाक् सा
तत्साम ॥३॥ प्राणो वाव को वागृक् तदक्यम् ॥४॥ प्राणो वाव
ज्येष्ठो वाग्ब्राह्मणं तज्ज्येष्ठब्राह्मणम् ॥५॥ उपनिषदम्भो
ब्रूहीति । उक्ता त उपनिषदस्य ते धातव उक्ताः^५ । त्रिधातु विषु
वाव त उपनिषदमब्रूमेति ॥ ६ ॥ एतच्छुक्लं कृष्णं ताम्रं
सामवर्णं इति ह स्माह यदैव शुक्लकृष्णे ताम्रो वर्णोऽभ्यवैति
स वै ते वृद्धे^९ दशमं^{१०} मानुषमिति त्रिधातु । स ऐक्षत क नुँ म
उत्तानाय^{११} शयानायेमा देवता बलिं हरेयुरिति ॥७॥४२३॥

एकादशेऽनुवाके द्वितीयः खण्डः ॥

स पुरुषमेव प्रपदनायाऽवृणीत ॥१॥ तम्पुरस्तात्प्रसञ्जम्प्रा-

१ ऽसाश् । २ विहिता । ३ अग्नीः, गीः । ४ ब्रू । ५-अः । ६-पद् ।

७-दा । ८-वे । ९-त । १० दशः, श् के पूर्व एक अक्षर पढ़ा नहीं
जाता, कदाचित् कटा है । ११ उत्तानाय ॥

विशन् । तस्मा उरुरभवत् । तदुरस उरस्त्वम् ॥२॥ तस्मा अत्रसद्
 एता देवता बलिं हरन्ति ॥३॥ वाचमनुहरन्तीमग्निरस्मै बलिं
 हरति ॥४॥ मनोऽनुहरच्चन्द्रमा अस्मै बलिं हरति ॥५॥ चक्षुरनु-
 हरदादिसोऽस्मै बलिं हरति ॥६॥ श्रोत्रमनुहरादिशोऽस्मै बलिं
 हरन्ति ॥७॥ प्राणमनुहरन्तं वायुरस्मै बलिं हरति ॥८॥ तस्यैते
 निष्वाताः^१ पन्था बलिवाहना^२ इमे प्राणाः । एवं हैतं निष्वाताः
 पन्था बलिवाहनास्सर्वतोऽपियन्ति^३ प्राणा य एवं वेद ॥९॥ सा
 हैषा ब्रह्मासन्दीमारूढा । आ हास्मै ब्रह्मासन्दीं हरन्साधि ह
 ब्रह्मासन्दीं रोहति य एवं वेद ॥१०॥ तदेतद् ब्रह्मयज्ञश्च श्रिया
 परिवृढम् । ब्रह्म ह तु सन् यज्ञसा श्रिया परिवृढो भवति य एवं
 वेद ॥११॥ तस्यैष आदेशो^४ योऽयं दक्षिणोऽक्षन्तः । तस्य
 यच्छुक्लं तदृचां रूपं यत्कृष्णं तत्साम्नां यदेव ताम्रमिव बभ्रुरिव
 तद्यजुषाम् ॥१२॥ य एवायं चक्षुषि पुरुष एष इन्द्र एष प्रजा-
 पातिस्समः पृथिव्या सम आकाशेन समो दिवा समस्सर्वेण
 भूतेन । एष परो दिवो दीप्यते । एष एवेदं सर्वमित्युपासि-
 तव्यम् ॥१३॥१४॥१५॥

एकादशेऽनुवाके तृतीयः खण्डः ।

१ अदिश । २ आ । ३ बलिं वाह । ४ अपय । ५ हरति । ६-श । ७ आ । ८-ऊर ।

सच्चाऽसच्चाऽसच्च सच्च वाक् च मनश्च [मनश्च] वाक् च
 चक्षुश्च श्रोत्रं च श्रोत्रं च चक्षुश्च श्रद्धा च तपश्च तपश्च श्रद्धा च
 तानि षोडश ॥१॥ षोडशकलम्ब्रह्म । स य एवमेतत् षोडशकलम्ब्रह्म
 वेद तमेवैतत् षोडशकलम्ब्रह्माऽप्येति ॥२॥ वेदो ब्रह्म तस्य
 सत्यमायतनं शमः प्रतिष्ठा दमश्च ॥३॥ तद्यथा श्वः प्रैष्यन्
 पापात्कर्मणो जुगुप्सेतैवमेवाऽहरहः पापात्कर्मणो जुगुप्सेताऽऽ
 कालात् ॥४॥ अथैषां दशपदी विराट् ॥५॥ दश पुरुषे स्वर्ग-
 नरकाणि । तान्येनं स्वर्गं गतानि स्वर्गं गमयन्ति नरकं गतानि
 नरकं गमयन्ति ॥६॥४२५॥

एकादशेऽनुवाके चतुर्थः खण्डः ।

मनो नरको वाङ् नरकः प्राणो नरकश्च चक्षुर्नरकश्च श्रोत्रं
 नरकस्त्वङ् नरको हस्तौ नरको गुदं नरकश्च शिश्रुं नरकः पादौ नरकः
 ॥१॥ मनसा परीक्ष्याणि वेदेति वेद ॥२॥ वाचा रसान्वेदेति वेद
 ॥३॥ प्राणेन गन्धान्वेदेति वेद ॥४॥ चक्षुषा रूपाणि वेदेति
 वेद ॥५॥ श्रोत्रेण शब्दान्वेदेति वेद ॥६॥ त्वचा संस्पर्शान्वे-
 देति वेद ॥७॥ हस्ताभ्यां कर्माणि वेदेति वेद ॥८॥ उदरेणा-

ऽशनयां वेदेति वेद ॥६॥ शिश्नेन रामान्वेदेति वेद ॥१०॥
 पादाभ्यामध्वनो वेदेति वेद ॥११॥ प्लक्षस्य प्रासवणस्य
 प्रादेशमात्रादुदक् तत्पृथिव्यै मध्यम् । अथ यत्रैते सप्तर्षयस्तदिवो
 मध्यम् ॥१२॥ अथ यत्रैत ऊषास्तत्पृथिव्यै हृदयम् । अथ यदे-
 तत्कृष्णं चन्द्रमासि तदिवो हृदयम् ॥१३॥ स य एवमेते द्यावा-
 पृथिव्योर्मध्ये च हृदये च वेद ना^२कामो^३ऽस्माहोकात्प्रैति ॥१४॥
 नमोऽतिसामायै^४स्तुरेताय^५ धृतराष्ट्राय पार्थुश्रवसाय^६ ये च प्राणं
 रक्षन्ति ते मा रक्षन्तु । स्वास्ति । कर्मेति गार्हपत्यश्च^७म् इत्याह-
 वनीयोदम इत्यन्वाहार्यपचनः ॥१५॥४॥२६॥

एकादशोऽनुवाके पञ्चमः खण्डः । एकादशोऽनुवाकस्तमाप्तः ॥

कस्सविता । का सावित्री । अग्निरेव सविता । पृथिवी
 सावित्री ॥१॥ स यत्राऽग्निस्तत्पृथिवी यत्र वा पृथिवी तदाग्निः ।
 ते द्वे योनी । तदेकम्मिथुनम् ॥२॥ कस्सविता । का सावित्री ।
 वरुण एव सविता । आपस्सावित्री ॥३॥ स यत्र वरुणस्तदापो
 यत्र वा^१ऽपस्तद्वरुणः । ते द्वेयोनी । [तदेकम्मिथुनम्] ॥४॥

२-वद् । ३-कामो । ४-सामय-सामाय । ५ एतुर् ।
 ६ पार्श्व-से ठीक किया हुआ है । ७-मद् ॥

कस्सविता । का सावित्री । वायुरेव सविता । आकाशस्सावित्री
 ॥५॥ स यत्र वायुस्तदाकाशो यत्र वाऽऽकाशस्तद्वायुः । ते द्वे^२
 योनी । तदेकस्मिन्धुनम् ॥६॥ कस्सविता । का सावित्री । यज्ञ एव
 सविता । छन्दांसि सावित्री ॥७॥ स यत्र यज्ञस्तच्छन्दांसि यत्र
 वा छन्दांसि तद्यज्ञः । ते द्वे^२ योनी । तदेकस्मिन्धुनम् ॥८॥
 कस्सविता । का सावित्री । स्तनयित्नुरेव सविता । विद्युत् सावित्री
 ॥९॥ स यत्र स्तनयित्नुस्तद्विद्युद्यत्र वा विद्युत् तत्स्तनयित्नुः । ते
 द्वे^२ योनी । तदेकस्मिन्धुनम् ॥१०॥ कस्सविता । का सावित्री ।
 आदित्य एव सविता । द्यौस्सावित्री ॥११॥ स यत्राऽऽदित्यस्तद्यौर्यत्र
 वा द्यौस्तदादित्यः । ते द्वे^२ योनी । तदेकस्मिन्धुनम् ॥१२॥
 कस्सविता । का सावित्री । चन्द्र एव सविता । नक्षत्राणि सावित्री
 ॥१३॥ स यत्र चन्द्रस्तन्नक्षत्राणि यत्र वा नक्षत्राणि तच्चन्द्रः ।
 ते द्वे^२ योनी । तदेकस्मिन्धुनम् ॥१४॥ कस्सविता । का सावित्री ।
 मन एव सविता । वाक् सावित्री ॥१५॥ स यत्र मनस्तद्वाग्यत्र
 [वा] वाक् तन्मनः । ते द्वे^२ योनी । तदेकस्मिन्धुनम् ॥१६॥ कस्स-
 विता । का सावित्री । पुरुष [एव] सविता । स्त्री सावित्री । स
 यत्र पुरुषस्तत् स्त्री यत्र वा स्त्री तत्पुरुषः । ते द्वे योनी । तदेकस्मि-
 न्धुनम् ॥१७॥ ४१२७॥

द्वादशेऽनुवाके प्रथमः खण्डः ।

तस्या एष प्रथमः पादो भूस्तत्सवितुर्वरेण्यमिति । अग्निर्वै
 वरेण्यम् । आपो वै वरेण्यम् । चन्द्रमा वै वरेण्यम् ॥१॥ तस्या
 एष द्वितीयः पादो भर्गमयो भुवो भर्गो देवस्य धीमहीति । अग्निर्वै
 भर्गः । आदित्यो वै भर्गः । चन्द्रमा वै भर्गः ॥२॥ तस्या एष तृतीयः
 पादस्स्वर्धियो यो नः प्रचोदयादिति । यज्ञो वै प्रचोदयाति । स्त्री
 च वै पुरुषश्च^१ प्रजनयतः ॥३॥ भूर्भुवस्तत्सवितुर्वरेण्यम्भर्गो देवस्य
 धीमहीति । अग्निर्वै भर्गः । आदित्यो वै भर्गः । चन्द्रमा वै भर्गः
 ॥४॥ स्वर्धियो यो नः प्रचोदयादिति । यज्ञो वै प्रचोदयाति । स्त्री
 च वै पुरुषश्च प्रजनयतः ॥५॥ भूर्भुवस्स्वस्तत् सवितुर्वरेण्यम्भर्गो
 देवस्य धीमहि धियो यो नः प्रचोदयादित^२ । यो वा एतां सावित्री-
 मेवं वेदाऽप पुनर्मृत्युं तरति सावित्र्या एव सलोकतां जयति
 सावित्र्या एव सलोकतां जयति ॥६॥४॥२८॥

द्वादशेऽनुवाके द्वितीयः खण्डः । द्वादशेऽनुवाकस्समाप्तः ।

इत्युपनिषद्ब्राह्मणं समाप्तम् ॥

१-सँ । २ 'यज्ञो वै प्रचोदयाति । स्त्री च वै पुरुषश्च प्रजनयतः'

अधिक करो ॥

१-ऋषि-नामों की सूची ।

वं० से वंश का अभिप्राय है ।

- अगस्त्य, ४।१५।१॥१६।१॥ वं० ।
 अतिसाम एतुरेत, ४।२६।१५॥
 अनुवक्ता सात्यकीर्त, १।५।४॥
 अभयद आसमात्य, ४।८।७॥
 अमिप्रतारी, ३।१।२१॥२।२, ३, १३॥
 अभिप्रतारी काक्षसेनि १।५।६।१॥३।१।२१॥
 अयास्य, २।८।७, ८॥११।८॥
 अयास्य आङ्गिरस, २।७।२, ६॥८।३॥
 अषाढ उत्तर पाराशर्य ३।४।१।१॥ वं०
 आङ्गिरस, २।२।६॥ देखो अयास्य आ० ।
 आजकेशी, १।६।३॥
 आजद्विश, देखो बम्ब आ० ।
 आट्णार, देखो पार आ० ।
 आत्रेय, देखो दत्त कात्यायनि आ०, शङ्ग शाठ्यायनि आ० ।
 आरुणि, १।४।२।१॥
 आरुण्य, २।५।१॥
 आर्त्ताकायण, देखो गळूनस आ० ।
 आल्लुकेय, देखो हत्स्वाशय आ० ।
 आसमात्य, देखो अभयद आ० ।
 इन्द्रोत दैवाप शौनक, ३।४।०।१॥ वं० ।
 इष इयावाश्वि, ४।१६।१॥ वं०।
 उच्चैश्चक्षुः कौपयेय, ३।२।१।१, २, ३॥

दखर, देखो आषाढ उ० पाराशर्य ।

उमा हैमवती, ४२०।१॥

वस्तुक्य (?) जानश्रुतेय, १।६।३॥

उशनः काव्य, २।७२, ६॥

ऋष्यशृङ्ग काश्यप, ३।४०।१॥ वं० ।

षतुरेत (?), देखो अतिसाम प० ।

षेद्वक्क, देखो भगेरथ प० ।

षेद्वक्क वाष्पा, १।५।४॥

षेतरैय, देखो महिदास ।

षेन्द्रोति, देखो दृति प० शौनक ।

फंस वारकी, ३।४।१॥ वं० ।

फंस वारक्य, ३।४।१॥ वं० । ४।१।३१॥ वं० ।

कक्षीबन्त, २।५।११॥

कश्यप, ४।३।१॥

काक्षलेनि, देखो अभिप्रतारी का० ।

काशङ्गिय, ३।१०।२॥ देखो जनश्रुत का० । नगरी जानश्रुतेय का० ।

सायक जानश्रुतेय का० ।

कात्यायनि, देखो दत्त का० आत्रेय ।

कापेय, ३।२।२॥ देखो शौनक का० ।

कारीरादि, २।४।४॥

काव्य, देखो उशनः का० ।

काश्यप, ३।४०।२॥ वं० । देखो ऋष्यशृङ्ग का० । देवतरः श्याबलाबन
का० । श्रुष वाहेय का० ।

कुवेर वारक्य, ३।४।१॥ वं० ।

कुरु, (एकव०) १।५।१।(बहुव०) १।३।१॥ देखो कौरव ।

कुरुपञ्चालाः, ३।७।६।७।३।६, ६।४।२।७।३॥

कृष्णदत्त लौहित्य, ३।४।१॥ वं० । देखो त्रिवेद क० लौहित्य ।

कृष्णधृति सात्यकि, ३४२।१॥ वं० ।

कृष्णरात लौहित्य, ३४२।१॥ वं० । देखो लिखेद क० लौहित्य ।

केशी द.भ्यं, ३२६।१,२॥

कौपयेय, देखो उच्चैदश्रवः ।

क्रातुजातेय, देखो राम क्रा० वैयाघ्रपद्य ।

क्षेमि, देखो सुदक्षिण क्षे० ।

गालूनस आर्त्ताकायणा, १।३८।४॥

गन्धर्वाप्सरसः, १।४१।१॥५।१०, ११॥३।१॥

गुप्त, देखो वैपश्चित दार्ढजयन्ति गु० लौहित्य ।

गोबल चाष्णं, १।६।१॥

गोश्रु (जाबाल), ३।७।७॥

गौतम (आरुणि) १।४२।१॥

गौष्ठुक्ति, ४।१६।१॥ वं० ।

क्षैकितानेय, १।३७।७॥२।५।२॥ (बहुव०) १।४१।१॥

देखो ब्रह्मदत्त क्षे० । वासिष्ठ क्षे० ।

क्षैत्ररथि, देखो सत्याधिवाक क्षे० ।

जनश्रुत काण्डविय, ३।४०।२॥ वं० ।

जनश्रुत वारक्य, ३।४१।१॥ वं० । ४।१७।१॥ वं० ।

जमदग्नि, ३।३१।१॥४।३।१॥

जयक लौहित्य, ३।४२।१॥ वं० ।

जयन्त, देखो यशस्वी ज० लौहित्य ।

जयन्त पाराशर्य, ३।४१।१॥ वं० ।

जयन्त वारक्य, ३।४१।१॥ वं० । (इस नाम के दो व्यक्ति) ४।१७।१॥ वं० ।

जानश्रुत, देखो नगरी जा० काण्डविय ।

जानश्रुतेय, देखो उलुक्य जा० । सायक जा० काण्डविय ।

जाबाल, ३।६।६॥ (द्विव०) ३।७।२, ३, ५, ७, ८॥ देखो गोश्रु शुक ।

जैबलि, १।३८४॥

ज्वालायन, ४।२६।१॥ वं० ।

जसदस्यु, २।५।११॥

त्रिवेद कृष्णरात लौहित्य, ३।४२।१॥ वं० ।

दत्त कात्यायनि आत्रेय, ३।४१।१॥ वं० ।

दत्तजयन्त लौहित्य, ३।४२।१॥ वं० ।

दार्ढजयन्ति, देखो वैपश्चित दा० गुप्त लौहित्य, वैपश्चित दा०
दृढजयन्त लौहित्य ।

दारभ्य, देखो केशी दा० ।

दाल्भ्य (ब्रह्मदत्त चैकितानेय), १।३८।१॥५६।३॥

दाल्भ्य, देखो वन दा० ।

दृढजयन्त, देखो विपश्चित दा० लौहित्य, वैपश्चित दार्ढजयन्त द०
लौहित्य ।

इति ऐन्द्रोति शौनक, ३।४०।२॥ वं० ।

देवतरस् इयावसायन काश्यप, ३।४०।२॥ वं० ।

देवाप, देखो इन्द्रोत दै० शौनक ।

धृतराष्ट्र, ४।२६।१५॥

नगरी जानश्रुतेय काण्डविय, ३।४०।१॥ वं० ।

नाक, ३।१३।५॥

पतङ्ग प्राजापत्य, ३।३०।३॥

परमेष्ठी प्राजापत्य, ३।४०।२॥ वं० ।

पल्लिगुप्त लौहित्य, ३।४०।१॥ वं० ।

पाराशर्य, देखो अषाढ उत्तर पा० । जयन्त पा० । वैपश्चित शकुनि-
मित्र पा० । सुदत्त पा० ।

पार्थुश्रवस, ४।२६।१५॥

पार्थु शौनन, २।४।८॥

पुलुष प्राचीनयोग्य, ३४०।२॥ वं०।

पृथु वैन्य, १।२०।६॥३४।६॥४५।१॥

पौलुषि, देखो सत्ययज्ञ पौ० प्राचीनयोग्य ।

पौलुषित, देखो सत्ययज्ञ पौ० ।

प्रतीदर्श, ४।८।७॥

प्राचीनयोग्य, १।३६।१॥ देखो पुलुष प्रा० । सत्ययज्ञ पौलुषि प्रा० ।

सोमशुष्म सात्ययज्ञि प्रा० ।

प्राचीनशाख (बहुव०), ३।१०।१॥

प्राचीनशक्ति, ३।७।२,३,५,७॥१०।१॥

प्राजापत्य, देखो परमेष्ठी प्रा० ।

प्रातृद भास्व, ३।३१।४॥

प्रास्त्रवण, देखो लृत्त प्रा० ।

प्रोष्ठपाद वारक्य, ३।४१।१॥ वं० ।

लृत्त प्रास्त्रवण, ४।२६।१२॥

बक दालभ्य, १।६।३॥४।७।८॥

बम्ब आजह्विष, २।७।२,६॥

बाभ्रव्य, देखो शङ्ख बा० ।

ब्रह्मदत्त चैकितानेय, १।८।१॥५६।१॥

भगेरथ पेदवाक, ४।६।१,२॥

भास्व, देखो प्रातृद भा० ।

भास्त्रुबिन (बहुव०), २।४।७॥

मनु, ३।१५।२॥

महिदास पेतरेय, ४।२।१॥

मातरिश्वद, ४।२०।८॥

मानव, देखो शर्यात प्रा० ।

मित्रभूति जौदित्य, ३।४२।१॥ वं०

मुञ्ज सामधवस, ३११२॥

यशस्वी जयन्त लौहित्य, ३१४२१॥ वं० ।

राम क्रातुजातेय वैयाघ्रपद्य, ३१४०१२॥ वं० । ४१२६१॥ वं० ।

रौहिण, ११२६७, १०॥

लौहित्य, देखो कृष्णदत्त लौ०, कृष्णरात लौ०, जयक लौ०, त्रिवेद
कृष्णरात लौ०, दत्त जयन्त लौ०, पल्लिगुप्त लौ०, मित्रभूति
लौ०, यशस्वी जयन्त लौ०, विपश्चित् दृढजयन्त लौ०,
वैपश्चित् दार्ढजयन्ति गुप्त लौ०, वैपश्चित् दार्ढजयन्ति
दृढजयन्त लौ०, श्यामजयन्त लौ०, श्यामसुजयन्त लौ०,
सत्यश्रवस् लौ० ।

वसिष्ठ, ३१२१३॥१५१॥१८६, ७॥ तुल० वासिष्ठ ।

बारकि, देखो कंस वा० ।

बारक्य, देखो कंस वा०, कुबेर वा०, जनश्रुत वा०, जयन्त वा०,
प्रोष्ठपाद वा० ।

वाष्पा, देखो पेक्ष्वाक वा०, गोबल वा० ।

वासिष्ठ चैकितानेय, ११४२१॥

वाहेय, देखो श्रुष वा० काश्यप ।

विपश्चित् दृढजयन्त लौहित्य, ३१४२१॥ वं० ।

विपश्चित् शकुनिमित्र पाराशर्य, ३१४११॥ वं० ।

विश्वामित्र, ३११७॥१५१॥ (बहुव०) ३१५१॥ तुल० वैश्वामित्र ।

वैकुण्ठ (इन्द्र), ४१५१॥१०१०॥

वैन्य, ११४५१॥ देखो पृथु वै० ।

वैपश्चित् दार्ढजयन्ति गुप्त लौहित्य, ३१४२१॥ वं० ।

वैपश्चित् दार्ढजयन्ति दृढजन्त लौहित्य, ३१४२१॥ वं० ।

वैमुथ (इन्द्र), ४१२०१०॥

वैयाघ्रपद्य, देखो राम क्रातुजातेय वै० ।

शकुनिमित्र, देखो विपश्चित् श० पाराशर्य ।

शङ्ख बाभ्रव्य, ३४१।१॥ वं० । ४१७।१॥ वं० ।

शङ्ख शाठ्यायनि आत्रेय, ३४०।१॥ वं० ।

शर्व, ४१०।१॥

शर्यात मानव, २।७।१॥ ३, ५॥

शाठ्यायनि, १।६।२।३०।१॥ २।२।८।४।३।६।१०।३।१।३।६।२।८।५॥

४।१।६।१॥ वं० । १।७।१॥ वं० । देखो शङ्ख शा० आत्रेय ।

शाण्डिल्य, देखो सुयज्ञ शा० ।

शालावत्य, १।३।८।४॥

शुक (जाबल), ३।७।७॥

शैलन (बहुव०), १।२।३।२।४।६॥ देखो पार्श्व शै०, सुचित् शै० ।

शौनक, १।५।६।२॥ देखो इन्द्रोत द्वैवाप शौ०, इति इन्द्रोति शौ० ।

शौनक कापेय, ३।१।२॥

श्यामजयन्त लौहित्य (इस नाम के दो व्यक्ति), ३।४।२।१॥ वं० ।

श्यामसुजयन्त लौहित्य, ३।४।२।१॥ वं० ।

श्यावसायन, देखी देवतरस् श्या० काश्यप ।

श्यावाश्वि, देखो इश श्या० ।

श्रुष वाहेय काश्यप, ३।४०।१॥ वं० ।

श्वजनि (एक वैश्य), ३।५।२॥

सत्ययज्ञ पौलुषित, १।३।६।१॥

सत्ययज्ञ पौलुषि प्राचीनयोग्य, ३।४०।१॥ वं० ।

सत्यश्रवस् लौहित्य, ३।४।२।१॥ वं० ।

सत्याधिवाक चैत्ररथि, १।३।६।१॥

सात्यकि, देखो कृष्णधृति सा० ।

सात्यकीर्त (बहुव०), ३।३।२।१॥ देखो अनुवक्ता सा० ।

सात्ययज्ञि (बहुव०), २।४।५॥ देखो सोमशुष्म सा० प्राचीनयोग्य ।

सामश्रवस, देखो मुञ्ज सा० ।

सायक ज्ञानश्रुतेय काण्डविय, ३४०१२॥ वं० ।

सुचित्त शैलन, ११४४॥

सुदक्षिण, ३७८॥८॥६॥ (देखो सुदक्षिण त्रैमि)

सुदक्षिण त्रैमि, ३६३॥७१, ४५, ६॥ (देखो सुदक्षिण) ।

सुदत्त पाराशर्य, ३४११॥ वं० ४१७१॥ वं० ।

सुयज्ञ शाण्डिल्य, ४१७१॥

सोमवृहस्पति (द्विव०), १५८॥६॥

सोमशुष्म सात्ययज्ञि प्राचीनयोग्य, ३४०१२॥ वं० ।

हृत्स्वाशय आल्लुकेय, ३४०१२॥ वं० ।

हैमवती, देखो उमा है० ।

२-निर्वचनादि सूची ।

अक्षर, १२४१॥४३॥८॥१२४१॥

४३॥८॥

अन्तरिक्ष, १२०४॥

अयास्य, २८८॥७११॥८॥

अकर्म, ४२३४॥

असु, १४०१॥

असुर, ३३५१॥३॥

आङ्गिरस, २१११॥६॥

आदि, ११११॥७११॥८॥

आदित्य, ४२१॥६॥

आवर्त्त, ३३३४॥

उरस, ४२४१॥

ऋच, ११११॥६॥

गायत्र, ३३३४॥

देवश्रुत, ११४१॥३॥

पतङ्ग, ३३५१॥२॥

पश्यत, १५६१॥६॥

प्रतिहार, ११११॥६॥

प्रसाम, प्रसामि, ११५१॥४॥

प्रस्ताव, ११११॥६॥

वृहस्पति, २२१५॥

भीमल, १५७१॥

मधुपुत्र, १५५१॥१॥

महीया, १४८१॥५॥

रुद्र, ४२१॥६॥

रोदसी, १३२१॥४॥

वसु, ४२१॥३॥

वैश्वामित्र, ३३३४॥

शतसनि, १५०४॥

सजात, १४८३॥

समुद्र, १२५४॥

सामन्, १३३७॥ ४०६॥ ४८७॥ ५१२॥ ४१३२॥ ११२५॥ १५३५॥

५६२॥ ४२३३॥

सिन्धु, १२६२॥

सुवर्ग, ११४४॥

हरि, १४४५॥

३-(क) ऋचादिसूची ।

अदितिर्द्यौरदितिः, १४१४॥ ऋ० १८६१०॥

अपश्यं गोपामनिपद्यमानाम्, ३३७१॥ ऋ० ११६४३१॥

आत्मा देवानामुत मर्त्यानाम्, ३२४॥ तु० छां० उ० ४३७॥

आयुर्माता मतिः पिता, ४१७॥

इन्द्रमुक्थमृचम्, १४५१॥

इमामेषामृथिवीम्, १३४७॥ अथ० १०८३६॥

उतैषां ज्येष्ठः, ३१०१२॥ अथ० १०८२८॥

उपास्मै गायत, ३३८६, ८॥ ऋ० ६१११॥

ऋषय णते मन्त्रकृतः, १४५२॥

चत्वारि वाक् परिमिता, १७३॥ ४०१॥ ऋ० ११६४४५॥

तत्सवितुर्वरेण्यम्, ४२८१॥ ऋ० ३६२१०॥

त्रायुषं कश्यपस्य, ४३१॥ तु० छां०, अ० ५१२८७॥

नवो नवो भवसि, ३२७११॥ तु० छां०, ऋ० १०८४१६॥

पतङ्गमक्तम्, ३३५१॥ ऋ० १०१७७१॥

पतङ्गो वाचस्मनसा, ३३६२॥ ऋ० १०१७७२॥

मयीदं मन्ये भुवनादि, ३१७६॥

महात्मनश्चतुरो देवः, ३२२॥ तु० छां० उ० ४३६॥

(१०)

यद्द्यावा इन्द्र ते शतम्, १।३।१॥ ऋ० ८।७।५॥
यस्सतरदिमर्द्धमः, १।२।७॥ ऋ० २।१।१२॥
येऽग्नयः पुरीष्याः, ४।३।३॥ य० १।८।६॥
येभिर्वीत इषितः, १।३।४॥ अथ० १०।८।३५॥
रूपं-रूपम्प्रतिरूपः, १।४।४।१॥ ऋ० ६।४।७।१८॥
रूपं-रूपम्मघवा, १।४।४।६॥ ऋ० ३।५।३।८॥
स नो मयोभूः, ४।३।२॥
स यदा वै म्रियते, १।४।७॥
स्त्री स्मैवाऽग्रे, १।५।६।५॥
स्थूणां दिवस्तम्मनीम, १।१०।६॥

(ख)

अभिजिदस्यभिजय्यासम्, ३।२०।१०॥
अमोऽहमस्मि, (दीर्घपाठ), १।५।४।६॥ (संक्षिप्त), ५।७।४॥
अरण्यस्य वत्सोऽसि, ४।४।१॥
उपावर्त्तध्वम्, ३।१६।१॥३।४।२॥
गुहासि देवोऽसि, ३।२०।१॥
दिशश्वा श्रोत्रम्, १।२।२।६॥
देवेन संवित्रा, ३।१८।३।६॥
पुरुषः प्रजापतिः, १।४।६।३।४॥
प्राणा३ प्राणा३ प्राणा३, २।२।७॥
महामह्या समघत्त, ३।४।५॥
यत्पुरस्ताद्वासीन्द्रः, ३।२।१।१॥
विभूः पुरस्तात्सम्पत्, ३।२।७।१॥
व्युषि सविता भवसि, ४।५।१॥
श्वेताश्वो दर्शतो, ४।१।१॥
सत्यस्य पन्था, ३।२।७।१०॥
सोमः पवते, ३।१६।१॥३।४।२॥